सद्गुरवे नमः

कबीर महिला उद्धार

रचयिता

साधु-शरणदास

कबीरपंथी

सद्गुरवे नमः

सद्ग्रंथ

कबीर महिला उद्धार

चार सम्बादों में

"पंडित देखहु हृदय विचारी, को पुरुषा को नारी ?" (बी०)

साखी-"बीज बृक्ष दुइ वस्तु हैं, मिटत बोध ते नाहिं।
देह बासना बीज है, बोध भये मिटि जाहिं ॥" (भवयान)

लेखक-

साधु शरण दास
कबीर पंथी
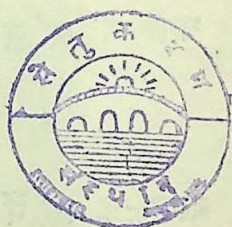
प्रकाशक-

विद्यावती देवी, कबीर पंथी

मु० तरावाँ, जि० बाराबंकी।

थम बार १०००
म्वत २०३२ वि०
[illegible] १९७५ ई०

मूल्य रु० ६.३६०
डाक खर्च अलग

उपकार स्मृति

सवैया

श्री गुरुदेव 'कबीर' मेरे प्रभु आपी क ज्ञान व ध्यान हितावै ।
ताते नमों प्रभु देव नमों गुरु आप के आगे न और सोहावै ॥
हैं गुरु पारखि देव 'बिशाल' तिन्हीं मोहिं बोध कुबंध नशावै ।
ऐसी सुपारख दिब्य दया मिलि बन्दत 'शरणै' शीश नवावै ॥

श्री गुरु बोध प्रताप से मैं अब देविन को सदपंथ दिखाऊँ ।
आपी की दाया विवेक लखाय के नारिन के उर दोष प्रखाऊँ ॥
त्रय दुख से बिललात अबोधिनि पारख ऐन बताय थिराऊँ ।
धारि अशीश सु मोक्ष सिखावन अंकित 'शरणै' ग्रंथ पुराऊँ ॥

अर्पण

दोहा—हे प्रभु मैं तो अबुध था, जो कुछ ज्ञान सो तोर ।
तेरो तव पद अर्पता, नमत 'शरण' कर जोर ॥

सद्गुरु विशालदेव
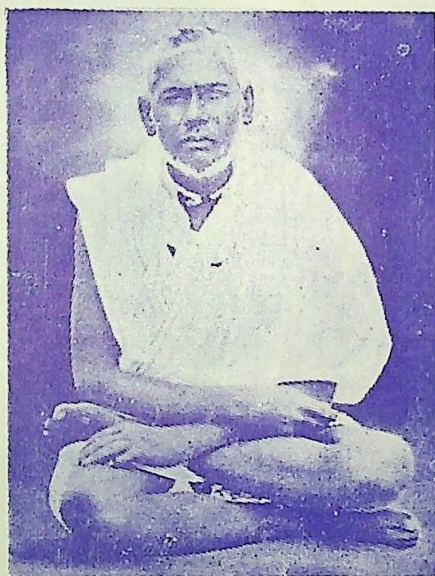
सत्य क्षमा निष्कामता, निर्छलता निर्मान।
नित्य हितैषी मोह तजि, सद्विवेक सुखखान॥

धन्यवाद

दोहा – तन पवित्र सेवा किये, धन पवित्र करि दान।
मन पवित्र गुरु भक्ति कर, होत त्रिविधि कल्यान ॥ (सतोपदेश)
तन मन धन अर्पण करत, मोक्ष धारणा हेत।
जीवन ताको सफल है, औरन यम दुख देत ॥

ऐसे पवित्र आदेशों को श्रवण-मनन द्वारा प्रत्यक्ष किये हुए सुबुद्धि-शाली धर्मध्वजी पारखबोध भावी भक्ति परायण मुमुक्षा—संतराम की माता 'महन्तिन' तथा रामअधार के पुत्र 'सुन्दरलाल वर्मा' की सुपत्नी औदार्यमति सुशील मुमुक्षा— 'विद्यावती देवी' और श्रीकृष्ण के पुत्र 'भागीरथ वर्मा' की सुपत्नी औदार्य मति सुशील मुमुक्षा– 'सावित्री देवी' उपरोक्त तीनों धर्मेश देवियाँ ग्राम-तरावाँ की निवासनी अपनी पवित्र उपार्जित द्रव्य यथाशक्ति सदा संत सेवा में अर्पण करती रहती हैं किन्तु आज प्रबल औदार्यता सहित अधिकाधिक स्वपवित्र द्रव्य निष्काम भाव स्वतंत्र हृदय से सहर्ष निवेदन सहित इस ग्रंथ— 'कबीर-महिला उद्धार' के प्रथम प्रकाशन हेत अर्पण कर सुयस सहित 'धन्यवाद' को प्राप्त कर रही हैं एवं मोक्ष पथ विकासक तिन धर्मध्वजी मुमुक्षा देवियों को कोटिसः धन्यवाद है। श्री सद्गुरु कबीर साहेब से अब तक सभी पारख पथारूढ़ महात्माओं के तरफ से यही शुभ आशीर्वाद है कि ऐसी धर्मध्वजी मुमुक्षा देवियाँ एकरस धर्मेश सुबुद्धि धारणावान बनी रहें और वे निर्विघ्न मोक्ष मार्ग तय करने में शीघ्र साफल्यता को प्राप्त हों।

सादर दया भाव।

दो शब्द

इस विकट जगत आरण्य मध्य एक नगर निवासी-तन-धन-जन सम्पन्न मदान्ध युवक को यथा संयोग एकान्त निवासी परम वैराग्य-वान स्वात्मस्थित पारखी संत से निर्जन आरण्य मध्य भेंट हो गई। दण्ड-प्रणाम पश्चात् सत्संग छिड़ गया, उसी सत्संग मध्य उन पारखी विरक्त संत के विमल बचनामृत उस युवक के मदजन्य मनोविकार नाश होने में रामबाण हो गये। वह युवक कुछ ही काल के सत्संग से नाना दुर्गणों को छेदन कर सनम्र भक्ति सहित ब्रह्मचारी भेष और सद्गुण धारणा में परायण होकर काग से हंस हो गया। अब उस सत्संगी युवक को अन्य सत्संगी भक्त औ संत जन 'ब्रह्मचारी गुरुबोधदास' नाम रख दिये।

वह पारखबोध सम्पन्न ब्रह्मचारी-'गुरु बोधदास' अपनी माता और बहेन, जो कि पढ़ी-लिखी कुलीन मर्यादा सम्पन्न सुशील थीं, तिनको भी अपने पूज्यवर सद्गुरु श्री बोधकदेवी के शरण में लाकर सुमार्ग--'पारखबोध' दिलाने हेत सत्संग में परायण किए। अब उन सद्गुरुदेव के बचनामृत द्वारा माता-भानुमतीदेवी और बहेन-सुशीला-देवी को गृह सुधर्म तथा यथार्थ चैतन्य इष्ट की भक्ति, स्वात्मज्ञान एवं सर्वाङ्ग सद्बर्ताव युक्त पारख बोध कुछ ही काल के सत्संग से परिपुष्ट हो गया, तिन्ही के साथ-साथ अन्य महिलाओं को भी उन्हीं सदगुरुदेवके द्वारा सुधर्म भक्ति सहित यथार्थ पारखबोध सविधि हृदयांगम हो गया, अब तो वे सभी महिलायें महान सुखी हो गईं।

उपरोक्त सूचित सुद्धिशाली महिलाओं को प्राप्त हुई 'पारख ज्ञान-कथा, यहाँ सविधि ग्रन्थ रूप में केंद्रित कर दी गयी है, सो केवल कल्पित मात्र नहीं है। यह बोधव्य मय सुबुद्धि प्रकाशक कथा-'पारख बोध' श्री सद्गुरु कबीर साहेब का ही प्रथम अमरदेन है। वह अमरदेन हम ऐसे दारिद्रों को अखण्ड धनेश बना दिया। तदानुसार महिलाओं के गृह कर्त्तव्य सुधार और सद्भक्ति पारख ज्ञान का सविधि समझौता महिलाओं के हेत अंकित है, सो सर्व श्री कबीर साहेब का ही पारख बोध होने से सम्पूर्ण लेख समूह ग्रंथ-'कबीर महिला उद्धार' नाम से सम्बोधित है। यह ग्रंथ चार सम्वादों में सम्पूर्ण स्थापित है।

पहिले सम्बाद में ब्रह्मचारी गुरुबोधदास की माता- 'भानुमती-देवी'के संकेत सः गुरुआदेश है। दूसरे सम्बाद में भानुमती देवी की बेटी—'सुशीला देवी' के संकेत सः नाना भाँति के गुरु आदेश भरे हैं। तीसरे सम्बाद में १ पतिहीन, २ पुत्रहीन, ३ कुपति अभावी ऐसी त्रय देवियों के संकेत सः भाँति भाँति के सुधर्ममय गृह बर्ताव, साधन, निर्णय, ज्ञानमय गुरुआदेश अंकित हैं। अब चौथे सम्बाद मध्य 'गागर में सागर न्याय, जड़-चेतन का भिन्न-भिन्न सरूप तथा स्वस्थिति निर्णय समूह पारखबोध दर्शाया गया है। इन चार सम्वादों में गृहसुधर्म बर्ताव, सद्भक्ति, पारख सिद्धान्त निर्णय, स्वस्थिति ज्ञान के विविधि सरल समझौता स प्रमाण अनेक योग्य उदाहरणों से गद्य में तथा चौपाई छन्द सवैया लावनी भजन आदि पद्यों से वर्णन हुआ है। इस ग्रंथ की पारख ज्ञान प्रकाशमयी कथाओं को सर्व मुमुक्षादेवियाँ पढ़-सुन-गुन के अपना-अपना मनोचरित्र तथा कर्त्तव्य रहस्य सुधारकर अमूल्य मानव जीवन सफल कर सकती हैं। अब सभी देवियाँ अपने

आद्य पारख स्वरूपज्ञान को अवश्य हृदयांगम करलें, तभी मानवदेह का पोषण करना सार्थक है। कहा है— चौपाई—

'मानुष देह जो होय विचार। तो हित पोषण उचित अचरा॥
जेहि विधि कारज जीव को होई। लाज मिटाय करै दृढ़ सोई॥
मानुष जन्म दुर्लभ संसारा। जाते अवागवन निवारा॥'

(पं० मा०)

"बिन सत्संग ग्रंथ लव लाई। पाप मैल दिल कबहुँ न जाई॥"

साखी-"हंस न नारी पुरुष है, ये सब काल को फन्द।
गाँस फाँस सब मेटि के, साहेब शरणानन्द॥"

(पं० टकसार)

अन्यथा-"भक्ति बिना नर होइहौ कैसा। बाट माझँ गोबरौरा जैसा॥

साखी- अर्ब खर्ब ले द्रव्य है, उदय अस्त लों राज।
भक्ति महातम ना तुले, ई सब कौने काज॥" (बी०)
'बड़े घरन की सुन्दरीं, संतन देखि लजायँ।
तेहि कारण कुतिया भईं, घर-घर दण्डा खायँ॥'
'जो तू चाहे मूझको, छाँड़ सकल की आस।
मुझ ही ऐसा होय रहो, सब सुख तेरे पास॥' (बी०)

———

ग्रन्थ भाव आदर्श

सोरठा—कबीर महिला उद्धार, ग्रंथ पढ़ै जे नारि दृढ़ ।
उर धारे जग पार, तब ही यह तन सुफल ह्वै ॥

छन्द—यह ज्ञान कबीर बतावत है यह नारिन मोक्ष सुझावत है ।
यह नाम के सम गुण गावत है यह लोह से सोन बनावत है ॥
यह करकस बुद्धि मिटावत है शुचि देविन चाल सिखावत है ।
यह तन मन शुद्ध करावत है सद्भक्ति ज्ञान दृढ़ लावत है ॥१॥

यह उर के नेत्र बनावत है सब जस का तसहिं दिखावत है ।
यह नर्क से स्वर्ग दिलावत है चौरासिक लैन मिटावत है ॥
यह बंध अबंध प्रखावत है जड़ चेतन भेद बतावत है ।
यह तीनों ताप मिटावत है थिर बोध 'शरण' अपनावत है ॥२॥

दोहा—जगत जाल भव दुक्ख से, छुटन चहत जो कोय ।
सो सुजान इस ग्रंथ को, पढ़ि सुनि गहि दुख खोय ॥

सद्गुरवे नमः

कबीर महिला उद्धार की सूची

विषय पृष्ठ

दूसरा सम्बाद

ब्रह्मचारी गुरु बोधदास की बहिन-सुशीलादेवी प्रति भक्ति आदेश—

गृह धर्मसः भक्ति विधान

विषय | पृष्ठ

चौथा सम्बाद–सिद्धान्त

छन्द

सद्‌गुरु कबीर उदार मग नर नारि हित सम दक्ष है ।
लघु श्रेष्ठ वर्ग विभेद गत मानव समान सु लक्ष है ॥
नर तन करम की भूमि बंधन मोक्ष के हित स्वक्ष है ।
अतएव अधिकारी सभी कल्याण पद धर रक्ष है ॥१॥

इस ग्रंथ में शिक्षा जोई सो गुरु कबीर क देश है ।
मानुष्य जीवन आचरण निज बोध हित उपदेश है ॥
नारी जनों के हेत शिक्षा सरल रम्य दिनेश है ।
गृह धर्म भक्ती संत गुरुवर परख ज्ञान निदेश है ॥२॥

सोरठा

परम विरागी देव, संत गुरू सम कौन जग ।
देत मोक्ष सद मेव, जीवन जन्मृत दुक्ख हर ॥

श्री बोधक देव द्वारा महिला उद्धार
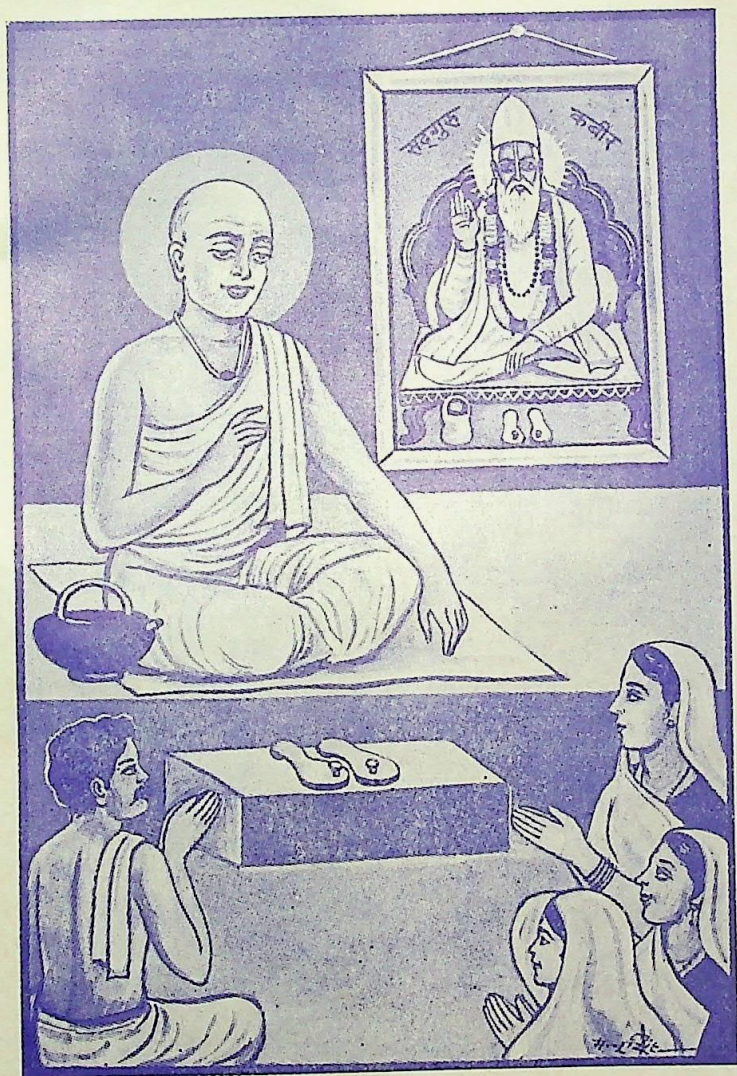
'भूल मिटै गुरु मिलैं पारखी, पारख देहिं लखाई।
कहहिं कबीर भूल की औषध, पारख सब की भाई ॥' (बी०)

❀ सद्गुरवे नमः ❀

सद्ग्रंथ

कबीर महिला उद्धार

चार सम्बादों में

[वन्दना]

दोहा—वन्दौं सत्य कबीर गुरु, श्री विशाल प्रभु बोध ।
तिन प्रताप मो उर बसै, नमत 'शरण, शिर शोध ॥
जेहि विधि गुरुपद बोध रहि, सोइ उपाय करि थीर ।
हर छन सद्पथ रमन हित, ध्यावत पारख तीर ॥

—०—

छन्द—बर्ताव विधिवत देवियन वर्णौं यथा इस ग्रंथ में ।
गृह धर्म का कर्त्तव्य शुचि नारिन हितै इस ग्रंथ में ॥
औरहु सुधारक ज्ञान भक्ती सो यही सद्ग्रंथ में ।
जो चाहतीं हित धर्मको रुचि हैं इसी शुचि ग्रंथ में ॥

दोहा—बुद्धिमती जो नारियाँ, जीवन शुचि सुख चाह ।
पढ़ैं सुनैं रुचि गहि कथा, भरि शुभ गुण दुख दाह ॥

कथा प्रारम्भ

[कीर्तन]

जय जय जय प्रभु देवहरे, गुरु पूज्यहरे प्रभु पूज्यहरे ।।टेक।।

जय काशी निवासी संकट नाशी, बोध प्रकाशी आद्य प्रभो ।
जन मन रंजन त्रय दुख गंजन, भ्रम भंजन भो आपि प्रभो ।।
शुचि संत 'कबीर' कहाय हरे । गुरु पूज्यहरे प्रभु पू० ।।१।।

शिशुपन धर्म कि लीला देखि के, रामानंद के भक्त कहे ।
पुनि बाल विनोद[१] को तजि के धीवर[२], अनुभव पारख स्वयं लहें ।।
इमि परखप्रतापी स्वयं हरे । गुरु पूज्य हरे प्रभु पू० ।।२।।

योगी गोरख का मद हरि के, माल तिलक स्थीर कियो ।
हिन्दू मुस्लिम भरम मिटाकर, भूप बलख को बोध दियो ।।
जय बन्दीछोर कहाय हरे । गुरु पूज्य हरे प्रभु पू० ।।३।।

साधन योग तपस्या शोधक, विजयी सन्त शिरोमणि थे ।
जीव जगाते पारख देकर, विरति दशा से फिरते थे ।।
जय दया शिरोमणि मुक्त हरे । गुरु पूज्य हरे प्रभू पू० ।।४।।

अज्ञ[३] सुज्ञ[४] की भूल प्रखा कर, ज्ञान कोष टकसार[५] दियो ।
मत पंथन के जाल मिटाकर, हंस रहनि जिव थीर कियो ।।
जय 'शरण' के इष्ट कबीर हरे । गुरु पुज्य हरे प्रभु पू० ।।५।।

टि०—१ खेल । २ श्रेष्ठबुद्धिसे । ३ अनपढ़-अज्ञानी । ४ विद्वानों । ५बीजक ।

पहिला सम्बाद–

ब्रह्मचारी गुरुबोधदास अपनी माता भानुमती देवी
प्रति स्वबोध हेतु गुरुदेव से निवेदन

[निवेदन-सवैया]

जिमि कोइ रंक कुरोग से पागल दौड़ि फिरै बिल्लात दुखायो ।
तैसहि ज्ञान से हीन मनोरुज पापी फिरौं चव खानि चखायो ॥
श्रीगुरु आप धनेश सुवैद्य दया करि पारखकोष देखायो ।
और मनोरुज हारक औषध शुभ गुण देय निरोग पेखायो ॥

दोहा— सब प्रकार तव बोध से, भयों मैं उर संतुष्ट ।
पर माता भगिनी कुटुम, ज्ञान बिना वे रुष्ट ॥
गुरुवर आप के सुयश से, सुख मानै भरपूर ।
पर युक्तिहीन मम वचन से, नहिं समुझत हटि दूर ॥
याते प्रभु यह विनय मम, जब वे दरश को आयँ ।
बोध बर्षि अनुसार तिन्ह, भीगि ज्ञानसे जायँ ॥

[सवैया]

एक समय गुरुदेव सु आसन बैठि स्व ध्यान में थीर रहायो ।
ताही समय गुरुबोध कि मातु कुटुम्बी सबै गुरु दर्श को आयो ॥
ध्यान में देखि नमैं कर जोरिके दूरहिं बैठि के चुप्प धरायो ।
जब गुरु ध्यानसे जाग्रत देख्यो तुरतै दौरि सभी शिर नायो ॥
बड़े अह्लाद से फूल प्रसाद चढ़ाय गुरूपद शीश भेंटायो ।
दीन्ह अशीश गुरू बहु भाँति वे बैठीं भली विधि शील सुहायो ॥

सभी समचार को पूछि गुरुवर दै परसाद सु तुष्ट करायो
सुधीर दिखैं जस चन्द्र चकोर सुज्ञान कि प्यास क लक्ष बतायो
दोहा— गुरुबोधदास की मातुने, विनय भजन जो सीख।
नमत प्रेम त्रय भेंटि शिर, कहत गुरू रुख दीख॥

[भानुमती देवी की अर्जी-भजन]

गुरु मोरी नाव के खेवनहारो ॥ टेक ॥

खानि बानि सुख मनोमयी यह, सागर धार अपारो।
बड़े बड़े पंडित योगी ज्ञानी, बिन पारख बहे धारो ॥१
कामादिक विकराल जन्तु बहु, धीर वीर सब हारो।
ऐसी दुर्गति देखि दुखी मैं, भागन चहत किनारो ॥२
संसारिन के कठिन दरेरा, भेष में बढ़ि कै गारो।
हे गुरुदेव दया के आगर, अर्जी सुनि मोहिं तारो ॥३
राजस त्रिगुण सुखहन्ता हनि, निज स्वरूप बैठारो।
अमित पुण्य से मिल्यो मुक्त गुरु, 'शरण' को शीघ्र उबारो॥

दोहा — मम मति महा मलीन है, तव पदसे मैं दूरि !
जेहि विधि नारिन काज हो, देव ज्ञान गुरु भूरि ॥
नारी जाति अजान मैं, विद्या से हूँ हीन।
बहु कुसंग बिच भ्रमत हूँ, मार्ग सुझाओ पीन ॥

[छन्द लावनी]

गुरुबोधदास की भानुमती माँ शिर नमि अर्पि सुनाई थी
अर्जी कीन्हीं सरल नम्र ह्वै, ज्ञान हेतु बहुताई थी

सुनि के गुरुवर पल युग स्थिर, रुचि लखि तेहि अधिकाई थी।
बर्षन लागे अधिकारी जस, पपिहा सभी सुहाई थी॥

ब्रह्मचारी गुरुबोध दास की माता—भानुमती देवी प्रति गुरु आदेश

[नारी गृहधर्म—भजन]

बहिनों ! मानुष धरम को सँभारो सदा।
जग के दुक्खों से जीवन उबारो सदा॥ टेक॥

बोल चाल कर्त्तब्य में, सदा नम्रता धारि।
सासु ससुर पति सबों से, अदब राखि मन टारि॥
बहिनों! समता व शील सबों से सदा। ब० ! मानुष०॥१॥

आलस कपट गुमान तजि, करो सेव शुभधर्म।
छल चुगुली ईर्षा कुवच, तजि सुशील बनि पर्म॥
बहिनों! करकस की चालैं हटावो सदा। ब० ! मानुष०॥२॥

नारि पतीव्रत धर्म शुभ, अनुसूइया❀ जो भाखि।
सो सब सीता सुनि गही, वही नियम शुचि राखि॥
बहिनों! राजस कुदृष्टी को त्यागो सदा। ब० ! मानुष०॥३॥

टि० ❀ अत्री ऋषि की पत्नी अनुसूइया जी सीता जी से पतिव्रत धर्म निदेश—

— चौपाई —

कहि ऋषि बधू सरल मृदु बानी। नारि धरम कछु व्याज बखानी॥
धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपति काल परखिये चारी॥
जग पतिव्रता चारि विधि अहहीं। वेद पुराण संत अस कहहीं॥
दोहा— उत्तम मध्यम नीच लघु, सकल कहौं समुझाय।
आगे सुनहिं ते भव तरहिं, सुनहु सीय चित लाय॥

मर्य्यादा कुल द्रब्य जस, शुद्ध अभूषण राखि ।
बिको न ठाठ सिंगार में, शुभ गुण भूषण भाखि ॥
बहिनों ! मोटे सु वस्त्र मर्य्याद सदा । ब० ! मानुष० ॥४॥

खान पियन हिंसा रहित, नशा तमाखू* आदि ।
मद्यपान चटटूपना, भूलिउ करो न यादि ॥
बहिनों ! अन्न व साक फल खावो सदा । ब० ! मानुष० ॥५॥

निज तन बच्चे वस्त्र घर, बर्तन अन्न दुवार ।
धोय माँजि नित साफ रखि, कूड़ा हृदय बुहार ॥
बहिनों ! तन मन की शुद्धी को राखो सदा । ब० ! मानुष० ॥६॥

मेला नाच सनीम औ, घुमनि कुटनिपन त्याग ।
कंजूसी तृष्णा तजौ, दिल उदार रखि जाग ॥
बहिनों ! आगम धरम को बनावो सदा । ब० ! मानुष० ॥७॥

उत्तम के अस बस मन माहीं । सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं ॥
मध्यम परपति देखहिं कैसे । भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥
धरम विचारि समुझि कुल रहहीं । सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहहीं ॥
बिनु औसर भय ते रह जोई । जानहु अधम नारि जग सोई ॥
पति बंचक परपति रति करई । रौरव नरक कल्प शत परई ॥
क्षण सुख लागि जन्म शत कोटी । दुख न समुझि तेहि सम को खोटी ॥
बिन श्रम नारि परम गति लहई । पतिव्रत धर्म छाँड़ि छल गहई ॥
पति प्रतिकूल जन्म जहँ जाई । बिधवा होय पाय तरुणाई ॥
(रामायण)

टि०❀ दोहा— पान तमाखू खाइनी, बीड़ी सिगरेट आदि ।
इन सबको त्यागै नितै, सुबुधि धारि दुख बादि ॥

तन धन कुटुम औ भोग सब, मिलत छुटत निज कर्म ।
दैव भूत सब भर्म तजि, गहि सतसंग सुधर्म ॥
बहिनों ! भक्ती से ज्ञान सुख पावो सदा । ब० ! मानुष० ॥८॥

नारि पुरुष तन जिव नहीं, ये सब मनकृत कर्म ।
चारि तत्त्व जड़ से रहित, सब जिव पारख पर्म ॥
बहिनों ! सद्गुण सुयश अपनावो सदा । ब० ! मानुष० ॥९॥

दुखमय माया के लिये, अर्पण रह्यो सदाय ।
भाग्य बड़ी जेहि गुरु मिले, अर्पि भक्ति सुख लाय ॥
बहिनों ! पारखि 'शरण' अब लावो सदा । ब० ! मानुष० ॥१०॥

दोहा— गृही धर्म बर्ताव यह, सुनि समझौ सत्संग ।
नित्य कर्तव्य क कवित्त अब, धरौ ज्ञान नशि जंग ॥

[नित्य कर्त्तव्य–कवित्त]

प्रति दिन भोर उठि संत गुरू ध्यान धरि,
सनमुख संत ढिग बन्दगी सु कीजिये ।
शौच क्रिया हेत जाय पात्र जल साथ लेय,
स्वक्ष मिट्टी वारि से ही हाथ शुद्ध कीजिये ॥
दन्त माँजि प्रति दिन स्नान ध्यान धरि,
गुरू मंत्र पाठ करि स्वच्छ मन धीजिये ।
अशुद्ध रूप छल्ला अरु मूँदरी को टारि कर,
गंदगी हटाय वस्त्र साफ घर कीजिये ॥ १ ॥

भोजन के पात्र सब दाग से रहित कर,
जल छानि अन्न बीनि भोज साज सीखिये ।
शुद्धता अचार सों विचार से ही लेय कर,
क्रोध लोभ मोह टारि बोध ज्ञान चीखिये ॥
जीव दया सत्य सत्संग ग्रंथ नेमी बनि,
भक्ती केर अंग पालि शांत भाव भीजिये ।
ईश ब्रह्म देव देवी भूत चुड़यल सब,
मंत्र फूँक झार टारि गुरू ज्ञान पीजिये ॥ २ ॥

दोहा— पूर्व कहे सब भाव को, जो जन धरे विचार ।
भक्ति ज्ञान भरपूर हो, सुखी होय भव पार ॥

[नारियों के हितैषो द्वादश आदेश]

दोहा—सभी देवियों के हितै, औ ब्रह्मचारी मात ।
गृहीधर्म कर्त्तव्य नित, कह्यों और सुनु बात ॥

चौपाई

सुनो ! सभी प्रेमी जन देवी । द्वादश शिक्षा अति हित सेवी ॥

(१)

गृह कामों के करते माहीं । हर क्षण ध्यान में इष्ट को लाहीं ॥
पनिहारिनी की युक्ति धरीजै । कू कारज चित भूलि न दीजै ॥

(२)

दूसर स्वारथ औ परमारथ । शारीरिक मानस शुद्धारथ ॥

भावार्थ-- ब्रह्मचारी गुरुबोधदास की माता तथा और सभी सुसज्जन देवियों से मैंने पूर्व में 'नारी गृहधर्म बर्ताव'

भजनमें सविधि सूचना दिया, पुनः नित्य धर्म सः नियमतः तन-मन के शुद्धाचार कर्त्तब्य बर्ताव के हित 'दो कवित्त' कह कर सूचित किया, तिन्हें गम्भीरता सहित हृदयांगम करें। अब और भी बर्तमानमें जो कुछ कहने जा रहा हूँ सो सर्व देवियों के लिये–'हितैषी बारह (१२) आदेशों, में सूचित करूँगा। उसे अखण्ड सुख चहीतक सर्व सज्जन देवियाँ लक्ष देकर श्रवण करें, पढ़ें-गुनें और तिन सभी आदेशों को सेवन करें अर्थात् धारणा में लावें तब वे सभी देवियाँ लौकिक सर्व सुख सहित मनोभावों से संतुष्ट होकर परमानंद में बिराजैंगी।

१— पहिली शिक्षा यह है कि सर्व धर्मनिष्ठ भामिनी अपने-अपने योग्य गृह कार्य करते हुये स्व शिरोमणि सत्य पारख ज्ञान के बोधक इष्ट को बोध रहस्य संयुक्त ध्यान में बसाये रक्खें।

जैसे पनिहारिनि पानी की भरी हुयी गागरी हाथों से बिना पकड़े ही अपने शिर लिये हुए योग्य मार्गपर चलती रहती है और अन्य से बातें भी करती जाती है, परन्तु वे शिर के घड़े किंचित भी हिलते-डुलते नहीं हैं अर्थात् गिरते नहीं, क्योंकि चलते और बातें करते हुये भी अपना यथार्थ लक्ष घड़े पर ही रखती हैं, तद्वत सर्व सुमुक्षा देवियों को पूर्वोक्त पनिहारिनि समान अयोग्य मार्ग कहिये कुकर्तब्य रहित सुयोग्य गृह कार्य करते हुये गुरुदेव के ध्यान में निमग्न रहना चाहिये। कहा है—

"तेरे विषय बसत दिन राती। चलत फिरत हिय तोहिं सोहाती॥"
(विश्राम सागर)

२-- दूसरी शिक्षा यह है कि-- स्वार्थ कहिए गृह सम्बंधी जितने भी कार्य ब्यवहार किये जावें. सबों में शुद्धता का हमेशा लक्ष रखना चाहिए। परमार्थ कहिये श्रेष्ठ कल्याणार्थ-आचार नेम-धर्म-भक्ति सत्संग ज्ञान-विचार आदि के कार्य कर्त्तब्य सर्ब यथायोग्य शुद्ध ही होना चाहिए। शारीरिक कहिये देह से हिंसा का अत्यन्त परहेज रखते हुये भोजन भंडार के कार्य-- कूटना, पीसना, चौका लीपना, झाड़ू लगाना, चूल्हा जलाना आदि सभी कार्यों में सावधानी रक्खें ? यथासक्ति जीव हिंसा न होने दें। कहा है--

"यथा शक्ति जन चूके नाहीं। होय अशक्य दोष नहिं ताहीं॥

और भी गृही अहिंसक वर्ताव---कवित्त-

लकड़िन झारिकर बकला निकारिकर चींटिनको टारि कर घुनन भगाय दो। मुख सेनी फूककर कपड़ा से झारि कर जीवन भगाय घर चौका को लगाय दो॥ आठ रोज बाद वस्त्र बाल सब साफ कर जुवाँ चीलु जौन तिन्हें बीनि के बहाय दो। पलंगा में थोड़ा सा घाम दिखलायकर छाहीं माहीं झारि तिन्हें जिन्दा चले जाय दो॥ (मार्तण्ड)

(३)

अन्य साथ हितदृष्टी राखै। केवल आपा स्वार्थ न चाखै॥

(४)

दुसरों के सद्गुण ही चर्चै। दुर्गुण छोड़ि न अपने में अर्चै॥

भावार्थ— ३ अपने घरमें हो या अन्य कहीं भी हो, दूसरों के प्रति सदा योग्य हितैषी दृष्टि एवं हितही सोचना तथा करना चाहिये। कभी भी अपनी तरफ से किसी के प्रति अनहित रूप घातक भाव व कर्त्तव्य न होने देवे। बदला न चाहते हुए हित करना अति उत्तम है, स्वार्थ-परमार्थ दोनों में निष्काम हितैषी वर्ताव करे। आपास्वार्थी तो भूलकर भी न बने। आलस कादारतारहित सदा साहसी और उत्साही होना चाहिये।

[आपा स्वार्थी-जमुना]

उदाहरण— एक ग्राम में जमुनावती और सहोदरा ये दोनों लड़कियाँ सलाहकर एक साथ दुमुसरा एक-एक मन धान कूटने का निश्चय कीं। जमुनावती ने कहा— हमारे धान सूखे हैं, इन्हें पहिले कूटें, तब तक तुम्हारे धान और भी धूप में सूख जायँ। अब दोनों मिलकर जमुनावती के धान कूट डाले, इतने में शाम हो गई, अब सहोदरा अपने धान कूटने के हेत ले आई, तब तक जमुनावती टट्टी चली गई, वहाँ तिसने सोचा कि अब हमें क्या करना है? हमारे तो धान कूट ही गये, अब रातमें कौन कूटे? जमुमावती टट्टी से आकर कहती है कि बहेन! अन्य दिन देखा जावेगा अब शाम हो गई है, रात में कूटने की कौन जरूरत? जाड़ेका समय है' ऐसा कहकर टालमटोल कर गई।

इस आपास्वार्थी जमुनावती के समान चालाकी करना महा पाप है। "अपना काम कराले औ दूसरे को धोखा दे" ऐसा कभी भी न करे, बल्कि अपने कार्य सहायकको सवाई-डेवढ़ा सहायता करना चाहिए यही मानवता है। निःस्वार्थ एवं बदला न चाहते हुए अन्य को योग्य सुकार्यों में सहायता पहुँचाना तो अति उत्तम है।

४—दूसरों के अच्छे यथार्थ शुभ गुणों को बखान करना, सुयश गाना, शुभगुणों को देख-सुनकर अपने में ग्रहण करना बुद्धिमानी एवं सज्जनता है। अन्य दुर्गुणों को घरोघर इधर-उधर न कहते घूमे और दुर्गुणीजनों से सदा दूर रहे, कोई भी दुर्गुण अपने बोल-चाल बर्ताव में न आने देवे। सारग्राही मधुमक्खी के समान अपना स्वभाव आचरण बनावे, गुणग्राही बने, शुभगुणधारी-शीलवती तथा भक्तिवती बने, नीच कार्य बर्ताव करने वाले की पटैती अर्थात् दुर्गुणियों के देखादेखी-अपना भी वैसा स्वभाव-कर्तव्य न बनावे एवं अपना उत्तम कर्त्तव्य लैन न छोड़ बैठे, सदा स्वयं पवित्र काय वर्ती बनें।

(५)

मंदालसा सुमित्रा के सम। पुत्रन हित शिक्षा दे हरदम।

(६)

निज पति से नृपवत भय मानै। गृह में निज को दासी जानै॥

भावार्थ—५ परम सुबुद्धिशाली मंदालसाकी कथा 'विश्रामसागर' में सविस्तार प्रकाशित है, यहाँ प्रमाण मात्र

सूचित करता हूँ— सुबुद्धिशाली मंदालसा के सात पुत्र पैदा हुए, वह अपने सभी पुत्रों को बचपन से ही स्वयं नित्य 'सुधर्म-भक्ति, वैराग्य, आत्मबोध की शिक्षा देते-देते बारह (१२) वर्ष में पूर्णतया सुधर्म-भक्ति सद्विचार-स्वात्मबोध सहित वैराग्य दशा परिपुष्ट करके मोक्ष हेत—भजन-ध्यान करने के लिये वनको भेज दिया। सातो पुत्रों को निःस्वार्थ मोक्ष पदवी प्राप्त करा दी। धन्य है ! ऐसी सुबुद्धिवान माता बहिनों को।

सुमित्रा— लक्ष्मणकी माता अपने प्रिय पुत्र—लक्ष्मण, जब रामजी के साथ वन को जाने के लिये आज्ञा माँगे तब माता सुमित्रा बड़े अह्लाद से रामजी की सेवा-भक्ति करनेके लिए आज्ञा देते हुए कहती है कि—चौपाई—

"तात तुम्हारि मातु बैदेही। पिता राम सब भाँति सनेही॥
अवध तहाँ जहँ राम निवासू। तहँइ दिवस जहँ भानु प्रकासू॥
पुत्रवती युवती जग सोई। रघुवर भक्त जासु सुत होई॥
नतरु बाँझ भलि बादि बियानी। राम विमुख सुतते हित हानी॥
राग रोष ईर्षा मद मोहू। जनि सपनेहु इनके बश होहू॥
सकल प्रकार बिकार बिहाई। मन क्रम वचन करेहु सेवकाई॥

(रामायण)

उपरोक्त भावानुसार जैसे 'मंदालसा' और 'सुमित्रा' देवियों ने अपने पुत्रों को मोक्षदायी परमहितैषी शिक्षा देकर अपना तथा अपने पुत्रों का मानवजीवन सुफल किया, उसी

प्रकार सर्व सज्जन मुमुक्षा देवियों को अपने-अपने पुत्र-पुत्रियों तथा अपने सम्बंध निवासी व आश्रई कुटुम्बी तथा स्व प्रेमी-जनों को इस दुक्खमयी संकट संसारसागर मायाबंधन तथा घोर नरकरूप चार खानि से छुट्टी पाने के लिये हमेशा परम-हितैषी— सुधर्म, आचार-सत्संग-भक्ति, सदविचार आदि सुयोग्य मोक्षदायी शिक्षा, सहायता, सलाह देनी चाहिए। ऐसे उत्तम भाव कर्त्तव्यसे अपना तथा आश्रयी जनों का एवं दोनों का उद्धार है।

६— गृहस्थी व्यवहार में स्त्रियों को अपने-अपने पतियों का अदब कायदा-मर्यादा रखना चाहिए। जैसे प्रजा अपने राजाका भय-दबाव. मर्यादा मानती है. क्योंकि उस राजा (मालिक) की राज्यमें प्रजा अपना निर्बाह लेती है, उसे अपना रक्षक समझती है, तद्वत अपना पति गृहस्थी व्यवहार में राजावत् रक्षक-आधारक है, याते पतिका भय-अदब, मर्य्यादा रखना-मानना बहुत जरूरी है। यदि पति लोक मर्यादा, धर्म मर्यादा न्याय विरुद्ध बर्ताव कर्त्तव्य धारण कर लोक-प्रलोक धर्म रक्षक आधारक के बजाय सर्व प्रकार से भक्षक-घातक-सुधर्म नाशक हो रहा है, तो ऐसे कुयोगी भ्रष्टक कुबुद्धिवान पतिसे अति भयभीत न रहकर स्वयं यथार्थ न्याय-धर्म मर्यादा भाव बर्ताव समझ देख कर अपनी सुबुद्धिता सहित न्याययुक्त योग्य पवित्र बर्ताव आचरण करें। केवल उदण्डता उन्मादता बश आजादी स्वभाव बनाकर न्यायमर्यादा

विरुद्ध मनमती स्वतंत्रबर्ती न बन जावें, ऐसा करने से लोक-परलोक के सुखसाज नाश होने में देर न लगेगी। कहा है— चौपाई—

'महा बृष्टिचलि फूटि कियारी। जिमि स्वतंत्र ह्वै बिगरैं नारी ॥ (रामायण) गृह में अपने सुयोग्य बुद्धिमान पति तथा अन्य स्व कौटुम्बियों की सेविका होकर रहे। आलस और अभिमान को त्याग कर निरालस नम्र हो यथासक्ति सबों की योग्य सेवा करना अपना कर्त्तव्य समझें। अपने गृहमें आये हुये योग्य अतिथों की यथायोग्य सत्कार करना अपना आश्रमिक सुधर्म है। कहा है—

दोहा — 'अभ्युत्थान प्रणाम धन, आसन भोजन बार।
घर आये को कीजिये, भेंट यथा अधिकार ॥
(सतोपदेश)

(७)

पुरुष सबन्ध में शास्त्र विधानै। मासिक धर्म औ पर्व तजानै ॥
बाल क्षीर को जब तक पीवै। अतिथ साधु गुरु द्वार बसीवै ॥
तीर्थ बास व्रत दिन नहिं पर्शै। यक दो पुत्र जनमि तजि नर्शै ॥

दोहा — नारि पुरुष सम्बंध गृह, भाख्यों शास्त्र विधान।
शनैः शनैः आसक्ति तजि, सो जन बुद्धि निधान ॥

भावार्थ—७ गृही धर्म पोषक देवियाँ अपने-अपने पति से दाम्पत्त्य व्यवहार शास्त्र विधान से रक्खें, सो संक्षिप्त में यहाँ शास्त्र विधान बताया जाता है।

प्रथम—हर महीने में देवियों के जितने दिन रजोधर्म रहता है उतने दिन पतियों से दाम्पत्य ब्यवहार न करें। ऐसे कुसमयों में दाम्पत्य ब्यवहार करना महा घृणित पाप है, ऐसे पाप कर्म से अघोर सड़े पीव खून मयी नरक में अनंतों काल तक दुसह दुख सहते बीतेगा, सो प्रत्यक्ष ही है। बल्कि ऐसे समयों में देवियाँ दाम्पत्य ब्यवहार के अलावा देह और वस्त्रों की सफाई का अधिक ध्यान दें, रसोई बनाने के कामों में न प्रवेश हों, अपना शारीरिक ब्यवहार दूर रक्खें। यह प्रारब्धिक घृणित भोग है, ऐसे समयों में पवित्रदेव–साधु गुरु आदि इष्टों को मत छुवें, दूर से ही दण्ड प्रणाम तथा बन्दगी भाव करते हुए अपना अपना स्वधर्म पालन करें।

दूसरे—पर्व के दिन एवं माने हुये शुभ पवित्र दिनों में देवियाँ दाम्पत्यब्यवहार से पर्हेज करें। ऐसे समयों में दाम्पत्य ब्यवहार सनातनधर्म का नाशक महान घोर पाप है। धर्मेश दिनों में पवित्रता का ही सुचारु रक्खें।

तीसरे—बच्चा गर्भ में हो तथा बच्चा पैदा होकर जब तक दूध पीने की उस की अवधि रहे तथा वह दूध पीवे, तब तक।

चौथे—जब जब स्व आश्रममें मान्यवर अतिथि तथा मोक्षदाता पूज्यवर संत गुरुका आगमन हो और उनका निवास रहे।

पाँचवें—जितने दिन तीर्थों में जा करके निवास करें।

छठे—साल में जितने दिन व्रत के प्रमाणित किये गये हैं

इत्यादि ऐसे-ऐसे शुभ अवसरों के योग्य पवित्र दिनों में सुधर्म-पोषक देवियाँ-पतियों से दम्पत्त्य ब्यवहार न करें, अत्यन्त पर्हेज रक्खें। फिर एक-दो या तीन पुत्र या पुत्रियाँ पैदा होने पश्चात् सुबुद्धिशील देवियाँ दम्पत्त्यमयी स्पर्श को जीवन भर के लिये त्याग कर इस घातकी-काम काल को संघारकर ब्रह्मचर्य व्रत पोषण करें अर्थात् स्त्री-पुरुष दोनों बहन-भाई के समान रहते हुए स्पर्श विषय के पर्हेजी बनें।

सातवें—दोनों पति पत्नियों में एक दूसरे के रुग्ण अवस्था में भी दम्पत्त्य ब्यवहार का पर्हेज करें। दोनों किसी एक के रुग्ण अवस्था में अन्य किसी दूसरे पति पत्नी के तरफ भूलकर भी कुलक्ष-कुभाव न होने दें, अपनी मानोवृति स्वाधीन रक्खें, परम पद के अधिकारी बनें। यह पति-पत्नी दम्पत्य ब्यवहार गृह धर्म बर्ताव शास्त्र विधान से कहा गया है, सो मर्यादा गृह-नीति से अति उत्तम और धारण करने योग्य भी है। ऐसे उत्तम योग्य बर्ताव से स्वयं ही पति-पत्नी और तिन से उत्पन्न हुए सन्तान बलिष्ठ तथा तेजोमय प्रतापी होंगे। जिन देवियों के पुत्रोत्पति का संयोग न हो तो वे गृह नीति पूर्व कहे विधान से एवं शास्त्र मतानुसार बारह (१२) वर्ष गृही दम्पत्य ब्यवहार के पश्चात् वानप्रस्थिं नियम से रहें अर्थात् पति-पत्नी दोनों जन दम्पत्त्य क्रिया-विषयासक्ति त्यागकर ब्रह्मचर्यव्रत युक्त रह के गुरु सत्संग परायण हो आत्मज्ञान (पारखज्ञान) सद्धारणा-रहस्य एवं मोक्ष मार्ग के परम अधिकारी बनकर

अपना जीवन उद्धार करें।

ये द्वादश आदेशों के सातवें आदेश में जो नियम बताये गये हैं वे धीरे-धीरे स्पर्शासक्ति त्याग करने का साधन बनाने हेत बहुत सरल ढंग है। ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने वाली पवित्र बुद्धिमती देवियाँ अपने-अपने अमूल्य मानव जीवन को बड़ी सुविधा से मोक्ष मार्ग—पारख बोध धारणा में सफल कर लेंगी।

जिन देवियों के पतियों का देहांत हो गया, वे पतिहीन बुद्धिमती देवियाँ किसी प्रकार कष्ट न मानें और कभी भी स्वप्न में अन्यका मुख न ताकें। काम भावना को निर्मूल कर पूर्ण ब्रह्मचारिणी, परमार्थगामिनी, मुमुक्षा बनकर भक्ति-सुधर्म बोध ज्ञान वैराग्य धारण के सर्व अङ्गों को धारण करने के परम उत्साही बनें। काम कुपथ की निवृति में सरलता ही समझें। अपनी सारी मनोकामनायें अपने उद्धारके कार्यों में जोड़ दें। जैसे कहा है—"सब के ममता ताग बटोरी। मम पद मनहिं बाँधि बट डोरी।" (रामायण)

(८)

भोजन समय मातु जस बालक। तैसेहि पतिको भोज से पालक॥

(९)

विपति काल में नेक सलाही। जस मंत्री राजा को हिताही॥

(१०)

मन क्रम बचन स्वार्थ परमारथ। अज्ञा पालि सु देय पदारथ॥

भावार्थ — ८ जैसे माता अपने बालक को ठीक समयपर भोजनादि देह रक्षक पदार्थ देकर तिस की रक्षा करती है, उसी प्रकार-सुबुद्धिशाली देवियाँ अपने पतियों तथा स्व आश्रितों को सप्रेम खान-पान आदि यथा समय शुद्ध पवित्र पदार्थ खिला-पिलाकर तिन्हें सनम्र पोषण-रक्षण करें। गंदगी और हिंसाको हटा के पवित्रता ही रक्खें।

९ — अपने पति को संयोगाधीन कोई आपत्ति आनेवाली दिखै तो सप्रेम सोच समझ के उस आपत्ति से बचने वाली अच्छी सलाह देवे। जैसे मंत्री अपने मालिक-राजा को यथा समय सनम्र हितैषी योग्य सलाहें देता है, तद्वत पुरुष रूप राजा की मंत्रीवत् सलाही बने, सप्रेम नम्रता पूर्वक मर्यादा संयुक्त योग्य सलाह देवे।

१० — स्वार्थ के कार्यों में हो या परमार्थ के कार्यों में हो, सर्व जगह मन-कर्म-वचन से सुपत्नी अपने पति की योग्य हितैषी आज्ञाओं का पालन करे। धर्म विरुद्ध अयोग्य अज्ञाओं से पर्हेज करे। पति की योग्य पवित्र मनसा अनुसार उन्हें सप्रेम आवश्यक पदार्थ देकर उन्हें सन्तुष्ट रक्खें।

(११)

अतिथि व पति आदिक के बादे। भोजन खाय असक्ति न स्वादे॥

(१२)

त्यागन योग्य दोष षड् कहऊ। प्रथम नशा मद मांस को दहऊँ॥
दुसरे दुष्ट कुसंग तजावै। त्रय पति तजि न विदेश रहावै॥

चौथे घुमै अकेल न कबहीं। पँचये निद्रा अधिक न करहीं॥
छठे दूसरों के गृह माहीं। बसै न कबहीं सजग सदाहीं॥
दोहा — द्वादश ये आदेश को, 'शरण' कहे धरु ध्यान।
सोइ सुशीला धर्मिनी, बाकी कर्कस जान॥

भावार्थ — ११ घर में कोई योग्य अतिथि आगये हैं या स्व पति तथा और भी कौटुम्बियों को खिलाने-पिलाने के बाद में अपने को खाने-पीने का सदा विचार रक्खें। अपनी जबान को चटोरी-लोलुपी न बनावें। चुरा छिपाकर स्वादी पदार्थ न खावें-पीवें, यथायोग्य सबों को देकर स्पष्ट खावें-पीवें।

१२ – गृह में अत्यन्त त्यागने योग्य छः दोष बताये जा रहे हैं

प्रथम — नशा-बीड़ी, सिगरेड-तम्बाकू, खइनी-पीनी, पान दोहरा दारू, ताड़ी, अफीम, भाँग, धतूर, अण्डा, मांस आदि सुबुद्धि-सुधर्म नाशक नशीली, हिंसकी, मलेच्छी-गंदी मादक पदार्थ अत्यन्त त्याग रक्खें।

दूसरे — स्वार्थ-परमार्थ के योग्य नेम धर्मों के बाधक घातक दुष्ट पुरुषों का या कुल्टा-कर्कस कुलक्षणी स्त्रियों का सदा दूर से त्याग रक्खें, तिनका ब्यवहार सर्व प्रकार घातक एवं महा कुसंग है।

तीसरे — अपने पति से अलग विदेश में रहने न जावें अपने पतिके आधार में ही रहें। अगर पति न हो या कुयोग हो तो गृह में कोई योग्य कुटुम्बी स्वार्थ-परमार्थ सहायक

तिन के आधारित सहनशील योग्य पुरुषर्थी बनकर रहें, मन के दुष्चारित्रों में न वहें।

चौथे — सुसज्जन-सुशील सभ्य देवियाँ कभी भी अकेले शहर सनीमा बाजार-मेला तथा अन्य देश-विदेशों या और भी जहाँ-तहाँ मनमती बनकर न घूमें-फिरें, आवारा स्त्रियों के समान स्वयं न बस जावें।

पाँचवें — अधिक निद्रा लेने की आदत न बनावें, बहुत निद्रा लेना बुद्धि मन्दता का लक्षण है। जाग्रत के परिश्रम-थकावट के निवृतार्थ ही निद्रा की आवश्यकता है। बाकी जाग्रत ही रहकर शरीर के निर्वाहिक क्रिया पुरुषार्थ के साथ ही यथा समय धर्मेश इष्टों का ध्यान करें तथा भजन, पूजन, पाठ-पठन, सत्संग भक्ति ज्ञान कथा चर्चा में समय देकर लोक परलोक के सुधर्म सेविका होकर स्व-पर के उपकारी धर्मेश देवी बनें, धर्मध्वजी बनें, व्यर्थ संकटमयी जगत जाल में अपना जाग्रत समय न खोवें। तास-सतरंज रेडियो आदि के गान-तान में अमूल्य समय न खराब करें।

छठे — अपने घर के अलावा जहाँ-तहाँ दूसरे के घरों में रहने-सोने-बसने न जाना चाहिए। यदि योग्यतानुसार कहीं जाना रहना पड़ ही जावे तो वहाँ अति सावधान रहें, बिना सावधानता के कोई न कोई कलंक अवश्य मढ़ जावेगा।

अपना सौभाग्यशाली अमूल्य मानव जीवन पाकर जिस

प्रकार संसार दुर्गुण जन्य त्रय तापों से छुटकारा मिले, पुनःपुनः नरकगामी न बनना पड़े वही कर्त्तव्य पुरुषार्थ भक्ति विधान यथार्थ सत्संग द्वारा निष्पक्ष सत्यज्ञान सुधर्म में जीवन पर्यन्त निमग्न रहें, यही अन्तिम मानवता का कर्त्तव्य है, सोई बनाना अति आवश्यक है। उपरोक्त द्वादश आदेशों को धारण करने वाली देवियाँ सुशीला-धर्मिणी कही जायँगी। ऐसे गृह धर्म सुनीति वर्ताव न धारण करने वाली स्त्रियाँ कर्कसा, कुबुद्धिनी, फूहर स्व-पर घातनी, कुलक्षणी, कुल्टा कही जाती हैं, ऐसे कुभाव-कुबर्ताव कभी भी न आने देवें। बल्कि पूर्व सूचित सभी पवित्र नियमों को धारणकर सुदेवी बनें।

[संत शिक्षित—द्वादश आदेशधारी बहू की सज्जनता]

उदाहरण—राजपूताना देश में अजयपुरा नामक ग्राम में एक 'कौशिक नाथ' नाम के ब्रह्मण और ब्रह्मणी-गंगा देवी रहते थे, तिनके 'काशीनाथ' नाम का एक पुत्र था। ये सब कुलीन तथा मर्यादा सम्पन्न थे। वे 'कौशिकनाथ, बड़े बुद्धिशाली गम्भीर शांत सरल स्वभाव के थे, तिन्हीं अनुसार सुपुत्र 'काशीनाथ, भी बुद्धिशाली सुशील और पढ़ने में प्रखर बुद्धि का था, वह हर कक्षा में प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होते-होते इण्टर कर लिया। आज तक वह कोई भी दुर्गुण-व्यसन न धारण किया, शुद्ध सादे सरलता पूर्वक सात्सी धर्मनिष्ठ वर्ताव वर्तते रहा, हमेशा पिता की ऐन में रहते हुए आज षोडस वर्ष का हो गया। काशीनाथ की माता-गंगा-देवी अब अपने

पुत्र की शादी (विवाह) की आशा में यह चिंतन किया करती थी की अब हमारा पुत्र बड़ा हो गया है. तिसका विवाह होगा, तिसमें बहुत सा दहेज तथा साथ ही काफी सामान भी प्राप्त होगा। गंगा देवी ब्रह्मणी बहुत सा धन-माल मिलने की आशा अभिलाषा में निमग्न रहा करती थी। पंडित कौशिकनाथ का भाव तो सभ्यता-कुलीनता पर ही निर्भर था।

संयोगाधीन एक कुलीन ब्रह्मण-कौशिकनाथ के पुत्र 'काशीनाथ' की शादी करने हेत आये और काशीनाथ की सुयोग्यता देखकर पंडित कौशिकनाथ के पुत्र से शादी हेत आग्रह किये, कौशिकनाथ ने उनसे लड़की की उमर-स्वभाव आदि कई एक योग्य-योग्य व्यवस्थायें पूँछ-जाँच की, तब लड़कीके पिताने सब कुछ यथार्थ में जैसा कुछ हाल था वह ठीक-ठीक सब बतला दिया और साथही यह भी कह दिया कि हमारी लड़की भक्त तो बचपन से ही हो गई है एव वह भक्ति भावी सत्संग प्रेमिका है। लड़की के पिता की सब बातें पंडित कौशिकनाथ के अनुकूल पड़ गई, किन्तु प० कौशिकनाथ को यह बात अति रुचिकर हुई कि लड़की पढ़ी होते हुए 'भक्ति परायण-सत्संग प्रेमिणी है।

अब शादी तय हो गई, तिलक भी हो गया, तिथि नियमानुसार विवाह भी हो गया। कौशिकनाथ ने लड़की वाले से दहेज कुछ भी नहीं तय किया था, धर्मपर ही रख-कर स्व प्रारब्ध पर ही संतुष्ट था। पंडित को निश्चय था कि

किसी के धन देने मात्र से हम अधिक धनी नहीं हो सकते, अपने कर्मानुसार सब कुछ मिलते रहता है और मिलते ही रहेगा। परिवार में १ कुलीनता, २ सभ्यता, ३ सुबुद्धिता ये तीनों से ही सुख शांति तथा बड़प्पन है, सो सब ठीक ही है। विवाह में लड़की वाले ने यथा शक्ति दहेज भी दिया, परन्तु अधिक धनाढ्य न होने से काशीनाथ की माता–गंगादेवी के मन मुताबिक दहेज और सामान नहीं प्राप्त हुआ। अब तो पंडिताइन-गंगादेवी बहुत ही रुष्ट हो गईं, परन्तु पंडित-कौशिकनाथ के भय से कुछ अधिक कह नहीं सकती थीं किन्तु भीतर ही भीतर अधिक जलती रहती थीं।

ब्याह के कुछ दिन पश्चात्–'बहू' आगई और सासु के घर रहने लगी। वह सुशील सज्जन बहू 'नित्य प्रातः सबसे पहिले उठती, 'हाथ मुँह धोकर बिछौना पर ही अपने बोधक इष्ट का ध्यान करती' और स्व इष्ट का नाम तथा मंत्र जपती तत्पश्चात् महा वाक्यों का पाठ करती, फिर अपने गृह कामों में लग जाती। 'कभी भी आलस नहीं करती' 'गृह कार्य धन्धा करते-करते हर समय अपने बोधक इष्ट गुरु का ध्यान स्मरण रखती, 'पनिहारिनि शीशघट मार्ग गतः, वत् गुरु-पद लक्ष निमग्न रहते हुये गृह कार्य शुद्धता पूर्वक करती। स्नानादि पवित्राचार नियम पालन करते हुए घरमें सबों की यथायोग्य सेवा करती, कोई योग्य व्यक्ति घर में आते तब तिन सबों को प्रसन्नता पूर्वक अपनी मर्यादा संयुक्त प्रणाम

करके योग्य हितैषिता से बैठका देकर बैठालती, जल भोजन आदि आदरसे देती और भी विधि पूर्वक सब बर्ताव करती। इसके योग्य व्यवहारसे ससुर-पति तथा अन्य व्यक्ति सदा प्रसन्न रहते. परन्तु घरकी सासु-गंगादेवी जब तब कहा करती कि तेरा पिता हमें दहेज में कुछ नहीं दिया, यह सब सुनते हुए बहू कभी कुछ न बोलती।

सासु के बहुत कुछ कहने पर एक दिन बहू सनम्र बोली—अम्मा! देन-लेन को मैं क्या जानू? पिता को दहेज देने में मैंने मना नहीं किया, जो कुछ उनसे हो सका सो दिये और आपके तो वे सदा देनदार ही हैं तथा देनदार रहेंगेही। मैं आपके लिए सदा अर्पण हूँ, जो कुछ आप कहें सो मैं करूँ, आपके चरणों की मैं गुलामिनी हूँ' ऐसे सनम्र दो बातें कही, तब सासु-गंगादेवी कहती है कि मैं कितने दिनों से आशा कर रही थी कि मुझे अपने पुत्र के विवाह में खूब काफी दहेज और बहुत कुछ सामान मिलेगा, सो मेरे मनानुसार कुछ न मिला। हाय! मेरी पूर्ण आशा में पत्थर पड़ गये, तेरे मिलने और गुलामी से क्या हुआ?

जब पंडिताइन बहुत बकती-झकती और कहीं पंडित-कौशिकनाथ सुन पाते, तो वे पत्नीको बहुत समझाते कि देखो! जिससे जीवन भर निबहना है वह तो बिचारी सब प्रकार से ठीक ही है, लायक है, पढ़ी लिखी मर्यादा सम्पन्न सुबुद्धिशाली है, नम्र है, सुशील है, स्वार्थ-परमार्थ तथा गृहकार्य

करने में कुशल है और सर्व प्रकार से सभ्य - परिश्रमी - निरालस - सदाचारी है तथा हमारा तुम्हारा सवों का अदब कायदा भय मानती है। इसमें कोई नशा पत्ती की लत भी नहीं है और कितनी पवित्रता का वर्ताव इसमें भरा है। शारीरिक अंग - ढंग भी जैसा योग्य चाहिए सो भी सब ठीक ही हैं, अंग भंग भी नहीं हैं। हामरे शास्त्रों में जैसे देवियों के लक्षण बताये गये हैं वे सभी सुलक्षण इस बहू में पाये जाते हैं। तुम इसे तंग मत करो, दहेज - धन के लिए क्यों रुष्ट होती हो? बहुत धन सामान मिलने से क्या हम राजा - बादशाह हो जाते? या वह मिला धन हमारे पास सदा बना रहता? जैसे आता वैसे चला भी जाता। ब्यर्थ क्यों मनोकल्पना में पड़ कर जलती हो और विचारी बहू को क्यों तंग करती हो? वह विचारी धन कहाँ से उठा लाती? उसके पिता अपनी शक्ति अनुसार धन सामान दिये भी हैं, तुम्हें अधिक धन देने के लिये वे क्या किसीके यहाँ डाका डालते? इतना सुन पंडिताइन चुप रह जातीं। पंडिताइनकी बुद्धि लोभी और कर्कसयुक्त मंद थी, वे लोभ और मंदत्ताबस अन्य ब्यक्तियों को भी रुष्ट कर दिया करती, परन्तु रुष्ट हुये ब्यक्ति बहुरिया के सभ्य बर्ताव बोल-चाल से संतुष्ट हो जाया करते थे।

वह धर्मेश बहू संतों को अपने ससुर और पति द्वारा बुलवा कर सर्वाङ्ग भक्ति भाव विधि— तन-मन-धन वचन द्वारा उदार हृदय से यथा सक्ति स्वयं सेवा उपासना बन्दगी पूजा

आरती संयुक्त प्रातः का नियम पोषण करती, पुनः सविधि उदारता पूर्वक जलपान भोजन करवाती यथा समय कथा सत्संग भजन कीर्तन तथा संध्या वन्दन आरती वन्दगी प्रणाम शंका-समाधान, शीथ प्रसादी, चरणामृत और फल फूल मेवा-मिष्ठान सभी कुछ शाम को ले देकर अपने तथा सब सत्संगी अंतीम वन्दगी करके विदा हो जाते, इस प्रकार जब तक संतों का निवास रहता तक-तक नित्य सेवा भक्ति सत्संग उपासना का विधान स्वयं तथा पति और ससुर से सनम्र प्रेमपूर्वक करवाया करती धीरे-धीरे सभी को मंत्रोक्त हीरा कठी सः विधान पहनवा कर भक्ति परायण करवा दी। पंडिताइन गंगादेवी पंडित के दबाव से भक्त तो हो गई, आचार अहिंसा पवित्रता का भाव भी तिसमें आ गया किन्तु कमबुद्धि होने से करकस पन और लोभ नहीं निवृत हुआ।

पंडिताइन कमबुद्धि और लोभ के कारण दहेज की उमंग में भावना वश बहुत बकतीं झकतीं, तो भी बहुरिया शांति ही रहती कोई प्रकार सासु की उत्कर्ष बातों से अनख (हृदयक कष्ट) नहीं मानती बल्कि सासु ससुर पति तथा अन्य बड़े-बूढ़ों का नित्य अदब मयार्दा रखती, किसी बात में भी चंचलता-ढिठाई नहीं करती। सदा सभ्यता सहित राजसरूप ठाठ श्रृङ्गार रहित साफ शुद्ध सातसी आचरण युक्त पवित्रता अहिंसा धर्म का वर्ताव करती, घर-वस्त्र, बर्तन, अन्न आदि सब साफ रखती थी। रजोधर्म भी शास्त्रानुसार ठीक से पालन करती और विषयासक्ति

लोलुपता रहित योग्य समय ही स्व पुरुष का सम्बंध करती, शुभ अवसरों में दम्पत्य व्यवहार का त्याग रखती। वह जबान की चटोर भी न थी, 'भूख-प्यास का सहन, कुखाद्य से पर्हेज, कुसंग का अभाव, पवित्रता-शौचाचार आदि सात्विक बर्ताव का सदा व्रत रखती थी। सब को खिला-पिला कर सब से पीछे स्वयं खाती-पीती। सर्व-घरेलू काम अपनेही कर लेती, सासु से कभी कोई घर की टहल (कार्य) करने को नहीं कहती, बल्कि सासु की सेवा—नहलाना, कपड़े धोना, पाँव दाबना और भी समय समय पर दवा-पानी सप्रेम बना-बना कर दिया करती थी, सःमर्याद बोलचाल से पेश आती, कड़े बोल तो कभी किसी से भी नहीं बोलती थी।

दिन में गृह कामों से छुट्टी न मिलने के कारण रात में प्रकाश रखकर गुरु ग्रंथों को नित्य पढ़ती, मनन करती, अपने गुरुबोध ज्ञान भक्ति में सदा परायण रहती, कभी भी नाउत, ओझा बनावटी साधु भेषधारियों के पास न जाती न बुलाती, झूँठे दुआ- तावीज-फूँक-झार-नौताय, यंत्र-मंत्रों को स्वप्न में भी सत्य नहीं मानती थी, सदा ज्ञानी संतों के सत्संग को ही तीर्थ समझ के ज्ञान भानु में रहा करती थी, इस भाँति वह स्वाथ-परमार्थ मार्ग में सदा सुखी रहती थी।

कोई कठिनता आने पर सहन करना, धैर्य रखना, पद चलित न होना ही अपनी तपस्या समझती थी, इसीसे तो वह सासु के कठिन समस्याओं को इस प्रकार सहन करती थी—

"बुन्द अघात सहैं गिरि कैसे । खल के वचन संत सहैं जैसे ॥"
(रामायण)

बहू में इतनी गम्भीरता सहनशीलता होते हुये भी दहेज इच्छुक सासु गंगादेवी लोभ वश बहू से जलती थी, जलन वश बहू को गाली देते-देते मार के ढकेल देती, तब बहू उठ कर सासु के पाँव दाबने लगती और कहती कि अम्मा मेरी देह बड़ी कठोर है आप के चोट लग गई, ऐसा कहकर सासु के पाँव सोहराने लगती, कभी नाराज न होती, नित्यसासु को नहलाती, देह मलती, कपड़े धोती, बिछौना लगाती, घरेलू सभी काम बड़े सुढंग से कर लेती थी।

किसी के घर जा-जाकर कभी भी सासु की कुकर्त्तव्य को नहीं कहती, बल्कि किसी के मिलने पर घर के तथा अन्य के शुभ गुणों की ही चर्चा व गुणानुवाद गाती और दूसरे के अच्छे गुणों को ग्रहण करती, ऐसी सारग्राही थी, अहेतुक किसी के घर न जाती, शहर-बाजार-नाच सनीमा देखना तो पाप ही समझती थी, विदेश जाना अन्य के घर बसना तो दूर ही रहा।

एक दिन सासु गंगादेवी दहेज के मनतरंग में गाली देते हुये एक लकड़ी जोरों से मार दी, बहू के अब जोरों से खून बहने लगा, यह दशा देख पंडित कौशिक नाथ बहुत ही नाराज़ हो गये और पुत्र—काशीनाथ कुपित होकर कहा कि—अब अम्मा से अलग ही रहने में कुशल है, नित्य का शुद्रापन

कौन देखेगा ? अब माता से अलग ही रहेंगे। इतनी बात सुन कर वह सहनशीला तुरन्त अपने पतिको अलग बुलाकर कहती है कि वे सासुजी क्या करें ? उनकी बहु कालीन आशा में पानी पड़ गया, उन्हें मन भर धन न मिला। अपनी मनो आशा पूर्ण न होने पर सबको कष्ट होता है, उनकी वैसीही बुद्धि है। आप अपनी माता से कष्ट न माने, मैं सब सह लूँगी। आप अपनी माता के एकलौते पुत्र हैं, आप उनसे कभी उऋण नहीं हैं, क्योंकि उनके खून-रस से आपकी देह बनी है, आप के पालनार्थ वे नाना कष्ट सहन की हैं। गृहस्थी में रहकर जब आप उनसे उऋण नहीं, तो मैं आपकी दासी हूँ आपके पीछे मैं भी उनसे उऋण नहीं, आप अपनी माता से प्रेम रक्खें, मैं सब प्रकार से उनकी सेवा करूँगी। अपना धर्म कर्तव्य यथार्थ ठीक से पालन करना ही मनुष्य पन है, थोड़ा सा दैहिक कष्टआने पर अपना पवित्र सुधर्म न छोड़ना चाहिये। कहा है—

"धीरज धरम मित्र अरु नारी। आपति काल परखिये चारी॥"

(रामायण)

ऐसे सुयोग्य पवित्र वचन सुन कर काशीनाथ शांत हो गये।

ऐसी सुबुद्धिशाली बहू हमेशा सासु की सेवा प्रेम से ही करती रहती, परन्तु पंडिताइन गंगादेवी की धृष्टता न छूटी, वह अपनी सहनशीलता में ही अडिग्ग रही। इन दोनों के प्रति यह निम्न प्रमाण खूब घटित हो रही है—

दोहा— "दुष्ट न छोड़ै दुष्टता, सज्जन तजै न हेत।
कज्जल तजै न श्यामता, मोती तजै न श्वेत" ॥
(विश्राम सागर)

वर्षा के समय एक दिन पंडिताइन गंगादेवी रात में स्वप्न देखी कि मुझे दहेज में धन तथा साज समान खूब काफी मिला है, उसी प्रसन्नता की उमंग में जाग उठी तो वहाँ क्या था ? कुछ नहीं, बस बहू पर टूट पड़ी, गाली बकते-बकते जोश में उठी और एक दण्डा उठाने हेत आँगन के फर्स पर दौड़ी, वर्षा के कारण फर्स में चिकनी काई पर पाँव फिसल गया और बड़े जोरों से उसी चट्टान पर गिर गई। दाँत टूट गये, मुख फूट गया, काफी चोट लगी. एक हाथ एक पाँव बिल्कुल उखड़ गया, गिरते ही बेहोश हो गई। बहू देखतेही दौड़ी और सासु को गोद में लेकर सँभाली, तुरन्त द्वार पर खबर की, शीघ्र अग्नि लाके सेंक कर खून बन्द की। सासु गंगादेवी का एक हाथ एक पाँव बेकाम हो गया। डाक्टरों वैद्यों द्वारा दवा मलहम पट्टी होने लगी।

वह सहनशीला बहू सासु की सेवा में रातदिन सप्रेम तत्पर रहती, घर में ही टट्टी-पेशाब करवाती, उसे स्वयं साफ करती, सासु के कपड़े-देह सब साफ करती, दवा भी योग्य समय पर ही मालिस करती, सप्रेम खिलाती, पिलाती, उठाती बैठाती, सर्वाङ्ग सेवा करती रही, ऐसे करते-करते दो वर्ष के पश्चात् अब कुछ-कुछ अपने से उठने-बैठने योग्य हुयी।

दो वर्ष तक नाना कष्ट सहते हुये अब पंडिताइन का दिमाग ठण्डा हुआ। बहू को गाली देना-उपद्रव करना बन्द हुआ और अपने दुष्कर्त्तव्य पर ग्लानि सहित पश्चाताप करती है। अब बहू के आगे लज्जित होती है और तिसे धन्यवाद देते हुये बहुत प्रेम से बोल चाल करती है।

इन पंडिताइन सासु और बहू के चरित्र पर निम्न पद्य चरितार्थ किया जाता है, तिसमें बहू की विचार धारणा सः देवियाँ हृदयांगम करें।

[गृही चरित्र—बहू की सज्जनता भजन]

सासु बड़ी नकदारि पतोहिया विचारी ॥ टेक ॥
बूढ़ा कहैं मोर बेटवा जो ब्याही।
दायज औ माल खुब ल्याहौ सुधारी ॥१॥
भयो कुलीन घर शादी लरिकवा।
दायज न मनमाना पायो दुखारी ॥२॥
अउतै बहुरिया के सासु गरियावै।
वह तौ मौन धारि काज करै सारी ॥३॥
छोट बड़े इज्जत इ बूढ़ा न राखैं।
बिगड़ी व इज्जत पतोहिया सँभारी ॥४॥
भोजन क साज काज और गुणौं सारी।
गृही क नेम धरम पालै विचारी ॥५॥
केवल दहेज हेत सासू सतावै।
कबहूँ बहुरिया वो माख नहिं लारी ॥६॥

भक्ती व सेवा में आलस न लावै।
धीरज व शील राखि वर्तैं सुचारी ॥ ७ ॥
गरजि घुमरि बूढ़ा सेवा से खुश भईं ।
अब तौ बहुरिया से आप करैं प्यारी ॥ ८ ॥
ऐसी सुभामिनि शीला बहुरिया।
कहत 'शरण' अस बुद्धी हितारी ॥ ९ ॥

दोहा— व्यर्थ लोभ और दुष्टपन, कुबुधि कुलक्षण त्याग।
गहै सुलक्षण बहू के, सहन धैर्य गुण पाग ॥

सूचना— गृह आश्रम निवासनी सुख शांति चहीतक देवियाँ उपरोक्त द्वादश आदेशों को अपने बर्ताव में अवश्य लावें और सज्जन बहू के गृह कर्त्तव्य अनुसार कायदा मर्य्यादा धारणकर लोक-परलोक में सदा सुखी रहें। इस हितैषी कथा को केवल कहानी मात्र न समझें। उत्साह पूर्वक सप्रेम बर्ताव में अवश्य लावें और गंगादेवी के कर्कस स्वभावों को न धारण करें, तभी सर्वाङ्ग सुख शांति प्राप्त होगी, अन्यथा नहीं।

[छन्द]

इतनी सुशिक्षा सुनि भले परसन्न सब जन हो गईं।
आह्लाद से कर जोरि सब शिर भेंट अति मग्नै भईं ॥
अब करत सब त्रय बन्दगी उपकार गुरु हृदय लईं।
करि भेंट पूजा पग परत आशीष लै चलती भईं ॥
चलते घरै निज मार्ग में यक एक से कहती तईं।
ऐसे गुरू नहिं कहुँ मिले उपदेश अमृत सुख लईं ॥

सद्ग्रंथ सब नित पढ़त्र अब जीवन सुधारब निज तईं।
गुरु 'शरण' लै शुचि मंत्र सुनि जपि अर्पि सब गुरु पद लईं॥
दोहा– शिक्षा चर्चत घर नितै, दरश हेत हुलसायँ।
अन्य दिवस गुरु ढिग गईं, बन्दत नमि गुरु पायँ॥
गुरु पूजन शिर तिलक दै, फूल माल पहिनायँ।
भेंट प्रसाद सु अर्पि कै, चरणोदक मुख लायँ॥
तीनिवार विधि बन्दगी, अँजुलि धरि शिर नायँ।
पुनः सबै आरति करीं, ज्ञान सुनन हुलसायँ॥
इतने में आह्लाद युत, भानुमती बच प्यार।
हे गुरु हीरा मंत्र दै, शीघ्रहिं करो उबार॥
शुचि सुशील गुण सब जनीं, बिनय मंत्र हित कीन।
पुनि सब मिलि वन्दन भजन, शांति गान में लीन॥

[अर्जी भजन]

गुरु मोरी बाँह पकरि कै उबारौ ॥टेक॥
बहुत काल चौरासी अन्दर, बूड़ि मर्यों बहु बारौ।
अब की औसर मिल्यो प्रभू तुम, अब नहिं देर करारौ॥
संसारी सब ऐंचैं खैंचैं, गुरुवा भरम डुबारौ।
कोई उपाय नहिं दिखत दास को, दुर्गुण जन्तु दुखारौ॥
सदाचरण नैराश्य भक्ति का, ज्ञान जहाज बिठारौ।
घायल अहौं न बनत कदना, शुभ गुण बूटि पियारौ॥
तीरथ वरत ईश बहु देवता, भरम भूत सब टारौ।
श्री कबीर पद 'शरण' बाल को, तेहि बिन नाहिं अधारौ॥

[भजन निवेदन]

कब करिहौ गुरु दया की नजरिया ॥ टेक ॥

तुमरे दरश बिन निशदिन तलफौं,

जैसे तलफै बिना जल की मछरिया ॥ १ ॥

मंगल मूरति परम मनोहर,

श्वेत वसन जैसे चमकै उजेरिया ॥ २ ॥

कर में कमण्डल उर माल बिराजै,

तिलक रुचिर जैसे मुनि मन हरिया ॥ ३ ॥

दरश हेत गृह काज छोड़ि सब,

कब की मैं ठाढ़ी ठाढ़ी देखत डगरिया ॥ ४ ॥

धरमिनि को राखौ चरनन में,

करिहौं सदा तुम्हरी परिचरिया ॥ ५ ॥

(कबीर भजन माला)

दोहा– विनय निवेदन करि भले, बैठीं नमि कर जोर ।
सरद इन्दु जनु चितवत, मानौ निकर चकोर ॥

[छन्द—गुरु वाक्य]

गुरुवर विनय सुनि सब मुमुक्षा सभ्य लखि शुचि भाव को ।
तुम सब कुटुम्बी आहु जानूँ ब्रह्मचारी शिष्य को ॥
गुरु मंत्र हीरा देउँ जब जीवन निबाहौ भक्ति को ।
भक्ती नियम यकरस रखौ नित ज्ञान लहि शुचि मुक्ति को ॥

दोहा– गुरुवर बच सुनि सब कुटुम, भक्ती हित प्रण ठानि ।
ब्रह्मचारी गुरु रुख लहे, तुरत साज सब आनि ॥

[छन्द— गुरु मंत्र विधि-विधान]

ब्रह्मचारी गुरुबोधदास के कुटुम्ब सभी जन आय गये।
कुल विद्या धन मान त्यागि के विरति गुरू पद पागि गये॥
और बहुत जन गाँव के सज्जन यहि उत्साह में आय गये।
मेवा फल औ फूल माल शुचि वस्त्र सबै तहँ देय गये॥१॥
अगरबत्ती आरति सजिकर चंदन घिसि सब साज किये।
भीतर बाहर दोउ बिधि शुचि हो आकर गुरुपद नमन किये॥
ब्रह्मचारी ने गुरु चरणोदक प्रेमिन दै निज पान किये।
पुनि गुरु गले सजाय माल सब तिलक गुरू के भाल किये॥२॥
अपन अपन परसाद वस्त्र औ द्रव्य बहुत गुरु भेंट किये।
गावैं सज्जन गुरु महिमा अब कर बध गुरु ढिग बैठ गये॥
कर कमलों से गुरुवर हीरा सब के उर पहिनाय दिये।
मंत्र सुनाये विधिवत गुरु ने कीन्ह बन्दगी खड़े भये॥३॥

दोहा— मंत्र सुने जे सुजन जन, करत बन्दगी धाय।
पुनि गावत आरति हुलसि, करि सब आरति भाय॥
तत्पश्चात सु बन्दगी, लै प्रसाद सब धाय।
अब सब बैठे शांत पुनि, भजन सुनन हित आय॥

[सद्गुरु प्राप्ति उत्साह—भजन]

भाग्य बड़ी गुरु चरण मिले हैं॥ टेक॥

दरशन पाय आनंद भयो मन, हृदय कमल अब फूल खिले हैं
लै गंगोदक चरण पखारौं, आसन रचि मन दुख दले हैं
बैठि सिंहासन शोभत गुरुवर, शीश भेंट त्रयबार ढले हैं

पी चरणोंदक फूलमाल लै, उमँगि जाय पहिराय गले हैं ॥४
दिल उदार फल मेठा मिठाई, अर्पण करि गुरुदेव भले हैं ॥५
आरति पूजन द्रव्य भेंट करि, गुरु जेंवाय हम शीथ गिले हैं ॥६
स्वागत करि गुरुज्ञान अमृत सुनि, सोई हृदय धरि पाप जले हैं ॥७
निशिदिन पारख ज्ञान रमण करि, मोक्ष धाम नित 'शरण' ढले हैं ॥८

दोहा—भानुमती के साथ ही, बहु महिलन भो ज्ञान ।
भक्ति भेष विधि धारि सब, जपत मंत्र उर भान ॥
पूजन वन्दन करि भले, चले गेह निज जायँ ।
भक्ति नियम पालैं सबै, गुरु ज्ञान उर लायँ ॥

ब्रह्मचारी-गुरुबोधदास की माता भानुमती देवी प्रति गुरु आदेश—
पहिला सम्वाद समाप्तः

दूसरा सम्वाद

ब्रह्मचारी गुरुबोधदास की बहिन—सुशीला देवी प्रति—
भक्ति आदेश—

[गृह धर्म सः भक्ति विधान]

दोहा—भक्ति परायण प्रेमिनी, चलीं दरश गुरु हेत ।
आय नमीं त्रय गुरु चरण, भक्ति सुधा भरि लेत ॥

[सः समाज—कीर्तन]

हरे हरे प्रभु हरे हरे ।
पारख रक्षक हरे हरे, मन रुज नाशक हरे हरे॥टेक॥

'श्री कबीर गुरु' पारख शोध्यो, खानि बानि सुख माया शोध्यो
जय स्वयं उद्धारक हरे हरे। हरे हरे प्रभु ... ॥१
गुप्त कोष बीजक पद दर्शक, 'श्री पूरण' गुरु असली अर्थक।
जय बीजक पोषक हरे हरे। हरे हरे प्रभु ... ॥२
'रामरहस'गुरु 'काशी' 'लालौ' 'गुरु दयाल,शुचि संत 'विशालौ
जय 'शीतल' पारखि हरे हरे। हरे हरे प्रभु ... ॥३
माया पंथिन जो तजि आये, बोध विरति गहि थीर रहाये।
जय बन्दत 'शरणौं' हरे हरे। हरे हरे प्रभु ... ॥४

[ब्रह्मचारी—गुरुबोधदास की बहिन-सुशीलादेवी का प्रश्न— छन्द

ब्रह्मचारी गुरुबोधदास की बड़ी बहिन जो शीला[१] थी
यथा नाम तस गुण विद्या लहि धीर उदार फबीला[२] थी
बोली मधुर सनम्र दीन ह्वै हे गुरु ! मैं दुख शूला थी
गृही धर्म किमि भक्ति को धारूँ ?, भनौ प्रभू भ्रम झूला थी

दोहा– शील बहेन का प्रश्न शुचि, सुनि समाज हुलसाय।
गुरू कृपा प्रवचन अब, धरौ सविधि चित लाय।

सः समाज सुशीला के प्रश्न पर गुरु समझौता

[छन्द त्रिभंगी]

प्रश्न सुहावन, जग दुख ढावन, लैन सुझानो खरो अहै
गृह शुचि धर्मा, भक्ति के कर्मा, लहै जो उर मा दुक्ख दहै

[चौपाई]

मानव तन गृह में बहु जीवा। कर्म भूमिका यही सदीवा

टि०—१ सुशीला देवी। २ सुशोभित थी।

चहै कोई जेहि विधि वर्तावै । पाप पुण्य जवरन बनि जावै ॥
फोटू बनन कैमरा उर है । मन इन्द्रिन से क्रिया जिधर है ॥
छाजनादि षड्धर्म सकामैं । करैं क्रिया चव खानि के तामैं ॥
त्रय खानिन में नियम न वदलैं । मानुष क्षण-क्षण वदलत अदलैं ॥
मानव नारि पुरुष इमि दर्शैं । मति अनुसार धर्म सब पर्शैं[1] ॥
याते पाप पुण्य के भागी । विन विचार दुख लहैं अभागी ॥
सो विचार षड्धर्म[2] के माहीं । कहे चतुर्थाध्याय[3] में आहीं ॥
तहँ से लहो विचार सुशीला । षड् धर्मन को न्याय से छीला ॥
काटि छाँटि सदसार लखायो । मानुष लक्षण असल बतायो ॥

दोहा– जैसे हीरा मूल्य को, नहिं जानत सब लोग ।
तैसे लक्षण मनुष्य के, अज्ञ न जानत योग ॥
याते चव अध्याय को, सुसग से करि पहिचान ।
तीनि खानि से मुक्त वह, धरै सुलक्षण ध्यान ॥

गृहीधर्म बड़ खटपट जानौ । फिसलन भूमि अहै तुम मानौ ॥
सदा सजग रहै सोई उबरै । नहिं तौ चव धारा में सबरै ॥
प्रथम ये समुझै जिव अविनाशी । कर्मन वश भरमत चौरासी ॥
नारि पुरुष चव खानि न आहूँ । कर्म से नारि पुरुष तन लाहूँ ॥
जस मैं न्यारा तन औ खानी । तस सुसंग से पारख जानी ॥
पर जस ठीहा देह रहाई । तेहि परमाण से कार्य सदाई ॥
पूरब कर्म से देह अबल बनि । तेहि ते गृह अधार दुर्गुण हानि ॥

टि०—१ धारण करते । २ छाजन-भोजन-मैथुन-भय-निद्रा-मोह ।
३ सद्ग्रंथ–'कबीर मानव प्रकाश व जीवन सुधा' के चौथे अध्याय ।

मादक नशा कुभक्ष तजावै। चोरी ईर्षा कपट हटावै।
गृह में रहि कर्कस पन त्यागै। मलिन स्वभाव कुसंग न पागै।
यहि पर यक इतिहास सुनीजै। शोक समाज परखि तजि दीजै।

उदाहरण— पतोह इच्छुक सासु की अवदशा

दोहा—विधवा नारि के पुत्र यक, उसे पोषि करि ज्वान।
अब पतोह हित चाह बहु, कब आवै सुखदान॥
किसिहु भाँति वह मिल गई, असल घरै पति कीन्ह।
अपनी शान वो झाड़ती, सासुइ नित दुख दीन्ह॥

[भजन—कर्कस पतोह आदर्श]

सासु बूढ़ी का करै पतोहिया नकारी॥ टेक॥
बेटवा कि मइया ए आशा लगाये।
आवै बहुरिया घरै खुब सँभारी॥ १।
अउतै नयन मारि पूतवा समाई।
सबियौ गृहस्ती पे ताला चढ़ारी॥ २।
बहुतै सिंगार करि कजरा दिखावै।
छिन छिन कुबोल बोलै सासू दुखारी॥ ३।
काम काज गंदे औ ठाट हँसी जारी।
सासू पे शान झारै बोलै तुकारी॥ ४।
बूढ़ा सुधार हेत कबहूँ जो बोलैं।
उल्टे फेनाव करि सासुइ पिटारी॥ ५।
बेटवा बहुरिया से दुख बूढ़ा पायो।
अब तौ 'शरण, गुरु चेतौ अगारी॥ ६॥

दोहा—ऐसो करकसपन तजै, बूढ़ बड़ेन करि सेव।
मर्यादा गृहधर्म रखि, तन मन शुद्ध रखेव॥
मलिन कुसंगति क्रूरपन, करै कुलक्षण दूर।
गुरु सतसंग सुधर्म गहि, तमचरपन है धूर॥
बकरी शूकर पक्षियाँ, हिंसा है इन पालि।
देवी भूतन पूजना, तामस नउतन टालि॥
निर्दय मलिन कुबुद्धि वश, नारि करैं जिव घात।
इन्द्रिन चाट औ कुटुम हित, क्षण क्षण पाप कमात॥

[भजन—हिंसा सुधार विधि]

बहिनों ! हिंसा को त्यागो सुधर्मी बनो।
तजि के डाइनपना तू सुदेवी बनो॥ टेक॥

जस निज बच्चे आहिं तव, तैसहिं दूसर जान।
तीनों खानि अनाथ हैं, निर्बल दुखी अजान॥
बहिनों ! तिनको न खाव हमदर्दी बनो। ब० ! हिंसा०॥१॥

जबरन जीव सताय के, अण्डे हड्डी चुसेव।
मानुष है कूकुरि बनो, होटैं खून रँगेव॥
बहिनों ! डाइन स्वभाओं को शीघ्र हनो। ब० ! हिंसा० ॥२॥

अपने तन में घाव जो या काँटा गड़ि जाय।
कोई जन्त कहिं काटि ले, कितना दुख तव आय॥
बहिनों ! अपने समान पर पीर गनो। ब० ! हिंसा० ॥३॥

पशु पक्षी बहु जन्तुवन, किसिहु भाँति करि घात ।
सब हत्यारी हिंसकी, तमचरनी❀ कहिलात ॥
बहिनों ! निर्दय को छोड़ि दयालू बनो । ब० ! हिंसा० ॥४

जीव मत मारो बापुर, सब का एकै प्रान ।
हत्या कबहुँ न छूटि है, जो कोटिन सुनौ पुरान ॥
बहिनों ! सद्‌गुरु कबीर की सीख सनो + । ब० ! हिंसा० ॥५

दोहा– तामस करम सो राक्षसी, भूलि न होने देव ।
राजसपन भी अधम है, कछुक कहौं सुनि लेव ॥
राग तान बहु ठाठ पन, चमक चामकी मेव ।
फूहर पन सब दुक्खमय सुनौ भजन से तेव ॥

[भजन]

चली मेला गंगा नहाय मन फुहरी ॥ टेक ॥
बहुतै सिंगार करि कजरा लगाये ।
चोटी उघारि चली ठाठ किहे चमरी ॥१॥
चंचल चलाकी से पुरुषै निहारै ।
साथिन को छोड़ि चली चाटन की लबरी ॥२
पंकजार साड़ी को पहिरे नहाय खुब ।
पुरुपन देखाय अंग पाप भरै सुघरी ॥३
पण्डन पुजावे औ बातै बनावै ।
मेला में घूसि चली अंग सबै कचरी ॥४

टि०—* राक्षसी । + आदेश में मिल जाओ ।

गंगा नहाति ठग गहना को नोचिन ।
रोय रोय गारी से पेट भरै कुधरी ॥५॥
इज्जत औ धर्म गयो गहना नोचायो ।
पाप लादि गठरी 'शरण' आय फुहरी ॥६॥
दोहा—राजस तामस कर्म जेहि, करकस फूहर जान ।
सो सरूप औरौ सुनौ, यह इतिहास विधान ॥

[गृह में सज्जनों और कर्कसा का बर्ताव]

उदाहरण— अवध प्रांत मध्य 'परमेशकुँवर वैश्य' के चार पुत्र—'१ सुरेश, २ सुबेश, ३ महेश, ४ गनेश ये सब दश-दश कक्षा पढ़े थे। इनके खेती का काम अधिक-विस्तरित था, ये धनी तथा मर्यादा सन्पन्न थे। सबके विवाह भी हो गये थे, और बड़े भ्रात-सुरेश के दो पुत्र भी हो चुके थे, स्त्रियाँ भी पाँच-पाँच कक्षा तक सब पढ़ी थीं, तिनमें जेठी अधिक बुद्धिशाली-गम्भीर और गुणागार थी, वे चारों सुशील वर्त्तीय थीं। चारों में सबसे छोटी-शीलवान-गुणागर बुद्धिमती तो ये भी थी किन्तु रोगों से अधिक ग्रसी रहती थी, उसका पुरुष—'गनेश' पढ़ने में प्रखर बुद्धि होने से कुछ ही दिनों में इन्टर करके नौकरी में लग गया और विदेश में रहने लगा, तहाँ साथ ही स्व स्त्री को भी रक्खा था।

यहाँ घर में तीनों भाई, माता-पिता, तीनों स्त्रियाँ ये सब बड़ी सुमति से रहती थीं। सब यथायोग्य एक दूसरे का आदर-लिहाज़ करती थीं, घर का कार्य-व्यवहार बड़े सुविधा से

चला रही थीं और सर्व गृह कार्य बड़ी प्रसन्नता से करती थीं, किसी में आलस-उन्मादता नहीं था, कार्य धन्धा बड़े सुढंग-सुरक्षता से करतीं। भोजन की भी सारी ब्यवस्थायें तथा विधान (कायदा) मानों पाक शिक्षालय से सुशिक्षित होकर आई हैं। सफाई पवित्रता छान बीन रखते हुये 'देव भोजन वत् शुचिता से सुरस भोजन बनाती थीं। खाने-पीने जलपान आदि की नाना वस्तुएँ हर समय संचय रखती थीं, समय-समय यथायोग्य सबको सब चीजैं बड़े हुलास से दी जाती थीं, किसी में भी आपास्वार्थी तथा चटोरी पन नहीं था, सभी उदार तथा धर्मेश थीं, भूखे गरीबों अनाथों की यथासक्ति रक्षक थीं। घर में छोटे बड़े सभी गुरुभक्त थे, भक्ति का कायदा-मर्यादा-सुधर्म सर्व उदारता युक्त उत्साह पूर्वक नित्य होता रहता था, विचारवान त्यागी विवेकी संत व भक्त-सज्जनों का आगमन अधिक करवाया करते थे। संतों सज्जनों द्वारा कथा सत्संग कीर्तन भजन हमेशा करवाते और सप्रेम सभी छोटे बड़े श्रद्धा युत उत्साह पूर्वक श्रवण मनन करते, संत सज्जन अतिथियों के आगमन में मानों साक्षात् भगवान ही आगये, ऐसी प्रसन्नता की उमंग-उत्साह होती और यथायोग्य सेवा-पूजा, सत्कार करते। घर में सासु सहित चारों महिलायें एकत्र होकर आपस में बोल-चाल बर्ताव करतीं, तब उनके मुख से मानों 'कोमल-मधुर फूलों की बर्षा हो रही है, पक्षपात, हठता, शठता तो मानो जानती ही नहीं।

घर में अन्न-वस्त्र, वर्तन, फर्स, दीवारें, भोजन का सीधा सामान और जलपात्र आदि का विधान बड़ी सफाई तथा स्वच्छ रखती थीं। घर में पवित्रता का साज देख कर घर के पुरुष, टोला ग्राम के व नातेदार और संत गुरु तथा भक्त सभी प्रसन्न हो धन्यवाद ही देते थे। देखो! स्वर्ग भी इसी का नाम है।

शीलवती देवियों का परस्पर गृह वर्ताव

[भजन]

शीलवती बहुवैं औ सासू सुखारी ॥टेक॥

सरला सुशील सासु कोमल उदारी,
जैसे जो योग्य होय वर्तैं सँभारी ॥१॥

छोट बड़ी बहुवन को बेटी स्व जानि मानि,
भाँति भाँति सीख देय बुद्धी सुधारी ॥२॥

भूल चूक देखि कभी झुल्सै न खीझै,
धीरज व शांति राखि कारज बतारी ॥३॥

छोट बड़ी सबही लिहाजा से बोल-चाल,
गाली तुकार तजे कोमल उचारी ॥४॥

भली-भली सीख सेवा गुरुवर से लाभ लेयँ,
कबहूँ कुसंग कोइ भूलिउ न धारी ॥५॥

लोक वेद नीती सुसंगत से ज़ानि मानि,
चेतन औ जड़ केरो ज्ञान लहे सारी ॥६॥

हेल मेल सासू पतोहन में दूध जल,
घर में सु सोन बर्षै स्वर्गै दिखारी ॥७॥
ऐसे ही सासू बहुरियन क भाव होय,
गृही में सुख 'शरण' होवै हितारी ॥८॥

और भी कहा है—

दोहा— 'मात पिता बनिता तनुज, जाके सब अनुकुल ।
देह अरोग बिचार धन, यही स्वर्ग मत भूल ॥
(सतोपदेश)

ऐसा उपरोक्त स्वर्ग साज नित्य चलता रहा । कुछ काल पश्चात् चारों भाइयों में मँझले, सुबेश, सँझले-महेश, इन दोनों की स्त्रियाँ-मँझली और सँझली, तिन दोनों का देहान्त हो गया, उनकी जगह पर कुछ ही दिनों में दूसरी स्त्रियाँ ब्याह के आगईं, तिन में मँझली आठ कक्षा तक पढ़ी थी और सँझली पाँच कक्षा तक पढ़ी थी, अब घर में सासु और दूसरी जेठी और दोनों नवीन ये चार महिलायें थीं, छोटी बहू तो परदेश में पुरुष के साथ ही रहती थी ।

ये नवीन दोनों युवतियाँ पढ़ी तो थीं परन्तु इन में कोई ढंग-कायदा मर्यादा का बर्ताव न था । ये दोनों नवीन युवतियाँ विद्यालय की जगह मानो कर्कसालय से कर्कसपन अविद्या ही सीख कर आई हैं । मँझली तो राजसपन में मस्त, दूसरी सँझली-तामसपन में ब्यस्त, पूर्वकी बूढ़ी सासु और जेठी ये दोनों तो अत्यन्त शाँति और सुशील थीं । जब वे नवीन दोनों

कुछ दिन रहीं, तत्पश्चात् अपने-अपने स्वभाव एवं राजस-तामस बर्ताव जाहिर करने लगीं।

दोनों नवीन किंचित विद्या के अभिमान में चूर होकर कुछ दिनों में झगड़ा-फटैती करने लगीं, परन्तु बूढ़ी-सासु और जेठी कुछ भी इन दोनों के बर्ताव पर भला-बुरा न कहती थीं। वे दोनों नवीन बहुयें उदण्डतावश बूढ़ी सासु और पुरुषों से निर्भय निधड़क खुले मुख से कहने लगीं—

[छन्द शैर]

सुनो सभी हम शहर घरों की पढ़ी लिखी खुब चातुर हैं।
नित चूल्हा नहिं फूँकैं गी पर चाट खान में आतुर[१] हैं॥
चौका बर्तन कौन घिसावै ऐसहिं खान में भातुर[२] हैं।
कभी बनाओ तुम भी सब जन हम नौकर नहिं लातुर[३] हैं॥
मोटे कपड़े नहिं पहनैंगी रेशम मलमल साड़ी हो।
अंग रंगन हित लाली चाहिए साड़ि में सोन किनाड़ी हो॥
बड़े सुगंधित तेल अतर दो जेवर सोन नगाड़ी[४] हो।
बिबिधि किसिम के फूल केश हित चप्पल जूते आड़ी[५] हो॥
केश काँट मस्तक कानों के नाक गले रमणूषण[६] हो।
हाथ के कंगन चूड़ी अँगुठी सब सोने के भूषण हो॥
कमर करधनी दुइ कीलो की पाँवन पैंजन पूषण हो।
सुवरण फीता घड़ी सजी हो साज में नहिं कोइ दूषण हो॥

टि०–१ अतिइच्छुक। २ अच्छा लगता। ३ लत-मरुवा। ४ नग जड़े। ५ अड़ीले-एड़ीदार। ६ रमणीक भूषण।

दोहा— पान तमाखू साज सब, सिगरेड डिब्बे दोय।
बिन इन के नहिं चैन मम, ये सब मिलि सुख होय ॥

ऐसे निधड़क बोल और माँग (याचना) सुनकर घर के सभी जन चकित हो दंग रह गये कि हमारे घर ये कैसी औरतें आ गईं ?

आपस में सब भाई विचार करते हैं कि देखो ! इन में न कोई मर्यादा है, न सभ्यता, न कोई काम-धन्धा ही ठीक से कर पातीं, न इन्हें भोजन ही ठीक से बनाना आता है और न कोई अचार-विचार ही है तथा बोलने-चालने का भी तो इन में ढग नहीं है।

हमारे घर में तो खेती का रोजगार है, इज्जत मर्यादा भी भारी है, भक्ति-धर्म की भी मान्यता है, सभी प्रकार के लोगों का आगमन हुआ करता है। भला ! इन दोनों के बर्ताव से घर की मर्यादा कैसे निबहे गी ? ऐसा सोच विचार कर एक दिन घरके सभी पुरुष घर की नवीन दोनों—स्त्रियों के सामने अपने गृह की सारी ब्यवस्थायें-बर्ताव अपने कोमल-विमल वाक्यों से कहने लगे कि-देखो ! हमारे घर की ऐसी-ऐसी ऊँची मर्यादा है, तिसे विधि पूर्वक निबहना है।

सुनो ! तुम दोनों नवीनों को घर की बूढ़ी माता और बड़ी जेठानी के ही मनसाय और उन के स्वाभाव अनुसार सब कुछ करना चाहिए और उन्हीं के तद्वत स्वभाव भी बनाना होगा। पूर्व में जो दोनों—(मँझली-सँझली) मर गई हैं, सो

भी इन्हीं के अनुकूल थीं, वे भी पढ़ी लिखी विदुषी होशियार थीं। यहाँ तुम्हारी केवल विद्या अभिमानी तथा चालाकी नहीं चलेगी। बिना विचार के बोल-चाल तथा माँग-जाँच से कुछ न मिलेगा। हम लोग भी सब पढ़े लिखे हैं, क्या तुम से कम नहीं पढ़े हैं तथा हम लोग सब कुछ शहर-देहात का हाल समझते जानते हैं, घर में मर्यादा ही सब कुछ है. ऐसा कहते हुये बहुत कुछ समझाये, परन्तु राजस-तामसमई तप्त तवे पर सरल वाक्य रूप जल छटक गया, एक बात भी दोनों नवीन युवतियों के हृदय में न ठहरी। अब वे अपनी-अपनी मनसानुसार राजस भोग न पाने का भाव सुन कर दोनों तामसपन का विकराल सरूप धारण कर जलने लगीं और बोलीं—

[लावनी-शैर]

आग लगे मर्याद में तुम्हारी हम निज मन से चालैंगी।
मम मन माँगन पूर न करिहौ दुर्गति तव करि डालैं गी॥
चली जायँगी नइहर अपने वहँ से सब को घालैं गी।
भला चहौ तो मम मन राखौ वरना तव घर टालैं गी ॥१॥
सब जन दुनौं कि लीला देखत कहत ये करकस नारी हैं।
बहु विधि कह कर देखि लिया सब दुष्ट ये बहुत अनारी हैं॥
नहिं मर्याद लाज नहिं तनिकौ कार्य न गृह गुणकारी हैं।
ऐसी करकस कुबुधि बेढंगी शुचि बर्ताव को टारी हैं ॥२॥
दोहा— करकस फूहर कुबुद्धिनी, घर फोरनी दुख खाँच।
तिन के लक्षण कवि कहे, सो प्रत्यक्ष है साँच॥

[कवित्त]

सासु के देखे सिंघनी सी जमुहाई लेत,
ससुर के देखे डाकिनी सी डर पावती।
ननद के देखे नागिनी सी फुफकारै बैठी,
देवर के देखे बाघिनी सी मुख बावती॥
भनत प्रधान मोछैं जारती परोसिनि की,
खशम के देखे खाँव-खाँव कर धावती।
करकसा कसाइन कुबुद्धिनि ये,
कर्म के फूटे घर ऐसी नारि आवती॥

दोहा—यक दिन दोनों नारि के, पुरुष विकल भे जाय।
बैठारे दोउन कहे, क्या मन में तव आय?।
हमरे कुल की रीति को, पालन करनो तोहिं।
भागत तीगत नहिं बनी, बिकी अहौ तुम मोहिं।
सब अधिकारै तोहिं पर, गृही नीति करवाय।
इतनी सख्ती देखिकै, मँझली अब नमि आय।
पुरुष सुबेष निज नारि की, करै युक्ति नित जाँच।
कभी नम्र ह्वै ज्ञान दै, कभी धौंस दुइ पाँच।

[लावनी शैर]

अर्ध वर्ष में जेठानी वत, सातस ह्वै राजसी गई।
काम सीख ली शुचि बर्तावै मन चंचल तजि सुखी भई।
दूसरि तामस भरी कुबुद्धिनि फूहरपन से पूर्ण तई।
अन्न वस्त्र घर करै वो गंदे बोलै गाली नई नई।

समुझाये डाटे नहिं मानै पति 'महेश' से विगड़ गई।
यक दिन भागि चली नइहर को तहँ से भ्रात ने खेद दई॥
कह्यो तु अब तो पुरुष बिकी निज क्यों बिन उनके आय गई।
ताड़न देकर भेज गया वह कहा ऐन रहु दुक्ख छई॥४॥
अब गुस्सा से और विकल है ससुरे नइहर गालि दिये।
ब्याकुल हुये महेश पती तेहि मारि बाँधि गृह बन्द किये॥
पती जेठ औ सासु ससुर जो भ्रात-मात पितु नाम लिये।
गाली बकै मलहु मूत्र करि शिर-कर पटकि के फोड़ लिये॥५॥
लोगन कहनेस गई निकारी अंग घाव से पीर सही।
जबरन पति वहि काम करावै कार्य वस्त्र तन मलिन रही॥
भोगन माँगत नित वह बकती पुरुष सलोने उमँगि सही।
मन कि पुरौती होय कौन विधि? चोरी करि तब मार गही॥६॥
अपन क सुन्दर कहै सदा वह लाज शरम का नाम नही।
टोला गाँव नात कोइ अतिथै निन्दै सबको नाम कही॥
मेला परघर घूमन चहती चाम चामकी बनन चही।
बच्चे पैदा हो हो मरते मोह से रोवत हाय कही॥७॥
औरन पुत्र सलोने देखत डाह से निशिदिन रहत दही।
छिपि छिपि नउतन बहुत मनउती झार फूँक करवाय सही॥
बर्तन चूल्हा लकड़ी पानी अन्न जड़ै या जीव लही।
सबको गाली देती चलती पाँव न धरती शाँति मही॥८॥
जटा हिलाती कर तन झिटकै आँखिन कजरा चमक रही।
नकटा पेटहा कुचर मोछरहा नक्कू तू तू नरन कही॥

मर्यादा नहिं केहु की राखै कोई न उसकी मान सही।
घर फोरन को करै उपाई बात न कोइ फुर मानि दही।
समय समय जब पति को घुड़कत तब कुलटा खुब मार गही।
यद्यपि सज्जन पति महेश पर मलय रगड़ अति वहो दही।
करम भोग गुनि सदा सजग वह कुल यश चाँद में दाग यही।
सभी जानि गे करकस माढ़िगै निंदत वहि का सबै सही।
यक दिन गाँव की बुढ़िया आई समझाई गृह लैन कही।
सुनतै गाली बकत करकसा दौड़ि के तेहि का घरै दही।
हाहाकार अगिनि सब देखतै पकरि करकसा डारि तही।
घर के साथै करकस होलिका जरी झुलसि बहु रोय सही।
घरै बुझन संग वहौ बुझी अब कौन दवा करि? सड़त रही।
तो भी बकना बन्द नहीं करि बहु दिन सड़ि-सड़ि मरी सही।
घरके सब औ लोग पड़ोसी सभी कहैं अब बला ढही।
करकस का पति अब महेश तो स्वप्नेहु नारि न कभी चही।

सो०— नारि दिखत दुखरूप, नित महेश की दृष्टि में।
अब न परूँ अँधकूप, निश्चय शुचि यह धारि उर॥

[लावनी शैर]

यक दिन साथी कहे मित्र तुम अहौ कुलिन पुनि ब्याह करौ।
तब महेश ने कहा मित्र अब गया पाप पुनि नाहिं भरौ।
नारि करकसा दुख भोग्यों निज औरौ लखि सो सुनौ खरौ।

उदाहरण—

यक घर में दोउ पिता पुत्र तहँ नारी चट्टू रहै घरौ।

पिता पुत्र दे कोदौ रोटी स्वयं धान कुटि खाय वरौ ।
चुके धान भरि डेहरि भूसी भय वश कुल्टा चरित खरौ ॥
होतै दोपहर जटा हलावै कूद फाँद लखि पुरुष डरौ ।
पर्यो पाँव कहि कुपित मातु क्यों? कहै भवानी पुजा परौ ॥१४
"पूतैं खाउँ भतारै खाउँ कि डेहरी के धान भुसी कै जावँ" ।
पुरुष पाँव परि कहै हे माई! मारन दोउ का क्यों न दाँव ॥
भूसी कर दो धान भले तुम कहा भूसि ह्वै मैं अब जाँव ।
देखतै भूसी कह्यो धन्य माँ देख्यो मित्र! धूर्त दाँव ॥१५
ो०– कह्यो मित्र तव बात सच, जग चक्कर फँसि भूल ।
सो जन सुखी जो भोग तजि, कबहूँ न भोगै शूल ॥
सज्जन देविन सुयश जग, सुखी रहैं गृह सर्व ।
नारि कर्कसा दुख सह्यो, निंदित भै नशि गर्व ॥
दगुण धरि शुभ साज बनावै । दुर्गुण पाप सो दुखै भोगावै ॥
किसिहु देश कुल माहिं निवासै । देखा देखी धरम न नासै ॥
हु सिङ्गार न पागै कबही । केवल कुल मर्याद में निबही ॥
ाना भोग चटोरी नाखै । खान-पान सादा शुचि राखै ॥
ाच सनीमा शहर बजारै । बरन घुमनि कुटनी तजि जारै ॥
अशन बसन तन घर शुचि राखै । आमद से खर्चा कम चाखै ॥
ोभ मोह तृष्णा पर पुरुषै । त्यागि के धर्म वृत्ति में हरषै ॥
आलस अहंकार तजि दीजै । गाली हँसी न कबहूँ कीजै ॥
भ्राता पिता पुत्र सम देखै । भाव कुदृष्टी कबहुँ न पेखै ॥

॥ गृह में सज्जन और कर्कसा चरित्र समाप्तः ॥

नारियों के अष्ट अवगुण सुधार

[सवैया]

आठ कुलक्षण नारिन के उर स्वामी जी मानस में हैं लेखे।
१ २ ३ ४ ५ ६ ७
सहसा अनृतै चपलता औ माया व भय अविवेक अशौचै देखे॥
८ १ २ ३ ४
निर्दय आठ ये दुर्गुण त्यागि के सत्य गँभीर व शांति सु पेखे।
५ ६ ७ ८
निर्भय ज्ञान पवित्र दया लहि अवगुण त्यागि ये शुभ गुण लेखे॥

भावार्थ—१ सहसा कहिये हरबरी (उतावली) से बि विचारे बोल देना या कार्य कर डालना। ऐसी आदतें ह कर बोल-चाल आदि सारे-कर्त्तव्य विचार युक्त 'गम्भीरता[२]' सोच समझ के बोले या करें। २ अनृत कहिये झुठाई तिसे त्या कर '[१]सत्यता' के प्रण बर्तीय बन के साँच ही बोल-बार्ता करें ३ चपलता कहिए चंचलता, तिसे त्यागकर 'शांत[३] स्थिरता' स्वभाव बनावें। ४ माया कहिये छल-कपट करना, तिसे त्या कर 'निर्छल निष्कपट शुद्ध दृष्टि[४]' रखना चाहिये। ५ भय कहि थोड़े ही में डरभुत्ती-कम्पायमान-अधीर हो जाना ऐसी बात बुद्धि त्यागि के 'सत्कर्त्तव्य सः निर्भयता[५] और दृढ़ता-साह रक्खें'। ६ अविवेक कहिये सत्यासत्य धर्माधर्म, जड़-चेतन आ के ज्ञान रहित एवं अंधकार मय अज्ञान को त्याग कर सत्सं द्वारा 'निर्णय[६]' ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करना चाहिये। ७ अशौ कहिये अपवित्रता-गंदगी स्वभाव व बर्ताव, तिसे हटा

पवित्राचार७ का बर्ताव' रखना चाहिए। ८ निर्दय कहिये हिंसकी स्वभाव क्रूरता, तिसे त्याग कर 'दयालुता, नम्रता, सुशीलता हितैषिता, अहिंसक बर्ताव' हृदयांगम करें। पूर्व अष्ट अवगुणों को सुसज्जन देवियाँ नाक थूक कीचड़ के समान निकाल के फेंक दें, तिन की जगह पर उत्तर के अष्ट शुभ गुणधारी बन जावें। अनादि के दुष्कलंक रहित सुयशी कहलावें।

कुंडलिया—नरक रूप जस देह निज, तैसै समझै अन्य।
बहु परिवार में भार दुख, दुर्गति त्यागै धन्य॥
दुर्गति त्यागै धन्य, कलह न हो दिन रैन की।
बहु परिवारै जन्य, भार परीश्रम शोक बहु॥
दुर्गति निबहब कठिन ह्वै, मन जोगवत दिन जाय।
कितनहुँ घर धन तहुँ कमी, जीवन हाय! समय॥

दोहा—लाभ न दें कोइ पुत्र जग, जब दें चिंता भार।
निज ही कर्मन सुक्ख मिलि, नहिं तौ दुक्ख अपार॥

सोरठा—पुत्र सदा दुख दाय, गर्भ क असहन भार दै।
जन्मत मौत कराय, भङ्गिन नित बननै परत॥
करम धरम ह्वै भङ्ग, मन औ तन का भार नित।
पुत्र लुप्त तिय अङ्ग, मारि भगावत मातु कहँ॥

बिरले तनुज मातु कहँ मानत। अधिकै पुत्र मातु दुख सानत॥
अपनै पुण्य करम जब होई। तबै अन्य से सुख लहि सोई॥
मूढ़ मोह बश रोवत निशि दिन। कर्म सुधार ये ध्यान न केहु छिन॥
पशुपन तजि कुछ होश करीजै। गुरु सतसग वेद मग लीजै॥

मित परिवार सुशिक्षित होवै । पशुवत भोग पर्श नहिं जोवै
शास्त्र विधान पर्श में राखै । यक दो पुत्र भये पर नाखै
गर्भ ऋतू तीरथ ब्रत पाहुन । गुरु गृह बालक क्षीर पियाहुन
ऐसे समयन पर्श न कीजै । शनै शनै आसक्ती छीजै
कबहुँ कुदृष्टि कुभाव न लावै । जितनै पर्श तजै सुख पावै ।

दोहा—बुरे कर्म से लाज करि, शुभ सुसंग चित देय ।
त्यागी पारखि संत शुचि, खोजि के शिक्षा लेय ॥

बिधवा नित ब्रह्मचर्य को पालैं । भक्ति नियम परलोक सँभालैं
औसर मोक्ष काज शुभ जानै । जग प्रपंच में भूलि न सानै ।
ज्ञान कथा में रुचि नित राखै । सुनै ध्यान धरि ज्ञान को चाखै ।
नात गोत्र घर गाँव परोसी । यथायोग्य वर्ति रहै अदोषी ।
कटु अशलील कुशील तजावै । दया तोष सद् शील सजावै ।
हिलमिल मृदु बच शुभ गुण सीखै । स्व-पर हितैषी धर्महिं चीखै
घर बर्तन पट अंग सफाई । शौच क्रिया शुचि सातस लाई ।
हिंसा नशा कुसंग कुविद्या । शौक शान तजि देय अविद्या ।
धरम अंग गहि शोभा पावै । निम्न भजन की सीख सजावै ।

[भजन]

बहिनों ! पहिनो नी अनोखो चोखो ज्ञान गजरो ॥ टेक ॥
संगति साधु की उपवन जावो, सद उपदेश प्रसून ले आवो ।
वृत्ति के तार में ताहि पुहाओ, फुन्दा श्रद्धा सहित लगावो ॥
प्रभु को ध्यान गजरो । बहिनों ! ॥ १ ॥

चित बिक्षेप को मैल निवारी, तप को कुम कुम मस्तक धारी।
ओढ़ो सत्य बृत्ति की सारी, जामें संयम नियम किनारी॥
शास्त्र प्रमान गजरो। बहिनों! ॥ २ ॥

सत्य संकल्प के केश गुथावो, मेंहदी दान से हाथ रचावो।
सुरमा नयन विवेक लगावो, जासे सत्य मिथ्या लखि पावो॥
पुरुष प्रधान गजरो। बहिनों! ॥ ३ ॥

गहना विद्या के गढ़वावो, तिनको पहिर सिंगार बनावो।
नवधा भक्ति से पीव रिझावो, तब तुम सुन्दरि नारि कहावो॥
परम सुजान गजरो। बहिनों! ॥ ४ ॥

धर्मिनि ऐसो गजरो पायो, नश्वर भूषण दूरि बहायो।
ह्वै यम शंकित शीश नवायो, लखि मुनि जन को मन ललचायो॥
प्रवर महान गजरो। बहिनों! ॥ ५ ॥

दोहा– राजस ठाठ शृङ्गार तजि, सातस साज सँवार।
क्षणिक देह का मान हनि, भक्ति ज्ञान उर धार॥

[भजन]

अरे मन मुसाफिर! निकलना पड़ेगा,
काया कुटी खाली करना पड़ेगा ॥टेक॥
भौतिक ये मंदिर में क्यों तू भुलाये,
जिस दिन तुझे घर क मालिक भगाये।
किराया तुझे उसका देना पड़ेगा। काया कुटी ··· ॥ १ ॥

सत्संग सरोवर को जब तू चलेगा,
पूछैं गे सतगुरु तो क्या तू कहेगा ?
हंसों में बगुला तु बनि के रहेगा। काया कुटी ··· ॥ २ ॥
भक्ती के मारग में तू ना चलेगा,
सद्ग्रंथ पढ़ने में आलस करेगा।
हो करके श्वान तुझे भुकना पड़ेगा। काया कुटी ··· ॥ ३ ॥
आयेगी नोटिस न होगी जमानत,
पल्ले में कुछ भी न होगी अमानत।
कर्मों के वश नर्क जाना पड़ेगा। काया कुटी ··· ॥ ४ ॥
कहते हैं गुरुवर फिरेगा तु रोता,
लख चौरासी में खायेगा गोता।
फिर फिर जनम और मरना पड़ेगा। काया कुटी ··· ॥ ५ ॥
'अनुरागदास' सब मोहै हटाओ,
बीजक के पढ़ने में मन को लगाओ।
हो करके ज्ञान तुझे मुक्ती मिलेगा। काया कुटी ··· ॥ ६ ॥

दोहा—बाल बालिका नारि नर, विद्या शुभ गुण धारि।
धर्म सुसंगति प्रेम यश, अहं मान मन मारि॥
गृहीधर्म में जाल बहु, अरुझनि भाँति अनेक।
तेहि से सुलझाने हितै, युक्ति कथन बहुतेक॥
जैसे देवी प्रभा ने, कही निज चरित सुझाव।
विद्यादेवी सुनि गही, धरौ गृही शुचि भाव॥

गृह वर्ताव–प्रभादेवी और विद्यादेवी का समागम

उदाहरण— [लावनी शैर]

सीतापुर के दक्षिण तीरथ 'मिश्रित, संतन मेला है।
नाना मत के संत भक्त शुचि तहँ करि धर्म उजेला है॥
उस उजेर में बहु नर-नारी सुसंग से ज्ञान भरेला है।
अवध प्रांत से दो विदुषी तहँ मिलि मन दोउ यक मेला है॥१॥
इक्ठी रहि भइ पूछ जाँच तब निकट गोत्र दोउ मेला है।
पुनि साथै भंडारा दोउ दै गहि सुसंग तम ठेला है॥
संतन सेवा दरश ज्ञान लहि लौटीं घरै बसेला है।
प्रेम परस्पर कारण परभा विद्यै बुला निजेला है॥ २॥

दोहा– परभा का संदेश सुनि, विद्या बहु सुख मानि।
चली उमँगि निज पुत्र लै, पहुँचि प्रभा गृह आनि॥
नित ही इक्ठे कुछ दिवस, रहि लखि प्रभा की रीति।
सासु ससुर पति जेठ सब, खुशी प्रभा से प्रीति[1]॥
छोट बड़े सब ही कुटुम, प्रभा के रहि अनुकूल।
जोर जबर केहु से नहीं, समता भरि चहुँकूल[2]॥

यक दिन बैठीं दोउ एकन्त में ह्वै निचिन्त निज स्थिर थी।
विद्या बोली बहेन प्रभाजी तव घर रीति सुहातिर थी॥
सब कुटुम्ब नित वश में तुम्हरे कौन तपो बल आनी थी।
हठ करि पूछौं बहेन आप से जानन हित प्रण ठानी थी॥३॥

टि०—१ विश्वास। २ चारों तरफ।

आनकान[१] की प्रभा ने बहुतै पर विद्या नहिं मानी थी।
करी निवेदन कहौ सभी कुछ सुनन चाव उर सानी थी॥
विद्या जब केहु विधि नहिं मानी तबौ कहति सकुचानी थी।
बहुत सकुच हो निज गुण कहतै हर्षै पर गुण गानी थी॥४

दोहा—बहुत कहेउँ नहिं मानती, सुनो मोर बर्ताव।
पती जेठ बड़ लघु जिते, सेवकनी गृह भाव॥
सब मेरे मैं सबन की, करनो शुचि वर्तमान।
केहू से नहिं हठ करूँ, मन पियार सब मान॥
शक्ति जहाँ तक तन चलै, आलस कभी न लाउँ।
इन्द्रिन चाट व मान तजि, सबै मान दै आउँ॥

सासु ससुर औ पती जेठ से कड़ा बचन नहिं बोलि कभी।
निन्दा चुगुली करूँ न केहु की यथा कहूँ शुचि बात सभी॥
हठ कर कोई झूँठ कहे तो जानत चुप रहि तौलि तभी।
कभी उरहना झटक न देऊँ न्याय नम्र मधु कहूँ कभी॥५
नहीं लड़ाऊँ जबाँ किसी से समता क्षमा को धारि जभी।
काम करत गृह आवन पति लखि वहि तजि उन रुख करूँ सभी॥
ठण्डी हो तो आग तपाऊँ उष्ण हो पंखा हवा तभी।
गुस्सा गर्मी देखि तिन्हैं जब नम्र चुप्प धरि शांति लभी॥६॥
सासु जेठानी पतिसे पहिले सुबह उठौं गुरु ध्यान तभी।
लोटा जल लै शौच क्रिया करि गृही कार्य पुनि लागि अभी॥

टि०—१ टालाटूली।

शुचि जल ला पुनि झाड़ू चौका बर्तन माँजि निदाग सभी।
कभी पटैती करूँ न केहु की काम करूँ जो आय तभी ॥७॥
भीतर बाहर लीपि पोति भित झाड़ू दूँ नित भोर जभी।
जहाँ तहाँ पड़ि बस्तु न राखूँ जहँ चहिये जो राखि सभी ॥
पुनि जलपान औ भोजन विधिवत करि प्रबंध रचि समय तभी।
राखि पवित्राचार भली विधि हिंसा मलिन न भोज कभी ॥८॥
दोहा-भोजन पारुस में कभी, पक्षपात नहिं लाउँ।
सबको सब कुछ देत रुचि, छिपा रखूँ नहिं ठाउँ ॥
खिला पिला कर सबके पीछे जो कुछ शुचि हो खाउँ तभी।
केहु प्रकार का नशा न धारूँ आसिष मद्य विनाउँ सभी ॥
सदा सादगी देह निबाहूँ रज तम तजि शुचि राखि लभी।
सीना पोना और कार्य्य गुण करूँ सिखाऊँ नित्य सभी ॥९॥
बस्त्र अभूषण नहिं मागूँ पति स्वादन की नहिं चाह कभी।
मेला नाच सनीम पाप गुनि भेटौं गुरुपद मिलैं जभी ॥
पलंग बिछौना औरो कपड़े धोय साफ़ करि रखौं यभी।
खान पियन की सब सामग्री रखि तय्यारै सदा सभी ॥१०
दो०- ऐसी करतब धारि के, रहूँ मगन गुरु ध्यान।
ग्रंथै गुरु की राखि ढिग, पढ़ूँ हृदय रखि ज्ञान ॥
बूढ़े बड़ों के घर आते लखि खड़ी एकन्त हो जाती हूँ।
फिर जैसा कुछ योग्य तहाँ हो वही कार्य लग जाती हूँ ॥
ससुर जेठ का मुख नहिं ताकूँ अदब से सेवा लाती हूँ।
सासु जेठानि कि अनमन बातैं पुरुषन नहीं लगाती हूँ ॥११

सुनी सुनाई मन मोटाव वच कहूँ न केहु झगड़ाती हूँ ।
नहिं कंजूसी ब्यर्थ फैल से पैसा नहीं बहाती हूँ ॥
खान पियन औ दवा वस्त्र हित सूमपना नहिं लाती हूँ ।
संत सेव सद्धर्म कार्य में सदा उदार रहाती हूँ ॥१
कुल्टा औ ब्यभिचारिनि करकस दिखते बहुत दुराती हूँ ।
देखँ सुनूँ न तिन की बातैं पापिनि दिखत घिनाती हूँ ॥
बूढ़ी बड़ी व लघु भामिनि कोइ सज्जन लखि बैठाती हूँ ।
करि प्रणाम नमि कुशल पूछि के खान पियन शुचि लाती हूँ ॥१

दोहा– टोला ग्राम परोसनी, बतूँ तिन मन देखि ।
हेलमेल व्यवहार रखि, करूँ प्रेम जस लेखि ॥

टोला म केहु के कष्ट पड़ै तहँ अज्ञा बड़ेन् ले जाती हूँ ।
जो कुछ मुझसे योग्य बनत सो करि सेवा पुनि आती हूँ ॥
दिल से हित मैं सबका चाहूँ अनख न केहु से लाती हूँ ।
लोक प्रलोकै हित की बातैं पूछै तेहि बतलाती हूँ ॥१
लघु नन्दै देवरानिन से मैं प्यार प्रेम बर्ताती हूँ ।
रुष्ट न होने देऊँ केहु विधि हुकुम न कभी चलाती हूँ ॥
नम्र भाव से कहूँ कछू भी पर उनहिन कड़ी सहाती हूँ ।
इनको मैं निज तनुजा जानूँ धर्माधर्म सुझाती हूँ ॥१
बेटी बधुवन यकसम जानूँ शुभ गुण कार्य सिखाती हूँ ।
डाट डपट औ गाली बकना ऐंठ बरर नहिं लाती हूँ ॥
सरल वाक्य सह युक्ति समय से तिन मन रखि बरताती हूँ ।
सासु ससुर लघु बड़ेन से बर्तब गृही नीति सिखलाती हूँ ॥१

सब बच्चों में सम बर्तावै नहिं पछपात कराती हूँ।
किन्तु जेठानी देवर बच्चन प्रथमैं तिन दुलराती हूँ॥
खान पान दै वस्त्र साज औ सभी प्रबंध बनाती हूँ।
पीछे से अपने बच्चन को योग्य व्यवस्था लाती हूँ॥१७

दोहा– सभी व्यवस्था बालकन, मातन के आधीन।
सो सब शुद्ध राखि के, शिक्षत करि परबीन॥

बच्चों के शिक्षा देने में कड़ी नजर बरताती हूँ।
बात करत में हँसूँ न तिन से योग्य कार्य करवाती हूँ॥
गाली मार देउँ नहिं तिन को कड़ा दण्ड दिलवाती हूँ।
मन हतास हो जेहि विधि भय तिन वह विधान करवाती हूँ॥१८
छोटे बच्चन साफ रखूँ नित बड़ेन शौच सिखलाती हूँ।
गाली झगड़ा नहिं सीखन दूँ शाँति सुमति बतलाती हूँ॥
कुसंग न होने देउँ बालकन मर्यादा सिखलाही हूँ।
अदब कायदा बोलब बैठब ट्रेनिङ्ग नित दिलवाती हूँ॥१९
जो कोइ बच्चन कुमग सिखावत तिसे अभाव कराती हूँ।
हिंसा नशा क त्याग भली विधि बहु सिंगार दुराती हूँ॥
गृहस्थी औ सब राज काज को ग्रंथन से पढ़वाती हूँ।
समय समय पर अपने सब हित सत्संग नियम बनाती हूँ॥२०

श्लोक– दृष्टि पूतं न्यस्त पादं, वस्त्र पूतं जलंपिबेत्।
शास्त्र पूतं वदेद्वाचां, मनः पूतं समाचरेत॥

खान पियन सब देह ब्यवस्थन पवित्राचार रखाई हूँ।
ठाठ, सिंगार औ मलिन तमो पन मन कुमार्ग नहिं जाई हूँ॥

छल्ला मुन्दरी आदि घृणित लखि तन मन साफ हिताई हूँ ।
सासु ससुर की मात पिता वत् सेव सु अज्ञा लाई हूँ ॥२
बाहर से जो वस्तू आती उसे नहीं अपनाती हूँ ।
यथायोग्य सब पा जाते तब सब से मध्य गहाती हूँ ॥
निज पर हेतै चुरा छिपा के कुछ भी नहीं मँगाती हूँ ।
निज कुटुम्ब या पर लोगों की कभी न वस्तु चुराती हूँ ॥२
अपनी वस्तु कोइ योग्य हेत से माँगै तो दे आती हूँ ।
दुसरे की कोइ प्रिय वस्तु को माँगन में सकुचाती हूँ ॥
अपने कर्म पुरुषारथ से जो धन-जन घर तुष्टाती हूँ ।
मान अपमान औ भूँख प्यास में सहन शक्ति पुष्टाती हूँ ॥
पतिव्रता के नियम शास्त्र विधि जहँ तक हो अपनाती हूँ ।
यंत्र मंत्र औ दुआ तवीजौ देवतन भरम न लाती हूँ ॥
ठगुवा और बनवटी साधुन तिन के निकट न जातीहूँ ।
निर्णय संत गुरू जो सच्चे तिनहिन 'शरण' निभाती हूँ ॥२
विद्या बहेन तु अग्रह ठानी कह्यों जैस वर्ताती हूँ ।
निज गुण कहना पाप समझती पर प्रेम तुम्हारा लाती हूँ ॥
अच्छा बुरा जो गुण मेरे में नहिं अभिमान बनाती हूँ ।
सबहिं मान दै रहूँ अमानी, यहि विधि थीर गहाती हूँ ॥२

[त्रिभंगी छन्द]

यह चरित एकन्तै, प्रभा कहन्तै, सुनि कै विद्या मोद लही ।
पुनि विद्या नमतै,प्रभा सकुचतै, तहूँ उमँगि नमि चरण गही ॥

कहि हे वर बहिनी ! ज्ञान सुझौनी ! महिमा तव मम हृदय लही ।
मम हित भगिनी, कष्ट सहौनी, अब मैं तव गुण गहन चही ॥
दोहा— इतना कहि सुनि चलि परीं, गृह सबंध में जाय ।
जो कुछ करनों कार्य शुचि, सविधि सुमग बताय ॥
कुछ दिन परभा के घरै, विद्या रहि गुण सीख ।
यथा गृही गुण धर्म गहि, गई प्रभा नमि पीख ॥
सुनि गुनि इस सम्बाद को, जो नारी चित लाय ।
वर्तै प्रभा कि धारना, अवश्य सुक्ख वह पाय ॥
सम बुद्धिक जो नारियाँ, विद्या वत रुचि ठान ।
जिज्ञासा गुण ग्राह्य बनि, सुबुधिन संग गुण लान ॥
गृह में वर्तब सविधि कहि, गहौ सुशीला भाव ।
औररहु भक्ति विधान को, कहब अग्र सुनु चाव ॥
(प्रभादेवी और विद्यादेवी का समागम समाप्तः)

[उत्तम भक्ति विधान वर्णन]

ृही धर्म संक्षिप्त बखाना । सो सब स्वर्ग रूप सुख नाना ॥
ाहि सुख में कभि मद नहिं लावै । किन्तु बिचार से अहं मिटावै ॥
ाहि सुधर्म उदार से सुख भो । तेहि को राखो नित जीवन लो ॥
हँ तक शक्ति न करो ढिलाई । अहं लोभ करि दुख पुनि आई ॥
त्तम धर्म भक्ति सह कीजै । नम्र शील गहि सुसंग करीजै ॥
संग कुसंग दोई हैं जग में । बंध निर्बंध के डारत मग में ॥
ानि बानि में कुसंग धँसावै । सतसंगत दोउ जाल नशावै ॥
ते सुसंग भक्ति गहि साँचा । जगत राग दुख मय सब खाँचा ॥

भक्ति बिना गृह कार्य हैं ऐसे। लवण बिना बहु ब्यंजन जैसे।
"भक्ति रहित नर पशू समाना। है प्रत्यक्ष बिन पुच्छ बिषाना"।
(गुरुमहिमा

[भजन]

कंठी बिना तन लागै न नीको।
भक्ती बिना नर लागै पशू को॥ टेक॥

सोरहौ*सिंगार कियो यह तन कै।सुन्दरताई गई है नाक कटी को।
विविधि भाँति के ब्यंजन बनावै। लौन बिना सब लागै फीको।
बिना ब्याह के गर्भ रहै जो। लागै कलंक सही युवती को।
संत कहैं सुनु मूढ़ अभागे। बिन सतगुरु के चैन न जी को।

गृह सुख स्वर्ग ना शिपुनि नर्का। भक्ति अमर पद जग दुख तर्का।
ताते शुचि गृह में वर भक्ती। जेहि भक्ती में सब ही शक्ती।
नारि पुरुष या बिधवा कोई। आश्रम वरण जाति कोउ होई।
भक्ति सुसंग सबहिं चहि धरनो। दुक्ख मिटाय सदा सुख भरनो।
भक्ति में लक्ष सदा निज़ दीजै। दगाबाज मन कहा न कीजै।
हरक्षण उर में दृष्टि से देखै। त्रय दुख भरे जगत नित पेखै।
चक्र हिंडोला चलत अनादी। बिना भक्ति दुख सहैं भोगादी।
प्रेम नेम औ धर्म उदारा। शुद्धाचार ये भक्ति अधारा।

टि०—* स्त्रियों के सोरह सिंगार– १ स्नान, २ वस्त्र, ३ आँज
४ तिलक बिन्दी, ५ पुष्पहार, ६ कुण्डल, ७ ताम्बुल, ८
९ अंगिया, १० करधन, ११ कंगन, १२ पायल, १३ मूल, १४ विछि
१५ सिंदूर, १६ वेणी।

केवल धर्म से माया भोगा। भक्ति नियम से मुक्ति सुयोगा ॥
सो प्रमाण 'भवयान, में देखो। भक्ति भरण के शब्द से लेखो ॥

[शब्द]

करै गुरु भक्ति ज्ञान धन लूटै ॥ टेक ॥
धरम करै तेहि सुख को भोगै, पुनः देह धरि जूटै।
भक्ति किहे से मुक्ति को लेवै, जग व्यवहार न छूटै ॥१॥
छोड़ि कुसंग सुसंग में लागै, मिथ्या खर्च से छूटै।
होवै शक्ति विफल नहिं तन की, निज कारज मन पूटै ॥२॥
तृष्णा रहित सो सुख को पावै, यकरस चाल अटूटै।
यश होवै तेहि भलेपने का, मग अधरम नहिं लूटै ॥३॥
देह स्वभाव शुद्ध सब होवै, जिव अज्ञान न कूटै।
कहैं कबीर सुफल तेहि काया, जनम मरण तेहि टूटै ॥४॥

[सच्ची मुमुक्षुता शैर]

हर क्षण जग को दुख मय देखै, बंधन सबही भारा है।
तेहि से छूटूँ केहि विधि जल्दी, यह उत्साह सदारा है ॥
पक्षपात नहिं जग-मग राखै, कहीं न जग छुटकारा है।
सत्य निजै हित सत्य न्याय गहि, शुभ गुण रखै अधारा है ॥

दोहा— मानस रोग के मिटन हित, सच्चे सद्गुरु पेखि।
जो भ्रम गत निर्दोष हैं, सदा विरति शुचि देखि ॥
रहनि कथन सद परखपद, भ्रम गत शुभगुण पोष।
ऐसे मोक्ष धनेश पग, नम्र अर्पि मन दोष ॥

तन मन धन गुरु अर्पण कीजै। भक्ति से मोक्ष अमर पद लीजै ॥
नाशमान माया कुल विद्या। राज ऐश्वर्य कुभोग अविद्या ॥

इनका भूलिउ अहं न राखै । अति सनम्र गुरु सेवन चाखै।
प्रेम सहित गुरु दर्शन कीजै । चन्द्र चकोर के न्याय लहीजै।
यही भाव गुरु दर्शन जावै । फूल माल परसाद चढ़ावै।
गुरुपद अर्पि के शीश नवावै । कर धरि त्रय बन्दगी बजावै।
गुरु सनमुख कर जोरि के भेंटै । विनयआर्ति करि पग में लेटै।
सेव प्रेम उर उमँग सदाई । कबहूँ भूलि न कपट रहाई।
स्वाती नखत पपीहा जैसे । गुरु बचनामृत पीवै तैसे।
चलत फिरत मग सोवत जागत । आठो पहर बचन गुरु पागत।
दोहा- जैसे भोगी जगत के, मस्त रहत विष भोग ।
ताहि त्यागि गुरु बोध में, मग्न ध्यान तजि शोग ॥
नित सत्संग क नेम करीजै । जो कुछ सुना सो उरहिं लहीजै।
गुरु पारख के ग्रंथ सदाई । पाठ पठन नित नेम गहाई।
जस सेवरी दृढ़ राम उपासक । तैसे गुरु पद सेव पिपासक।
'मंदालसा' 'सुमित्रा' माता । पुत्रन भक्ति ज्ञान क्री दाता।
तैसे निज आश्रइन बतावै । भक्ति मुक्ति में सदा लगावै।
सदा एक सम बुद्धि रखीजै । कल्पित भ्रम सुख भास न लीजै।
जड़ चेतन से अपर न कोई । भ्रम बश जिव भटकत दुख रोई।
उत्पति नाश रहित जड़ चारो । तिनहिं शक्ति से सृष्टि पसारो।
चव खानिन का सब व्यहारा । जीवन कर्म अधीन अहारा।
चिज्जड़ भेद यथार्थ न जानै । भूल भरम अनुमान में सानै।
दोहा- भूत भवानी देवता, नट नरसिंह अनुमान ।
झार फूँक तावीज भ्रम, तजि लहि गुरुपद ठान ॥

[सवैया]

व्रत[१] को अर्थ बरउवा पर्हेज सो दुर्गुण और कुसंग को त्यागै।
तीरथ[२] जानो सुसंगत संतन तन मन पाप से करते अदागै ॥
ईश्वर देव सदा गुरु जानै त्रय विधि पूजि के शुभगुण पागै।
भर्म को त्यागि प्रत्यक्ष को सेवै सत्य सुलक्षण 'शरणै' जागै ॥

दोहा– गुरु सत्संग से भेद सब, परखै ज्ञान अधार।
खानि बानि भ्रम त्यागि के, निज पद तृप्त सुधार ॥
जस सेवरी गति मुक्ति हित, राम चरण में लीन।
नवधा भक्ती अंग गहि, सुफल जनम वह कीन ॥
सो सेवरी की कथा विधि, सुनौ सभी चित लाय।
भक्ति नियम सो गहे बिन, कभी मुक्ति नहिं पाय ॥

सेवरी का भाव-भक्ति तथा नवधा भक्ति वर्णन

[सेवरी की कथा]

सुना जाता है कि सेवरी पूर्व जन्म में एक राज पुत्री थी। वह एक बार अपने कुटुम्बी जनों के साथ-साथ गंगा स्नान को गई, वहाँ घाट पर अपने खीमा (तम्बू) में रनिवास के साथ पर्दे सहित केन्द्र में रहती थी। वह राजपुत्री सब रनिवास के साथ ही स्नान को जाती और तिनके साथ ही पर्दे सहित खीमा में ही रहने पाती थी, कहीं भी यत्र-तत्र

टि०—१ सच्चा व्रत– दो०– काम क्रोध अरु लोभ मद, मिथ्या छल अभिमान ! इन से मन को रोकिबौ, साँचो व्रत पहिचान ॥ (सतोप०)

२ दो०–संतन की वाणी सुनै, प्रेम सहित जो कोय।
गंगा आदि सब तीर्थ फल, बिन स्नानहि होय ॥

स्वतंत्रता से निकल नहीं सकती थी। उसे कहीं भी कथा-वार्ता, संत दर्शन, सत्संग का संयोग नहीं होने पाता। वहीं घाट पर ही दूर से बाहर देखती थी कि बहुत सी सुशील बालिकायें गौ आदि चराने वाली स्वतंत्रता से गंगाजी में स्नान करतीं और वहीं पर सप्रेम संत-महात्माओं के सनमुख जाकर जंगल से लाये हुए सुन्दर सुरस फल-फूल अर्पण कर प्रणाम करतीं तथा उनका सत्संग-कथा सुनतीं। इस प्रकार कई दिनों तक तिन बालिकाओं को संत सत्संग-सेवा करते दूर से वह राजपुत्री नित्य देखती रही। अपने प्रति हृदय में बड़ी ग्लानि करती तथा मन ही मन कहती कि मैं बड़ी अभागिनी हूँ और ये बालिकाएँ बड़ी भाग्यशाली हैं कि देखो! कितनी स्वतंत्रता-आज़ादी से विधि पूर्वक स्नान करके सप्रेम जा-जा के नित्य संत दर्शन-सेवा-कथा वार्ता सत्संग भक्ती करती हैं, इन्हीं का मनुष्य जीवन सफल है।

एक मेरा अभागी जीवन! कि मुझे जेलियों वत् कारागार में रहना पड़ता है, न तो कहीं संतों के दर्शन करने पाती, न कहीं कथा-सत्संग का शब्द मेरे कानों में पड़ने पाता और न कुछ सेवा पूजा ही कर पाती। हाय! मेरा जीवन बिल्कुल पशुवत् बद्र पोषण मात्र ब्यर्थ है। अब वह राजपुत्री मनोभाव सहित कहती है कि हे गंगा महारानी! हे संत महात्माओ! मेरी कोटिसः विनय है कि अब मैं मर कर उन गौ आदि चराने वाली बालिकाओं के समान घरों में जन्म पाऊँ, तहाँ सं

दर्शन, सेवा सत्संग-भक्ति का सौभाग्य प्राप्त करूँ। अब यही पूर्वोक्त भावना रात दिन तिस राजपुत्री के हृदय में प्रेरित रहती, इसी सद्भावना में नित्य निमग्न रहते हुये तिस का देहान्त हो गया।

अब वह राजकुमारी यथाशक्ति सः कर्त्तव्य भक्ति संस्कार की प्रबलता से एक धनाढ्य खटिक के घरमें पैदा हुई। उस पुत्री का नाम—'सेवरी' रक्खा गया। वह पूर्व संस्कारी खटिक सुपुत्री बचपन से ही स्वाभाविक बड़ी शुद्धता-पवित्रता से रहते-रहते जब विवाह योग्य हुई और उसके पिता शादी तय कर दिये तथा विवाह हेत सामग्रियाँ एकात्रित करने लगे, तहाँ घर में बहुत से बकरे-शूकर आदि जानवर खरीद कर द्वारपर बाँधे गये। एक दिन लड़की ने माता से पुछा कि हे माता जी! ये बकरे बकरी, भेड़, शूअर आदि बहुत से जानवर क्यों बाँधे गये हैं? उसकी माता ने कहा–बेटी! ये सब ज़ानवर तुम्हारे ब्याह में काटे जायँगे और इनका मांस पकाकर तुम्हारे ब्याह में आने वालों को खिलाया जायगा। इस बात को सुनकर वह पूर्व संस्कारी बालिका बहुत कम्पायमान हुई, अब वह उस जगह से हटकर अकेले बैठ के सोचती और चिंतित होती है कि—हाय! हमारे विवाह में इतने जानवरों का प्राण घात किया जायगा। हाय! हाय!! बड़ी हत्या होगी, हमारा ब्याह तो बहुत पाप रूप है, हाय! क्या करूँ? इस प्रबल शोकित भावना से उस कुमारी को बहुत ही अशांतिता-बेचैनी प्राप्त हुई।

[भजन]

सुनि के शादी की खबरिया घरसे भागी सेवरी ॥ टेक ॥
सेवरी नारी ज़ाति कि भिल्लिन, सुनिये ध्यान लगाई।
जब शादी का दिन आया, तब सेवरी दिल घबराई ॥
देखें भेड़ बकरिया बाँधे, घर के प्राणी सेवरी ॥
भेड़ बकरिया बँधी देखकर, सेवरी अपने द्वारे।
लगी पूँछने यह क्या होंगी ? भेड़ बकरिया सारी ॥
माता सेवरी को सुनवे, होगी शादी तुम्हरी ॥
कालिह बराती सजिके तुम्हरे, दरवाजे पर अइहैं।
मारी जइहैं भेंड़ बकरियाँ, इन्हें बराती खइहैं ॥
सुनि के माता की बचनियाँ, सेवरी चिहुँक परी ॥
यहाँ को रहना ठीक नहीं है. अपने दिल ठहराई।
घर से अपने निकल पड़ी है, मोह माया बिसराई ॥
धइली जंगल की डगरिया, तजि के अपनी झोपरी ॥
कहते बचन लाल यह सुनलो, सज्जन ध्यान लगाई।
ऋषि मतंग मिले सेवरी को, दिल की तपन बुझाई ॥
देहलै सेवरी को ऊबारी, दरशन दैके तब हरी ॥

वह पुण्यात्मा-शीलवती खटिक पुत्री-'सेवरी' दूसरे ही दि घोर अंधेरी रात में उठके प्राणों पर आकर अपने घर से भा चली, तमाम जंगल लाँघते हुये रातोरात बहुत दूर निक गई। यहाँ अब सवेरा होने पर एक पहर दिन चढ़ने त वह लड़की घर वालोंको जब न देख पड़ी तब तो उसकी खोज

होने लगी किन्तु वह न मिली, अब ब्याह का सब तमाशा भंग हो गया। वह सेवरी नामक लड़की जंगलोजंगल घूमते फिरते यत्र-तत्र ऋषि-मुनियों से भेंट की और उनके आश्रमों पर कुछ रह-रह कर सप्रेम सेवा सत्संगद्वारा बहुत कुछ धर्म-ज्ञान अनुभव प्राप्त करली। वह सेवरी नित्य यथा बुद्धि भजन-ध्यान-संत पूजन में खूब निमग्न रहा करती। अब तो संसार का सारा चरित्र उसे महा जहरवत दृश्य हो रहा है। कुछ दिनों के बाद महात्माओं की शिक्षा सलाह द्वारा वह सेवरी पंपासर पहुँची, वहाँ वह 'मतंग ऋषि' के चरणों की शिष्य हो गई और पूर्ण ब्रह्मचर्यव्रत सहित सर्व पवित्राचार रखते हुये आठो पहर नियमतः विधि पूर्वक भजन-ध्यान-सत्संग सेवा में तल्लीन रहती थी, पूर्व जन्म की सच्ची मनो कामना आज यथार्थतः पूर्ण हो रही है। कुछ दिन पश्चात् 'गुरु मतंग ऋषि, कहे कि हे भजन भाविका सेवरी! अब मैं जर-जर हो गया और ये शरीर बदलने ही वाला है। हमारे देहान्त पश्चात् भी तू यहीं रहकर सनिष्ठ नित्य विधिवत् भजन-ध्यान में एक सम लगी रहना, कुछ ही दिनों बाद 'भगवान-रामजी' यहीं आवेंगे, उनके दर्शन सेवा सत्संग से तुम्हारा पूर्णोद्धार हो जावेगा।

कुछ समय पश्चात् अब 'मतंग ऋषि' का शरीरान्त हो गया। तत्पश्चात् गुरु बचनानुसार वह सेवरी भक्ति परायण रहा करती, और भगवान के आगमन की आशा लगाये हुये

विविधि भाँति नाम जपते-चपते आने की बाट जोह रही है। भगवान के दर्शनार्थ विरही हो भजन-कीर्तन गाया करती, इसी प्रकार नाम जपते-जपते बहुत दिन बीतने पर सेवरी यह कीतन गाते-गाते निमग्न हो रही है—

[कीर्तन]

रामा रामा रटते रटते बीती री उमरिया।
रघुकुल नंदन कब आवोगे भिलनी की नगरिया ॥ टेक ॥
मैं सेवरी भिलिनी हूँ भगवन्, भजन भाव ना जानूँ रे।
राम तेरे दर्शन के कारण, बन में जीवन पालूँ रे ॥
चरणकमल से निमल करदो दासी की झोपड़िया ॥१॥ रामा
रोज सवेरे बन में जाकर, फल चुन चुन कर लाऊँगी।
अपने प्रभु के सनमुख रख कर, प्रेम से भोग लगाऊँगी ॥
मीठे मीठे बेरन की मैं भर लाई झबरिया ॥२॥ रामा
श्याम सलोनी मोहन मूरति, नयना बीच बसाऊँगी।
बहुत दिनन से आश लगी है, दिल से नहीं भुलाऊँगी ॥
अब क्या प्रभुज़ी भूल गये हो दासी की डगरिया ॥३॥ रामा
नाथ तेरे दशन की प्यासी, अबला मैं यक नारी हूँ।
दशंन बिन दोउ नयन तड़फते, सुन लो बहुत दुखारी हूँ ॥
प्रभुजी रूप से दर्शन दे दो डालो एक नजरिया ॥४॥ रामा

इस प्रकार कीर्तन भजन ध्यान करती रही, कुछ दिन पश्चात् राम-लषण दोनों मूर्ति सेवरी के आश्रम में पधारे

तब निम्न प्रकार भक्ति भाविका सेवरी रामजी की सेवन-पूजन में सनिष्ठ उत्साहित हुयी ।

सरसिज लोचन बाहु विशाला । जटा मुकुट शिर उर बन माला ॥
श्याम गौर सुन्दर दोउ भाई । सेवरी परी चरन लपटाई ॥
प्रेम मगन मुख वचन न आवा । पुनि पुनि पद सरोज शिरनावा ॥
सादर जल लै चरण पखारे । पुनि सुन्दर आसन बैठारे ॥
दोहा- कन्दमूल फल सरस अति, दिये राम कहँ आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खायऊ, बारहिं बार बखानि ॥
पाणि जोरि आगे भइ ठाढ़ी । प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी ॥
केहि विधि स्तुति करौं तुम्हारी । अधम जाति मैं जड़मति भारी ॥
अधम ते अधम अधम अति नारी । तिन महँ मैं मति मंद अघारी ॥
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता । मानौ एक भक्ति कर नाता ॥
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुण चतुराई ॥
भक्ति हीन नर सोहैं कैसे । जल बिनु बारिद देखिये जैसे ॥
नवधा भक्ति कहौं तोहि पाहीं । सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥
प्रथम भक्ति संतन कर संगा । दूसरि रत मम कथा प्रसंगा ॥
दोहा- गुरु पद पंकज सेवा, तीसरि भक्ति अमान ।
चौथी भक्ति मम गुण गण, करै कपट तजि गान ॥
मंत्र जाप मम दृढ़ विश्वासा । पंचम भजन सो वेद प्रकासा ॥
षड दम शील विरति बहु कर्मा । निरत निरन्तर सज्जन धर्मा ॥
सतयें सम मोहिं मय जग देखै । मोते अधिक संत कर लेखै ॥
अठयें यथा लाभ संतोषा । सपनेहु नहिं देखै पर दोषा ॥

नवम सरल सब सों छलहीना। मम भरोस हिय हर्ष न दीना॥
नव महँ जिनके एकौ होई। नारि पुरुष स चराचर कोई॥
सो अतिशय प्रिय भामिनि मोरे। सकल प्रकार भक्ति दृढ़ तोरे॥
दोहा–जाति हीन अघ जन्ममय, मुक्त कीन्ह अस नारि।
महामंद मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहिं बिसारि॥(रा

नवो भक्ति सेवरी कथा, प्रेम उमंग औ नेम।
सो सब 'शीला' उर धरौ, तब ही कुशल रु क्षेम॥
जो उद्धारक जाहि को, वही साधु गुरु राम।
स्व बंधन गत जो गुरू, सोई मोक्ष दें धाम॥

विधिवत भक्ती सद्गुरु कीजै। बोधक संत गुरू पद लीजै॥
औरौ संत सहायक सज्जन। प्रेम नेम नित सुसंग में मज्जन॥
भक्त प्रेमि जब इकठे होवैं। गुरु निर्णय[१] ही चर्चा जोवैं॥
हर्ष समेत बुलावै तिनको। आवैं तब सनमान सविधि सो॥
जो जेहि योग्य सो आसन स्वक्षै। झारि बुहारि लिपावै कक्षै[२]॥
सद्गुरु संतन वर विधि स्वागत। आवत देखि प्रेम उर पागत॥
संत गुरू पद पूजै ऐसे। राम जानकी पूज्यो[३] जैसे॥

टिप्पणी—१ दो०-बैठैं जहँ सब संत मिलि, सात पाँच यक ठौर
तहँ मम बात चलावहीं, करहिं न चर्चा और॥ (विश्रामसागर

२ निवास करने की जगह–ठाँव।

३ गुरु वशिष्ठ आगमन में– (चौपाई)

गुरु आगमन सुनत रघुनाथा। द्वार आय नायो पद माथा॥
सादर अर्घ्य देय गृह आने। षोडस भाँति पूजि सनमाने॥
गहे चरण सिया सहित बहोरी। बोले राम कमल करजोरी॥

सो प्रमाण टिपणी में देखौ । सब नर नारि गुरू पद पेखौ ॥
राम को देखतै सेवरी आतुरि । तैसै गुरु ईश्वर लखि चातुरि ॥
दोहा—खेत भलो कृषक भलो, लाभ असल दुख दूर ।
सच्चे जब निज साधु गुरु, भक्ति युक्ति सुख पूर ॥
साखी—सब ते साँचा भला, जो साँचा दिल होय ।
साँच बिना सुख नाहिना, कोटि करै जो कोय ॥
(बीजक)

[संत गुरु आगमन स्वागत–सवैया]

संत गुरू जब आवत देखै दौड़ि सुहर्ष से आसन लेवै ।
ताहि लिवाय बिछाय सु आसन धोय चरण विधि शीश नवावै ॥
तिन अन्हवाय के लै चरणोंदक भोजन औ जलपान सजावै ।
चित्त हुलास से स्वागत गुरुवर लाभ सुभक्ति से मुक्तिहिं लेवै ॥
साथ गुरू के जो औरौ संत तिन्हें भी वही विधि आदर देवै ।
साधु गुरू का निवास रहै जहँ राखि सफाई[1] भली विधि सेवै ॥
फूल व माल प्रसाद सु अर्पिके आरति वन्दन सत्संग धेवै ।
सब दिन पंच समय करि बन्दन[2] सिंधु से नाव को ज्ञान से खेवै ॥

नारद आगमन में—
देखि राम सहसा उठि धाये । करत दण्डवत मुनि उर लाये ॥
सादर निज आसन बैठारे । जनकसुता तब चरण पखारे ॥
तेहि चरणोंदक भवन सिंचावा । जगपावन हरि शीश चढ़ावा ॥
(रामायण अयोध्या)

टि०—१ सोरठा—पोति लीपि शुचि ठाम, जाला कूड़ा झारि नित ।
करि उत्साह से काम, पलंग बिछौना स्वच्छ दै ॥ २ बन्दगी ।

ज्ञान कथा नित निर्णय लीजै। गुरु विचार गृह कारज कीजै॥
कर्माकर्म क शोध सदाई। प्रारब्धी पुरुषार्थ हिताई॥
नहिं अधीर दुख सुख में होवै। गुरू ज्ञान से मन दुख खोवै॥
देह बनी प्रारब्ध अधारै। दुख सुख रोग निरोग लखारै॥
दुक्ख हानि लखि नहिं घबरावै। प्रारब्धी जो सोई भोगावै॥
"दो०—तुलसी जस भवतब्यता, तैसी मिलै सहाय।
आप न आवै ताहि पहँ, ताहि तहाँ लै जाय॥"(रा०)

[प्रारब्ध की बलिष्ठता—(राजकुमारी का पिंडरोगी पति)]

उदाहरण— एक राजा के एक राजकुमारी थी सो राजा को बहुत प्रिय थी। जब वह राजकुमारी बिवाह करने के योग्य हुई, तब राजा ने विचार किया कि मेरे एकही कन्या है सो मुझे बहुत प्यारी है, अब इसे योग्य वर खोजिके मुझे ब्याह करना चाहिये, क्योंकि वह ही मेरे बाद मेरी राज्य का स्वामी होगा। ऐसा विचार कर वह राजा कई मनुष्य साथ लेकर वर खोज हेत चला। वह राजा सुपुत्री हेत बहुत बुद्धि-शाली सुन्दर राजकुमार वर चाहता था। संयोग बश अन्य साथी मार्ग में राजा से छूट गये, अब राजा प्यास से ब्याकुल अकेले जलकी तलाश करते हुये एक महात्मा के पास पहुँचे, तहाँ राजा सादर महात्मा से प्रणाम करके जल पिये और अपना मनोहाल कहते हुये नाम बताये।

महात्मा मिमांसाचार्य— कर्म विपाक के अच्छे अनुभवी प्राचीन संत थे। उन्होंने कहा— राजा! तेरी लड़की का वर तेरे

ही शहर में एक पिण्डरोगी बालक तेरे महल के दक्षिण एक दूकानदार के घर में है, तू व्यर्थ परीश्रम करने क्यों जा रहा है ? राजा खिन्न हुआ और क्रोध करके कहा कि भविष्य की बात आप क्या जाने? मेरी सुवरण समान लड़की का पिंडरोगी वर बताता है ? संत ने कहा—तेरी लड़की का कर्म ही उसके साथ का है, वह तो होके ही रहेगा। राजा ने कहा—मैं पूर्व जन्म का कर्म नहीं मानता ? ऐसा कह के वह नाराज़ होकर चल दिया।

राजा कहता है कि मैं स्वयं खोज कर अच्छे रूपवान राजकुमार के साथ अपनी प्रिय कन्या का ब्याह करूँगा, इतने में पीछे पिछड़े हुये लोग भी आ गये। कई दिनों बाद एक राजधानी में पहुँचे, उस राजाने इन सबों का यथायोग्य सत्कार किया, तत्पश्चात् इन्होंने सब देख भाल कर उस राजा के राजकुमार के साथ अपनी राजकुमारी का ब्याह करने का हाल कहा और दोनों तरफ से ब्याह की मंजूरी हो गई, ब्याह का दिन भी निश्चित कर दिया गया।

राजा अब अपनी राजधानी में लौट आया, ब्याह की तैयारी बड़े हर्ष से करने लगा और मार्ग में मिले 'महात्मा की बात राजा ने किसी से नहीं सुनाई, परन्तु उन महात्मा की बात दिल में खटकती रही, वह सोचा कि सौदागर का पुत्र किसी अन्य देश में भेज दिया जावे, ताकि ब्याह विर्विघ्न हो जावे, क्योंकि महात्मा का वचन हो चुका है, कोई झंझट न

लग जावे। ऐसा विचार कर एक जहाज़ी सौदागर जो परदेश जाने वाला था, उसे राजाने बुला कर कहा कि फलाँ पिंड रोगी बालक को अपने जहाज़ पर ले जाकर किसी दूर देश में छोड़ देना, अगर ऐसा न करोगे तो तुम्हें दण्ड दूँगा और लुटवा लूँगा। वह जहाज वाला सौदागर उस लड़के को किसी प्रकार ले जाकर दूर किसी एक निर्जन टापू में छोड़ के अपना जहाज लेकर चला गया।

यहाँ राजधानी में सब विवाह की तय्यारी होकर ब्याह हेत बारात सहित दूल्हा भी आ गया, अब कल ब्याह होगा। राजकन्या उत्तम वस्त्र आभूषणों को धारण कर अपनी सखियों से बातचीत करते करते नींद में आकर सो गई, तब सखियाँ भी वहाँ से चली गईं। थोड़ी देर में राजकुमारी चौंक कर जाग्रत हो गई और हाय बापरे! अरे अम्मा री! मैं मरी जाती हूँ, इस प्रकार चिल्लाने लगी, उसका शब्द सुनकर रानी और दासियाँ दौड़ीं, तो क्या देखीं कि एक तरफ कुमारी चिल्ला रही है और दूसरी तरफ एक काला सर्प दौड़ रहा है, दासियों ने सर्प भगा दिया। राजकुमारी कहने लगी कि माता! मेरे शरीर में बड़ी वेदना हो रही है, मेरे बायें पैर में सर्प ने काट लिया है, ऐसा कहकर वह मुर्छित हो गई। यह समाचार सुनते ही राजा भी आ गये, बहुत से वैद्य, डाक्टर, मंत्र वाले सभी बुलाये गये, सब उपाय किये, परन्तु जहर न उतरा, उसे होश न आया, लोगों को ठीक निश्चय हो गया कि राजकुमारी

मर गई ? तत्पश्चात् पंडितों के मतानुसार लड़की अब बाँस की ठठरी में सुला कर समुद्र में तैरा दी गई, राज विवाह की शोभा चली गयी, राजा शोकातुर हो मुर्छित हो गया, आया हुआ राजकुमार भी निरास होकर लौट गया।

उधर पिण्डरोगी बालक टापू में इधर उधर घूमते हुये वह एक वृक्ष के नीचे पहुँचा, वहाँ झरना बह रहा था, वहीं उसने पानी पिया और मारे भूख के उसी वृक्ष के पत्ते खाया, वे पत्ते बड़े स्वादिष्ट मालूम पड़े, अब वही पत्ते खा-खा कर भूख मिटाया। दो तीन दिन वही पत्ते खाते-खाते उस बालक के मुख की कान्ति बदल गई, तब वह बालक वही पत्ते पीस कर पेट पर और देह में मालिश करना प्रारम्भ किया। अब उसी पेड़के नीचे रहना, पत्ते खाना और मालिश करना, इस प्रकार करते-करते चालीस दिनके बाद उस बालक का सर्व पिण्ड रोग जाता रहा और उस बालन की देह देवता के समान सुन्दर सुबरण वत चमकने लगी, अब वह बालक झोपड़ी बना कर वहीं रहने लगा।

एक दिन उसने विचार किया कि यदि ईंट बनाकर उन पर पत्तों का रस मला जाय तो शायद वे ईंटें सोने की हो जावें, ऐसी कल्पना में निमग्न हो वह मिट्टी खोदके ईंटें तय्यार कर उन ईंटों पर पत्तों का रस डाल कर भिगोने लगा, वे ईंटें रस से भीगते ही सुबरण की हो जावें, तब तिन्हें वह अपनी झोपड़ी में लाके रख लेता।

एक दिन समुद्र के किनारे टहलने गया, वहाँ देखा एक ठठरी आ रही है, उसे किनारे आई देख तिसे खीं लिया और उसमें देखा कि एक सुन्दर स्त्री बँधी है, उसे जाकर वही पेड़ के पत्तों का रस उसकी सारी देह में मल वह रस लगने से अब स्त्री हाथ-पैर हिलाने लगी और कु देर बाद वह उठ बैठी और कहने लगी कि मैं बहुत भूखी उस बालक ने वही वृक्ष के पत्ते खिलाये, वही झरने का ज भी पिलाया, अब दोनों चल कर झोपड़ी में आये। कुमारी अपने ब्याह का और सर्प काटने का हाल सुनाया, तब बालक ने कहा कि मैं तेरे नगर के सौदागर का पुत्र हूँ, पिता ने बिना अपराध ही मुझे इस निर्जन टापू में भेज दि था। अब दोनों साथ-साथ रहने लगे, तत्पश्चात् सलाह दोनों आपस में प्रत्यज्ञा पूर्वक गंधर्व विवाह कर लिये स्त्री-पुरुष के भाव से रहने लगे।

कुछ दिन के बाद अपने नगर जाने की इच्छा की, लिये जहाज़ की खोज में ठहलने जाने लगे। एक दिन स में आता हुआ जहाज़ दिखायी दिया, बालक ने स द्वारा जहाज को किनारे बुलाया' जहाज़ी अपना ज किनारे लाया। जहाज़ी तो उस बालक को न पहिचान स परन्तु वह बालक जहाज़ी को पहिचान लिया कि जहाज़ी है जो कि हमें यहाँ छोड़ गया था, उसे अपना कहते हुये यह कहा कि मैं आपके साथ अपने देश चलूँ

बड़ी प्रसन्नता से अपनी सर्व सोने की ईंटों सहित जहाज़ में सवार होकर दोनों चले और अपने नगर में जा पहुँचे। जहाज़ी–सौदागर दोनोंको ले जाकर राजा के पास गया और सब समाचार कहा। राजा अपनी राजपुत्री को पहिचान कर तथा साहूकार के पुत्र का रूप देखकर बहुत प्रसन्न हुआ, दोनों से सब हाल पूछा, उन्होंने सब हाल बताया। दोनों का समाचार नगर के लोग सुनकर देखने आये। साहूकार भी अपने पुत्र को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ।

राजा पिछली बात याद कर सोचने लगा कि मैं कितना मूर्ख हूँ जो कि महात्मा के वचनों को नहीं माना। उन्होंने जो कर्म भोग बताया था सो सब ठीक ही है, सब कुछ कर्म ही अनुसार अर्थात् पूर्व प्रारब्धानुसार ही सबों का संयोग-वियोग होता है' पूर्व कर्म का फल ही जन्म-मरण है। कहा है—

"गेहूँ बोवे गेहूँ पावे, जो बोवे सो पावे।
धर्मी जग में पार उतर गे, बूड़ि अधर्मी जावे॥"

इस घटित उदाहरण अनुसार मिलन-बिछोह, जन्मना-मरना, और जबरन आये हुए हानि-लाभ सब अपने ही किये हुए पूर्व के कर्म (प्रारब्ध) अनुसार होते रहेंगे, तहाँ यथा-योग्य धर्म मर्यादा रखते हुए योग्य पुरुषार्थ करना अपना वर्तमानिक कर्त्तव्य है सो करना ही चाहिये। कठिन प्रारब्ध (पूर्व कर्म भोग) होकर ही रहेगा। अब अपने को अविनाशी चैतन्य पारख स्वरूप की समझ यथार्थतः दृढ़कर यह भाव

हृदयांगम करें कि– भूतकाल के कर्म भोग तो भोग कर
समाप्त होंगे, याते वर्तमान समय शारीरिक भोग यथार्थ
सः पुरुषार्थ- प्रारब्ध पर ही निर्भर समझे। अब हमें भवि
काल अर्थात् अगले जन्म की विचारधारा सामने ल
चाहिये, क्योंकि आगे भविष्य के देह सम्बंधी हानि-ला
दुख-सुख, बंध-मोक्ष अब वर्तमान के आधार पर निर्भर
कहा भी है— चौपाई

'आगे करै सो अब भुगतावै। अब जो करै सो आगे पावै
यह प्रमाण विश्वाबीस सत्य ही है। स्व अविनाशी नि
चैतन्य अपने आपको अशांतिता से शांतिमय वातावरण
लाना या आना अति आवश्यक है, सो पुरुषार्थ भूमि म
देह में कर्त्तव्य परायण रहे। कहा है—

"जेहि विधि कारज मोक्ष बनोई। लाज कपट तजि करै सदोई
त्रिवृत्त स्वभाव मयी भावना आलस- मंदता, लज्जा-अ
प्रपंच में विमूढ़ हो कर पुरुषार्थ हीन-आँख मूँद कर न बै
मनुष्य देह पुरुषार्थ भूमिका है, योग्य पुरुषार्थ में ढिला
रक्खें। आगे हितैषी आदेशों पर और भी ध्यान दो।

[हितैषी संक्षिप्त एकादश आदेश तथा मानवी सुझाव]

सदा उदार१ रहै दिल अपना। कंजूसी तृष्णा२ को तजना
नेम धरम से चलै३ चलावै। गुरू मंत्र नित४ जपै जपा
मात पिता औ जेठ जेठानी। ससुर सासु से अदबै५ ठा
छोट बड़ों के सदा हितैषी६। भक्ति के सब ही नेम७सदैव

भेष में गुरुवा ठगों से दूरी[८] । बिना परीक्षा धँसै[९] न जूरी ॥
नर नारी मत पंथन वंचक । बिना सजगता[१०] गिरिहौ खंदक ॥
बिना विचार काम जो करते । लाभ के बदले हानी सहते ॥
तौलै पारखि गुरु[११] वच राखै । कबहुँ न धोखा सो जन चाखै ॥
दोहा—गुरु पारख परकाश ते, भ्रम धोखा नशि जात ।
सदा स्वतंत्र निजपद रहै, त्यागै सदा विजात ॥

] भजन—भूत भ्रम निर्णय]

भरम तजि बहिनैं ज्ञान धरैं ॥ टेक ॥
चारि खानि में जिव हैं जितने, सब को देखि परैं ।
पँचई भूत खानि नहिं दीखै, मलिन कुबुद्धि डरैं ॥ १ ॥
नये जीव बनते कहुँ नाहीं, तन तजि भूत भरैं ।
तन तजि जीव होयँ नित भूतै, चारो खानि टरैं ॥ २ ॥
तम अज्ञान से देखि परै जो, ज्ञान उजेर से ना वै ।
सो केवल सब भरम भूत तेहि, पारख भरम हरैं ॥ ३ ॥
नाउत ओझा भूत मनाये, क्यों नृप कोष न लैं ।
भूत मनउवा सेठ न राजा, जीवन दरिद भरैं ॥ ४ ॥
नउता के घर कितनेउ रोगी, दिखै अबंशि मरैं ।
निरुज बंश औ धन हित बहिनैं, नाहक ठगन परैं ॥ ५ ॥
भूत देव से मंत्र में शक्ती, फूँक व झार करैं ।
झूँठे देव मंत्र नौताई, तजि सद 'शरण' तरैं ॥ ६ ॥
दोहा— कर्म योग से देह बनि, बिन भोगे नहिं छूट ।
रुज में दवा पर्हेज रखि, भ्रम तजि सुधरम घूट ॥

साखी– "फ़हम आगे फ़हम पाछे, फ़हम दाहिने डेरि।
फ़हम पर जो फ़हम करे, सो फ़हम है मेरि॥
साँचा सौदा कीजिये, अपने मन में जानि।
साँचे हीरा पाइये, झूँठे मूलहु हानि॥"
(बीजक)

दोहा– यक रस जीवन भर रहै, सत्य भक्ति गुरु पागि।
तब दुर्गुण नशि हंस ह्वै, सदा परख पद जागि॥

(मानव जीवन कर्त्तव्य—भजन)

बहिनों! सत्संग से अवगुण बुहारो जरा।
सद्गुरु भक्ती से जीवन सुधारो जरा॥ टेक
जरा विचारो तुम सभी, भोगे जग, नित भोग।
कुछ बाकी तुम से नहीं, राव रंक सुख शोग॥
बहिनों! मृगजल से तृप्ती न पावो जरा। ब०! सत्संग०॥
पाँचो भोगन सुख नहीं, केवल जड़ रगड़ान।
राजस सुख मन फेरि के, वपु निर्वाह सु लान॥
बहिनों! सातस विचार सुलावो जरा। ब०! सत्संग०।
खटमल जूँ चीलर जिते, लघु-गुरु जिव वपु धारि।
मारो नहिं जिव शक्ति भर, दया शील उर लारि॥
बहिनों! पुण्यों से पाप भगावो जरा। ब०! सत्संग०।
छल चुगुली ईर्षा कपट, चोरी जारी झूँठ।
अहं मोह उन्माद तजि, पियो गुरुपद घूँट॥
बहिनों! नित ही सुसंग ज्ञान गावो जरा। ब०! सत्संग०।

तन मन वच शुद्धी करो, संत भक्ति दृढ़ लाय।
नश्वर माया अर्पि के, बोध अमर पद पाय ॥
बहिनों! मानव सुयश को बढ़ावो जरा। ब० ! सत्संग०॥५॥
हंस न नारी पुरुष है, ये सब काल को फन्द।
गाँस फाँस सब मेटि के, साहेब शरणानन्द ॥
बहिनों ! देहीं के भाव मिटावो जरा ! ब० ! सत्संग० ॥६॥
जनम मरण का मूल है, विषय भोग परसंग।
भूल भरम अज्ञान से, जीवहिं जड़ लहि सग ॥
बहिनों ! भ्रम तजि सुबोध 'शरणावो' जरा। ब० ! सत्संग ॥७॥

[भक्ति–गारी]

पारखि गुरु को ज्ञान सुनौ अब सब भारत की देवीजी वाह वाह।
मानुष जनम अमोल रतन को ज्ञान जुगुति से राखौजी वाह० ॥टे०
घर वर्तन पट अंग सफाई घुमनि कुटनि ना धारौजी वाह०।
अन्न बीनि जल छानि रसोई आलस त्यागि पखाईजी वाह० ॥१
जीव न मारो नशा न पीऔ अण्डा मांस पेशाबैजी वाह०।
अन्न फूल फल कन्द व मेवा दूध दही घृत शुद्धैजी वाह० ॥२
छल चुगुली औ गाली चोरी झूँठ त्यागि मृदु बोलौजी वाह०।
करकस नारि स्वभाव तजौ सब बनौ सुशीला देवीजी वाह० ॥३
साधु गुरू के चरनन लागौ सीखौ ज्ञान सु भक्तीजी वाह०।
सच्चे प्रेम से सर्वस अर्पौ गुरु रुख साधि सुखारीजी वाह० ॥४
राजस दुर्गुण तजौ सिंगारौ सतो सादगी धारौ जी वाह०।
क्रोध लोभ मद काम मोह तजि क्षमा उदार अचारीजी वाह० ॥५

चुड़यल भूत ईश भ्रम देवी सब अनुमान हटावो जी वाह०।
प्रत्यक्ष देव साधु गुरु पूजौ लोक दुनौं सुख लेवोजी वाह०।
आठौ छिन गुरु ज्ञान ध्यान रमि ज़ड़ चिद को बिलगावोजी वाह०।
जग दुख छूटौ गुरू 'शरण' गहि आवागवन मिटावोजी वाह०।

दोहा– गृही धर्म संक्षिप्त महँ, भक्ति रहनि भी भाखि।
सो भक्ती पथ गहत ही, नव-नव युक्ति सु चाखि॥

सो०– भविष्य दिवस पुनि आय, सुन्यो औरहूँ ज्ञान सद।
श्रवण मनन उर लाय, अब निज निज गृह जाव सब॥

छंद शैर– गुरु रुख पाय के श्रोता विदुषी प्रश्नक शीला बहेन सबी।
गृही धर्म औ भक्ति साज सब गुरु बचश्रमि सुनि भरम दबी।
प्रेम परायण भक्तिनिष्ठ ह्वै त्रिविधि बन्दगी करत सबी।
गुरु सनमुख नमि मग्न ध्यान से जोरि हाथ कहें विनय छबी।

[विनय-स्तुति]

गुरुवर भवनिधि में डूबौं बचायो प्रभो !
उरके दुर्गुण कुजन्तू हटायो प्रभो ! ॥ टेक।
बड़े अभागी जीव हम, महा अंध तम धारि।
विद्या बुद्धि से हीन मैं, अघ में जीवन जारि॥
ऐसी पापिनि की आगि बुझायो प्रभो ! गुरुवर ··· ॥१॥
हं मेरा पन कुछ नहीं, ज़ो कुछ मम गुरु तोर।
तेरा तव सब अर्पि कै, छुटै पाप उर मोर॥
ऐसे भावों का होय अशीश प्रभो ! गुरुवर ··· ॥२॥

कर जोरे स्तुति करौं, सुनिये गुरु ज्ञानेश ।
जो कुछ दीन्ह्यो बोध उर, कबहूँ छुटै न देश ॥
यकरस जीवन सुबोध में पागौं प्रभो ! गुरुवर ··· ॥३॥
प्रारब्धी की देह दुख, भोगि तजूँ गुरु लीन ।
सर्वोपरि गुरुपद भजूँ मीन परख पद पीन ॥
स्वामी 'शरणै' को थीर करायो प्रभो ! गुरुवर ··· ॥४॥

दोहा—स्तुति वन्दन करि सबै, शीश नाय गुरु पायँ ।
चलीं सबै गुरु गुण गुनत, नेम धरम गृह मायँ ॥

सुशीला देवी प्रति 'गृहधर्म सः भक्ति विधान, दूसरा सम्बाद समाप्तः

तीसरा सम्बाद

[त्रय देवियों को हित आदेश]

दोहा—यक दिन शीला संगिनी, गुरु वच गुनैं एकात्र ।
लक्ष ध्यान गुरु भजन को, गावन चहत सुपात्र ॥
तिसी समय त्रय देवियाँ, आय गईं अनयास ।
स्वागत सहित बिठारि तिन, करि संतुष्ट सुपास ॥
पुनि अब भजन आरम्भ करि, प्रेम भरे सहमोद ।
भक्ति ज्ञान रुचिकर वचन, गावत उर श्रम खोद ॥

[भजन]

घर ही में तीरथ बनइबै मँदिर हम काहेक जइबै ।।टेक।।
पाथर के देवा डोलैं न बोलैं । काहेक नेह लगइबै ।।१।।मँ
सासू को गौरा ससुर महादेवा । स्वामी को ईश्वर बनइबै।।२।।मँ
तीरथ में पण्डा जग भरमावैं । उनहुन से दाम बचइबै ।।३।।मँ
ठग बरवार तीरथ में लागैं । काहेक जेबै कटइबै ।।४।।मँ
लागैं बैरागी हनुमान गढ़ी पर । सखियन कि इज्जत बचइबै५।।मँ
तीरथ में बुड़वा बुड़की मारैं । उनहुन से जान बचइबै ।।६।।मँ
खेलैं जुवारी दाँव लगावैं । तिनहुन से धन मन बचइबै ।।७।।मँ
नशा मांस औ घूस जो खावैं । उनहुन से अंग हटइबै ।।८।।मँ
कहैं कबीर कल्पना छोड़ो । मनमाने फल पइबै ।।९।।मँ

[भजन]

हम गुरु मूरति को परछन जइबै ।। टेक ।।
पथरा औ पानी बिरवा न परछब, गुरु के परछे ज्ञान बुधि पइबै ।।
सेब अँगूर औ केला मोसम्मी, मेवा मिठाई परसाद चढ़इबै ।।
अंचल साजि बन्दगी करिबै, हाथ जोरि के विनय सुनइबै ।।
चरण धोय चरणोंदक लेबै, कुछ पीबै कुछ भवन सिंचइबै ।।
बेला गुलाब कमल जूही के, हार गूँधि गुरु गले पहिरइबै ।।
केवड़ा गुलाब से चन्दन उतरिबै, गुरु मूरति में तिलक चढ़इबै ।।
मोहरैं औ गिन्नी असर्फी चढ़इबै, हीरा मोतिन की झाँकी बनइबै ।।
कंचन थार कपूर की बाती, सब सखियन मिलि आरति गइबै ।।
'अनुरागदास' की अर्जी साहेब से, अनुचर बनि द्वारे झाड़ू लगइबै।

दोहा- विधिवत गाय के सब जनी, भजन कीन्ह युग पूर्ण ।
सुनि मोदित त्रय देवियाँ, तिन उर कलिमल चूर्ण ॥
कहन लगीं हम तीनहूँ, कितने भ्रम दुख पूरि ।
पढ़ी लिखी तो हूँ सही पर ज्ञान बिना सब धूरि ॥
सुनत रहिउँ तव सबन को, पर भाग्य बिना नहिं योग ।
आज पुण्य अवसर भलो, हरौ सबै विधि शोग ॥
शीला औ सब संगिनी, कहति सु औसर आप ।
शुद्ध भाव दुख दमन हित, गुरू वैद्य वच जाप ॥

सम्बाद प्रारम्भ— [शैर- लावनी]

बैठीं तीनों शांति चित्त से, सतसंगिनि के साथ भली ।
तिनमें पुत्र न होत एक के, दूसरि विधवा सुबुधि रली ॥
तीसरि का पति बहु ब्यसनी अरु, जुआ में नारी बेचहली ।
धर्म बचावन भागि के नइहर, आके रहती शांति भली ॥
दोहा—अपने अपने भाव को, कहन चहत दिल खोलि ।
सबके रुचि अति ज्ञान की, दिखत जगत दुख घोलि ॥

सुशीला बचन— भानुमती देवी की बेटी-सुशीला उन तीनों नवीन विदुषियों से कहती हैं—आप सब अपनी वर्ती बीती हुई समस्यायें संक्षिप्त में कहें, तब उसी अनुसार आप सबों को सत्संगालय से ज्ञानमयी औषधि सरलता से प्राप्त होकर हृदयांगम हो जायगी । कहा भी है—-

साखी-"अपनी कहै मेरी सुनै, सुनि मिलि एकै होय" (बी०)

देखिये ! आज कल हम सबों के परम पूज्य विवेक वैराग्य सम्पन्न शिरोमणि श्री सद्‌गुरुदेव ग्राम से अलग एकान्त बगीचे के मध्य सत्संगालय (बंगला) में पधारे हैं, हम सबों का उन्हीं सद्‌गुरुदेव से उद्धार हुआ है। इस वर्तमान समय जब से सद्‌गुरुदेव का निवास है तब से तथा जब-जब पूर्व में भी श्री सद्‌गुरुदेव दया कर पधार के कुछ-कुछ ठहरते रहे तब-तब हम सभी अपने भ्रात— ब्रह्मचारी गुरु बोध दास जी के आसरे (आधार) से यथासक्ति तिन इष्टदेव की सेवा बन्दगी उपासना सत्संग में लगी हुई हैं। ऐसे सुऔसर में तो आस-पास के बहुत सज्जनों का उद्धार हो रहा है। समयानुसार नित्य सत्संग में शंका- समाधान, कथा- कीर्तन, भजन- पूजन होते रहता है। हम सब भक्त सज्जनों के हेत सद्‌गुरुदेव के द्वारा ज्ञानामृत वर्षा इस प्रकार हो रही है—

[श्री गुरुज्ञान वर्षा–भजन]

गुरु ज्ञान दान वर्षा खुब जोर हो रही है।
त्रय ताप अग्नि अब तो नित शांत हो रही है॥ टेक॥
बादल विराग गर्जे, बिजली विवेक चमके।
गुरुभक्ति वायु द्वारा, सद्‌बुद्धि मेघ झमके॥
सदबोध की झड़ी नित सब दिशि में हो रही है॥ १॥
सत्संग जल को पाकर, सज्जन किसान हर्षें।
हृदय सु खेत में सब, सद्धर्म बीज पर्सें॥
सद्‌गुण कि खेती अब तो कैसी हरीभरी है॥ २॥

चातृक व मोर धर्मी, सब जीव हर्षि बोलैं।
असली स्वराज्य पाकर' सब सुज्ञ जन कलोलैं॥
कैसी ये बन की शोभा सद्गुण सुहा रही है॥ ३॥
सब ही सुधर्मि कृषक, निज खेत हृद लखते।
मद मोह दम्भ दुर्गुण, नित काटि धर्म रखते॥
ये धर्म नाज खेती शोभा से पुर रही है॥ ४॥
सब धर्म अंग लुन कर, सज्जन धनी हुए हैं।
हिंसा नशादि घृणित, कामादि खल नशे हैं॥
अपनी मनोनिवृती सुख सेज दे रही है॥ ५॥
बीजक असल से जितने, सद्ग्रंथ मंत्र प्यारे।
अमृत अखण्ड वृष्टी लहि जीव नित सुखारे॥
ये तृप्त अमी वाणी स्वशांत दे रही है॥ ६॥
सद्गुरु कबीर स्वामी, सद्गुण सुबोध नामी।
ये 'शरणदास' तिन का, सब भाँति से सुखामी॥
ऐसी सुज्ञान वर्षा मुक्तेश दे रही है॥ ७॥

नवीन देवियों का प्रश्न— बहेन जी! क्या वे पूज्यवर सद्गुरुदेव यहाँ सदा रहकर ज्ञान वर्षा करते रहते हैं? या बुलाने से आये हैं? और कितने दिन रह कर ज्ञानामृत की वर्षा करेंगे?

सुशीला उत्तर— वे सद्गुरुदेव परम वैराग्यवान हैं, निम्न-भावानुसार कहीं भी आश्रम नहीं बना रक्खे हैं— चौपाई—
'नहिं कछु आश्रम बंधन ताके। कुल कुटुम्ब कर मोह न जाके॥' (वि०)

इस प्रमाण अनुसार हमारे इष्टका वर्तमान है। यहाँ सदा नहीं रहते हैं, बड़े निहोरा विनय वन्दना से तथा भक्तों के आग्रह से उनकी कभी-कभी पधारने की दयादृष्टि हो जाया करती है। श्री सद्गुरुदेव यहाँ कभी जब आ जाते हैं तब सज्जनों के अति आग्रह से मुमुक्षुओं के बोध-ज्ञान पुष्टि हेत कुछ दिन रह भी जाते हैं और जिस दिन चलने का विचार आ गया उसी दिन वे चल भी देते हैं, जबरन किसी के बंधन में नहीं पड़ते।

त्रयदेवियाँ— अहो! सुभागिनी सुशीला बहेन! आप सब धन्य हैं। कृपया! अब हम लोगों का संक्षिप्त भाव सुन लें, फिर तिसी भावानुसार जब आप सबों के साथ श्री सद्गुरु के दर्शनार्थ हम सब चलेंगी, तहाँ समय योग सबों के उद्धार हेत श्री सद्गुरुदेव से सत्संग करवा देवेंगी या अब यहीं हम सबों का भाव सुनकर आपही उपकारी बहिनें हमारी बुद्धि में ज्ञान प्रकाश कर दीजिये। तिसके पश्चात् सद्गुरुदेव से सप्रेम भेंट भी करेंगी और तिन का अमृतमय प्रवचन श्रवण कर अपना अहोभाग्य मनाते हुए स्व-स्व उद्धर करेंगी।

सुशीला— जब हमारे परम शिरोमणि श्री सद्गुरुदेव ही सूर्यवत् प्रकाश कर रहे हैं तो हम नक्षत्रों-दीपकों जुगुनुओं को चिमचिमाने की कोई आवश्यकता नहीं। सद्गुरु के समक्ष आप के साथ-साथ हम लोगों को भी बहुत सी नवीन-नवीन अनुभव ज्ञान की बातें सुनने को मिलेंगी।

अच्छा! अब आप सब अपना-अपना कुत्रित्त तथा हृदयक भाव सूचित करें ?

[१ —पुत्रहीन कमला देवी का चरित]

प्रथम कमला देवी बचन— सबों से प्रणाम कर कहती हूँ— एक तो मैं अपने को अभागी समझती हूँ, क्योंकि मैं आज पचास-पछपन वर्ष की हो गई, मेरे वद्र से एक भी संतान की सौभाग्यता न प्राप्ति हुई, अब तो संतान संयोग की समाप्ती ही है। बचपन में मेरे माता-पिता बड़े हुल्लास से मुझे चौदह कक्षा तक पढ़ाये और अधिकाधिक खर्च सहित बड़े कुलीन धनाढ्य घरमें ज्योतिषी विद्वान पंडित—'विद्याधर जी के सुपुत्र जो कि आज सिविलसार्जन हैं, तिनके साथ विवाह कर दिये।

दस वर्ष तक दाम्पत्य व्यवहार होते हुये भी कोई सन्तान न हुआ, तत्पश्चात् मेरे ससुर जी ज्योतिष प्रमाण शोधन कर नाना उपाय किये किन्तु कुछ भी सफलता न प्राप्ति हुई, पुनः डाक्टरी लैन द्वारा एक से एक उत्तमोत्तम औषधियों पर औषधियाँ खिलाई-पिलाई गईं, किन्तु पुत्र भाव की सफलता न हुई, तत्पश्चात् हमारे पिता जी की अग्रह से हम दोनों—'पति पत्नी' घर से चलकर रामेश्वर द्वारिका बद्रीनाथ आदि सभी तीर्थों में सप्रेम जा-ज़ा के दर्शन, दान-पुण्य करते हुये बहुत कुछ मान मनौती किये, कई वर्ष तक सभी व्रत तथा देव-देवियों की पूजा उपासना बहुत कुछ बिधि पूर्वक किये-कराये तो भी

पुत्र की भावना न सफल हुई, कितने नाउतों द्वारा यंत्र-मं
दुआ ताबीज भूत-भैरव, काली भवानी नट नरसिंह जो कु
नाउतों ने बताया सो कुछ बाकी नहीं रक्खे, कितने बार पर्ण
कथा— सप्ताही भागवत् और स अर्थ श्री मद्भगवतगीता
रामायण सुने तथा रामायण-गीता का अखंड पाठ भी किये-
करवाये, पुत्रेष्ठ यज्ञ भी किये, जहाँ तक सुना जाना गया स
कुछ यथा विधि किया गया। पिताजी और ससुरजी अपन
शक्ति अनुसार नाना उपाय किये कराये, द्रव्य भी तमाम ख
कर डाले, सब कुछ कर थके, हम दोनों पति-पत्नी बहुत कु
हैरान हुए परन्तु कोई उपाय सफल न हुई, सारा परिश्र
निष्फल हुआ। तब हमने अपने पतिजी से कहा कि आप स
जन अब पुत्र हेत हैरान न हों, पुत्र हमारे कर्म में नहीं है. आ
की इच्छा हो तो पुत्र हेत अन्य ब्याह कर लीजिये, हमें को
एतराज़ नहीं है। अब वे हमारे पति जी दूसरा विवाह कर लिये हैं

बहेन जी! हमने अब तक जो कुछ तीर्थ ब्रत दान-पुण्य-यज्ञ
पाठ-पूजा, कथा-भागवत सुना, उपरोक्त जो कुछ किया कराय
सब पुत्र ही के हेत किया, वह सब निष्फल हुआ। पुत्र ला
के लिए सर्व कुछ किया कराया रोज़गार हुआ कुछ परलो
नहीं, वह तो सब माया रूप लोक ब्यवहार दुनियादारी है
अब हमें 'बादल में शिर लगा तब सूझा, कि दुनियाँ में क
से बढ़ कर कुछ नहीं, अब हमको क्या करना चाहिये
समझने नहीं आता ?

प्रश्न— बहने जी ! हमने सुन रक्खा है कि पुत्र बिना स्वर्ग नहीं होता, ये बात याद होने पर ज्यादा खटकती है। जैसा कुछ योग्य हो आप मुझे ज्ञान देकर या सद्गुरु से मुझे ज्ञान दिलवा कर संशय संकट रहित संतुष्ट करा दें।

सुशीला—बहेन कमला देवी ! आप की बातें तो मैं ठीक से सुन समझ लीं। अब ये दूसरी बहेन जी उर्मिला देवी का क्या भाव है ?

[पतिहीन-उर्मिला देवी का चरित]

दूसरी उर्मिला देवी वचन— मैं दुखी तो बहुत थी पर मेरे भाईजी शास्त्री हैं और वे ब्रह्मचारी भी हैं, उनके समझाने से मुझे कुछ मन में शांति बनी रहती है। मेरे पिताजी उपरोहित हैं उन्हें संस्कृत का अच्छा अनुभव है, मुझे पिताजी घरही में पढ़ा-पढ़ा के आठवीं कक्षा पास करा के संस्कृत अध्ययन में लगा दिये थे और व्याकरण के सिद्धान्तकौमदी में उत्तीर्ण कराके शादी कर दिये। मेरे पतिजी भी उज्जैन इन्टरकालेज के प्रिंसिपल थे, वे सब प्रकार से मेरे योग्य और अनुकूल थे। मैं हमेशा विद्या के केन्द्र में तो रही किन्तु धर्म शास्त्र के अध्यात्म ज्ञाता महानुभावों का सुसंग मुझे कभी भी न मिला। नैहर में पिताजी उपरोहित विद्वान थे तहाँ मैं बचपन ही से कर्मकाण्ड में परायण रही, वही कर्मकाण्ड में अभी भी लगी रहती हूँ। ससुराल में पतिजी तथा ससुरजी सासुज़ी और नैहर में पिताजी माता तथा भ्रात व भाभीजी मुझ से बहुत

प्रेम करते हैं। वे भी मेरे दुख से दुखी रहते हैं।

मैं पतिजी के और पिताजी के साथ-साथ चारों धाम औ
भी जितने तीर्थ हैं सब कहीं दर्शन कर आई हूँ। जितने भी
साल के माने गये व्रत हैं, सभी प्रण पूर्वक करती आई, अ
भी करती ही हूँ। गीता-रामायण का पाठ तथा कालीदेवी
शीतलादेवी ऐसी कई देवियों का पूजा और देवीभागवत का
पाठ भी करती कराती आयी। जब मेरे पतिजी बीमार हु
तब मैं जितने भी तीर्थों के देव, भगवान, देवी महारानी इन
सबों की खूब विधिवत पूजा पाठ करते-कराते हुये बहुत कुछ
मान मनौती की और कहती थी कि हे भगवान! हे देवताओ
हे देवीमहारानी! हमारे ऊपर आज सहाय होओ। मेरा
अहिबात बनाये रहियो। देवी भागवत का अखण्डपाठ कई बा
करवा के सुनी। करोड़ मृत्युञ्जय महामंत्रों का जाप करवा
तुलादान भी करवाई। क्या-क्या किया-करवाया, कहाँ त
कहें? परन्तु हमारे प्राण प्रिय पति जी बचे नहीं, प्राणान्त हो
ही गया, किया कराया सब निष्फल हुआ। अभी भी कर्मकाण्ड
करती तो हूँ परन्तु अब मुझे उस कर्मकाण्ड में संतुष्टि नहीं है
मुझे आगे कुछ ज्ञान नहीं।

प्रश्न—कभी-कभी मैं सोचती विचारती हूँ कि मुझे अ
क्या करना चाहिए कि जिस करके मैं सदा शांति-संतुष्ट रहूँ
अभी तक कोई योग्य संत महात्माओं से भी भेंट नहीं हुई कि
उनका प्रवचन सुन समझ कर यथार्थतः शांति संतुष्ट हो जाती

सुशीला—इन उर्मिलादेवी का चरित्र सुन चुकी, अब तीसरी आप बहेन—धर्मेशा देवी का चरित व मनोभाव क्या है ?

[३—कुयोगी पति अभावी—धर्मेशा देवी का चरित]

तीसरी-धर्मेशा देवी का बचन—आप ऐसी ज्ञानेश बहिनों से मैं अपना समाचार तो अवश्य ही कहूँगी। मैं आप सबों की बेटी हूँ, आप सब मेरे में ऐसी सुबुद्धि दृढ़ कर दें कि मेरा सम्पूर्ण जीवन सेवरी के तुल्य भक्ति परायण रहे। मेरे पिता रेलवे लैन में स्टेशन मास्टर हैं और मेरे बड़े भाई वाराणसी के विश्व विद्यालय में हिन्दी और संस्कृत के व्याकरणाचार्य विभाग में अध्यापक हैं। मैं बचपन में भाई और पिता के साथ ही रहती थी, तहाँ दश कक्षा तक घर ही में पढ़-पढ़ कर परीक्षा देती रही, बूढ़ी माता की आग्रह से तेरह-चौदह साल की उमरमें शहर जौनपुर के न्यायाधीस के पुत्र से शादी कर दिये।

ससुराल में ससुरजी न्यायाधीश, आप शिव उपासक भक्त थे, तहाँ शिव पूजक संत आया करते थे। ससुरजी घर पर कम मिलते थे, परन्तु वहाँ घर पर हमारे पतिजी उन संतों की सेवा में रहा करते थे, वे संत नशा पत्ती खूब पीते थे, तिन की संगत से हमारे पतिजी भी दम लगाते और भाँग के गोले खाते रहे और नशा में मस्त रहते थे, पढ़ने में मन नहीं लगाते, बड़ी कड़इत से इन्टर कर सके। वे घर से पैसा ले-लेकर शहर में सनीमा जुआ और वेश्याओं की संगत करके भ्रष्ट हो गये, लतैं बहुत बढ़ गईं, तिनके पिता जब जान पाते तब वे बहुत कोशिश कर रुकावट

डालते, पर वे लतों से न रुके। पिता के द्वारा दण्ड भी सहे, परन्तु छिप-छिपकर घर का पैसा सब नशा और जुआ में तथा वेश्याओं को दे आते। अब तो हमारे ससुर और सासुजी का देहान्त हो गया। दोनों के देहान्त पश्चात् पतिजी मेरी जेवर तथा औरौ सामान भी छीनकर बेंच दिये और वह पैसा वेश्या और जुआ में दे आये, पुनः जुआ में हारकर अब मुझे भी बेचने को तैयार हो गये हैं, मुझे मार-पीटकर बहुत तंग किये मेरी साड़ी भी जबरन संदूक से निकाल कर बेंच दिये, अब निर्वाहिक धन-मालादि की तरफ से मैं साफ हो गई, घर भी बेच दिये, रात दिन मैं रोती और सोचती रही कि क्या करूँ ? धन ज़ेवर-वस्त्र-मकान सब गया, धर्म और इज्जत भी जाने वाली है। हाय ! कहाँ जाऊँ ? क्या करूँ ? प्राणों पर आकर छिप के वहाँ से भागी और पिताजी के घर आयी. सब हाल कही, हमारे माता-पिता बहुत कुछ सांत्वना दिये। मेरी ये व्यवस्था सुनकर भाई-भौजाई भी आये। उन्होंने कहा- बहेन ! हम तुम्हें आजीवन भर शारीरिक निर्वाह का प्रबंध कर देंगे, तुम बहेन जी रोवो मत, कुछ भी कल्पना मत करो देखो ! इसमें एक बात ये है कि तुम अब अन्य पुरुष की इच्छा मत करना, केवल सातस भाव से जीवन बिताना चाहो तो देह निर्वाह की कोई कमी न रहेगी, खाओ-पहिनो सुधर्म पालो। भाई जी के ऐसे सहायक प्रिय बचन सुनकर मैं स्थिर हो गई, मेरा रोना बन्द हो गया। मैं अपने पिता

नामकरण किये हुए 'धर्मेशा' नाम पर आरूढ़ हो गई, अब मेरा जीवन यथा नाम तथा गुण कार्य में ही प्रवर्तित रहना चाहिए।

प्रश्न—अब हे सुहृद भावी! मैं अपना सुधर्म क्या समझूँ? धर्म की लैनैं तो बहुत हैं, वास्तव में सत्यधर्म कौन है? तिसके कर्त्तव्य क्या हैं? आगे मैं कुछ जानती नहीं क्या पूछूँ-कहूँ? मैं सेवरीका नाम सुन रक्खी हूँ कि वह बड़ी भक्ति परायण थी, परन्तु और कुछ सत्य कर्त्तव्य नहीं जानती, आप ही मुझे सुमार्ग सुझावें?

सुशीला—आप बहिनों से मैं पूर्व कह आई हूँ कि यह अवसर तो बहुत उत्तम है, आप सबों की सौभाग्य भी उदय हुयी है कि इस उत्तम योग्य समय से आप सब आ गईं, अब सद्गुरुदेव का मार्तण्ड पारखज्ञान प्रकाशित है तिसमें सब मुमुक्षुओं का परमोद्धार कार्य सिद्ध हो रहा है, तिस प्रकाश के समक्ष मैं उन्हींका अंश जुगनू व चिगारी वत् क्या प्रकाश कर सकूँगी?

आज कल यहाँ तो सद्गुरू का दरबार है एवं परम तीर्थराज है, आप सब इस चैतन्य तीर्थराज में कुछ दिन ठहर कर सत्संगत्रिवेणी में स्नान कर के हृदय के कलिमल को साफ करिये, अब शाम हो गई है, रात में हम युवति घटधारियों को एकान्त दूर बगिचे में जाना वर्जित है। कल समययोग अपने सत्संगियों के साथ सत्संग त्रिवेणी को ले चलैंगी। देखो! त्रिवेणी के विषय रामायण में कहा है—

मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू॥
विधि निषेधमय कलिमल हरणी। करम कथा रविनंदनि वरणी॥
बट विश्वास अचल निज धर्मा। तीरथराज समाज सुकर्मा॥
अकथ अलौकिक तीरथराऊ। देय सद्य फल प्रगट प्रभाऊ॥
दोहा– सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग॥
(रामायण)

इतना कहते सुनते शाम की नित्य क्रिया का टाइम आ गया, सब नित्य क्रिया हेत चली गईं, अब शाम के आठ बजे तक भोजन-पानी खा-पी के संतुष्ट होकर पुनः बैठीं, तब तक ग्राम वासी सुशीला की सत्संग प्रेमिनी चार देवियाँ और आ गई, सः स्वागत् प्रणाम बन्दगीभाव पश्चात् सब मिलके 'गुरु महिमा, संध्यापाठ करती भईं। पड़ोस से आने वाली देवियों के नाम— १ कौशलादेवी, २ सुमित्रादेवी, ३ यशोद्रा-देवी, ४ विद्यादेवी ये चारों देवियाँ हिन्दी-संस्कृत-अँग्रेज़ी की अच्छी ज्ञाता थीं। अब सुशीला की माता वृद्ध–'भानुमतीदेवी भी आ गईं, वे सबसे बड़ी बूढ़ी और पारखज्ञान में प्रवीण थीं, सभी देवियाँ सहर्ष तिन से प्रेम पूर्वक बन्दगी करती भईं।

सुशीला की माता भानुमती देवी कहती हैं—कौशलादि बेटियो सुनो! ये तीनों बेटियाँ बड़े परीश्रम करके बाहर दूर से आई हैं, इन्हें अभी सद्‌गुरुदेव से भेंट भी नहीं हो सकी, अब तुम सबों को समय भी है, आपस में सत्संग करो, इन प्रिय

बेटियों को भी कुछ सांत्वना दो। इन तीनों बेटियों का कृत्रित्व बर्ताव सब दिनमें सुन ही चुकी हो, अपने प्रति बीते हुये और सुने हुये बर्ताव अपनी बुद्धि अनुसार सत्संग वार्ता में कहो सुनाओ। वर्तमान में जो इनको दुख है सोई दुख तुम लोगों को भी तो था। कहा है—

"निज तन केर उपाधी जानै। पर उपाधि सकलो पहिचानै॥"

कौशला देवी कहती हैं कि— बात तो ठीक ही है, पूर्व में हम सब भी तो इन्हीं के समान दुखी थीं, अब सद्गुरु के प्रताप से ज्ञान द्वारा संतुष्ट हुई हैं।

विद्या देवी कहती हैं कि— हमारे और 'कमला देवी, के कर्म भाव की बहुत कुछ एकता दिख रही है।

कमला देवी— बहेन विद्या देवी! जिस प्रकार आप संतुष्ट हुई हैं, मुझे भी वही अपना ज्ञान देकर संतुष्ट करें?

विद्यादेवी— बहेन जी! मुझे तो इन प्रिय बड़ी बहेन-सुशीला जी के आधार से सद्गुरुदेव के अमृतज्ञान द्वारा सर्वाङ्ग संतुष्टि हुई, सो कुछ तो छोटे-मोटे भाव अपनी बुद्धि अनुसार मैं अवश्य कहूँगी, फिर कल से सद्गुरुदेव सर्वाङ्ग संतुष्ट तो करेंगे ही।

[१—विद्या देवी द्वारा कमला देवी को समझौता]

विद्या देवी—सुनिये बहेन कमला देवी! आप के समान मैं पूर्व ना समझी-अज्ञानता वश पुत्र हेतु बहुत दुखी थी, रात दिन मुझे चैन नहीं पड़ती थी, यही भावना पेरती थी कि एक

पुत्र के बिना मेरा सर्व राज काज व्यर्थ शुन्य है, हाय ! मेरा तो अब वंश में नाम समाप्त। मैं लोक दृष्टि से हीन हो गई, बुढ़ापे में मेरे लिये भोजन-वस्त्रादि की सुख सुविधा देने वाला कौन होगा ? मरने पर पुत्र बिना पिण्डदान तथा क्रियाकाण्ड कौन करैगा ? विना पुत्र के वैकुंठ नहीं मिलेगा। मुझे बाँझ समझ कर लोग देखते ही अशुभ मानैंगे, विना पुत्र के अपना करके किसको समझूँ ? विना स्व पुत्र के अब पतोहू मिलने तथा उससे सेवा प्राप्ति का और पौत्र प्राप्ति का आनंद कहाँ मिलेगा ? आदि-आदि। यही सब नाना भाँति के दुःख मुझे रात दिन पीसा करते थे। पुत्र प्राप्ति हेत आप के समान मैं भी कुछ उपाय बाकी नहीं रक्खी थी। पहिले मैं भी परदेश में थी, जब अपने यहाँ घर में आई और ये सुशीलादेवी की माता के सम्पर्क से सद्गुरुदेव से भेंट हो गई, तिन के प्रवचनों द्वारा मेरा सम्पूर्ण दुख दूर हो गया।

गुरुसाहेब महान कृपादृष्टि करके मुझे प्रथम तो यह अमृतज्ञान दिये कि— चौ०—

"आकर चार लाख चौरासी। योनिन भ्रमत जीव अविनाशी॥
कर्म प्रधान विश्वरचि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा॥" रा०
"आगे करै सो अब भुगतावै। अब जो करै सो आगे पावै॥
कल्प कोटि तक घटै न सोई। अवश्यमेव भोगन कहँ होई॥" (वि०)
श्लोक—"अवश्य मेव भोगतव्यं कृतम कर्म शुभाशुभम्।"
"कोऊ न काहु दुख सुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सब भ्राता॥

हानि लाभ दुख सुख संयोगा। कर्महिं ते पावहिं सब लोगा॥
मोह सकल ब्याधिन कर मूला। तेहि ते पुनि उपजहिं बहु शूला॥"२

सद्‌गुरुदेव बन्दीछोर के इन प्रवचनों को अर्थ भाव सहित सुन समझकर मेरे हृदय में यह ज्ञान प्रकाश हुआ कि जब मैं अविनाशी हूँ और नाश तो इस देह का ही होता है, जीव का नाश नहीं होता, तो पूर्व किये अपनेही कर्मों का भोग दुख-सुख, हानि-लाभ, पुत्र-अपुत्र, गरीबी-अमीरी, रोगी-निरोगी आदि सब प्राप्त हो रहा है और कर्मों का भोग बिना भोगे छूटे गा भी नहीं, अवश्य-अवश्य स्वकर्म भोगना ही है, तब मेरी सर्व कल्पनायें तथा दौड़-धूप बिल्कुल व्यर्थ है। आगे का अपना किया-कराया कर्म सब भुगतना ही है। अब भविष्य के लिये सुधार का तथा अपने कल्याण का साज एकात्रित कर लूँ। गुरुवर के इशारा और रामायण में लषण जी के प्रवचन से स्पष्ट सिद्ध है कि जीव को अपने ही कर्मों के अलावा अन्य कहीं पर ईश्वर-खुदा, देव-देवी, भूत-पिशाच, मनुष्य-पुत्र-पौत्र आदि सुख-दुख, स्वर्ग-नर्क देने वाला कहीं कोई भी नहीं है।

जब हम शरीर त्याग कर तुरन्त अन्य चार खानि की किसी देह में प्रवेश होकर दुख-सुख भोगते हैं तो फिर मरने पर पिण्ड दान मिलना केवल कल्पना मात्र भ्रम ही है। कहा भी है—"पिण्ड दान तर्पण की आशा, बम्भन का खेलवार। शूकर श्वान स्यार योनिन माँ, होइहैं कष्ट अपार॥" (निर्मल०) और भी कहा है—"जियत पिता से जंगम जंगा, मरे पिता

पहुँचावैं गंगा । जियत पिता से पूछि न बाता, मरे पिता को दाल औ भाता ।।"

जब अपना कर्म पवित्र और बलिष्ठ है तो स्वर्ग अर्थात् सर्वाङ्ग सुक्ख अवश्य प्राप्त होगा । क्या हमारे शुभकर्म पुत्र के जेब में रक्खें रहेंगे, जो पुत्र हमारे पुण्य की चिट्ठी स्वर्ग के फाटक पर दिखाकर स्वर्ग में प्रवेश करावेगा जो बिना पुत्र के स्वर्ग नहीं होगा ? ये सब नितान्त महा भर्म कल्पना मात्र है।

अरे बहेन जी ! अपने किये हुये अच्छे-बुरे कर्म अपने ही हृदय भूमि में जीव के पास रहते हैं । आप अभी अपने अन्दर विचारो ! और लक्ष दो कि बचपन से जो कुछ दान- पुण्य, तीर्थ- ब्रत आदि किये कराये हो सो स्मरण (यादगारी) आपके हृदय में है या नहीं ?

कमला देवी--अवश्य याद है। जो कुछ भी मैंने अच्छा बुरा किया सो बहुत कुछ स्मरण है, समय समय याद भी होता है।

विद्या देवी-- इसी प्रकार इस मनुष्य जीवन में जो कुछ पुण्य- पाप बना रक्खेंगी उसी अनुसार समय योग स्वर्ग-नर्क रूप नाना सुख- दुख प्राप्त होते रहेंगे। इस कर्मभोग में पुत्र- पति पौत्र पुत्री पौत्री किसी की सहायता नहीं, केवल अपने- अपने मिलानिक कर्मों के संयोग से आपस में सबसे सबका व्यवहार तथा सम्बंध है, अपना ही कर्म प्रधान है । कहा है—

"ज़ीव कर्म आपै करै, फलहूँ भोगत आप ।
आप भ्रमत संसार में, मुक्ति लहत है आप ।।"

अपने किये कर्म भोग अपने को अवश्य प्राप्त होंगे, अन्य सकामी जन भोग घटाने या देने वाले नहीं। 'जो बोवेगा वही काटेगा' कर्म भोग में घूस जमानतरूप कोई सहायक नहीं होने का।

उदाहरण—बहेन ज़ी ! सुना जाता है कि- पार्वती के गर्भ से कोई एक भी पुत्र नहीं पैदा हुआ। श्री कबीरसाहेब भी शब्द में कहे हैं-- "पार्वती को बाँझि न कहिये" अर्थात् जब पार्वती के गर्भ से कोई भी पुत्र नहीं पैदा हुये, तब उसे बाँझिनि क्यों न कहा जावे ? जो पार्वती के दो पुत्र माने भी गये सो कल्पना जन्य केवल मानंदी मात्र माने गये हैं, क्योंकि "षडानन (कार्तिक स्वामी) को लिखते हैं कि उनकी देह षड् ऋषियों के अंश से बनी है" शिव के वीर्य पार्वती के रज एवं गर्भ से नहीं बनी, इसीलिये तिनका नाम षड्‌ानन पड़ा।

गणेशजी- जब शिवजी आरण्य में तपस्या कर रहे थे, तब यहाँ आश्रम में एक दिन पार्वती उबटन के मैल से कुतूहल में ही एक मूर्ति बना दीं, वह मूर्ति पार्वती को बहुत सुन्दर मालूम पड़ी, तिसमें प्रियता बश प्राणप्रतिष्ठा कर दीं, तिसी का नाम 'गणेश, पड़ा।

एक दिन पार्वती स्नान करते समय फाटक पर गणेश को रखवाली में रक्खी थीं, संयोग बश उसी समय शिव जी तपस्या समाप्त करके आश्रम पर आगये। गणेश जी तिन्हें अपरचित के कारण अन्दर न जाने दिये, अब शिव जी से

युद्ध ठन गया, शिव जी क्रुद्ध होकर गणेश जी का शिर त्रिशूल से काट कर फेंक दिये, इतने में पार्वती भी वहीं आ गईं और गणेश का शिर कटा देखते ही रोने लगीं, शिव के पूछने पर वे गणेश की उत्पत्ति का हाल कहीं, तब शिव जी गणेश का तो शिर पाये नहीं और एक हाथी को सामने देख उसका शिर काट कर गणेश के ग्रीवा में चिपका दिये, सो 'गणेश' हैं, ऐसा लेख पुराणों में तथा लोक प्रचलित है। उपरोक्त प्रमाण धार्मिक युवतियों को भ्रम सुझाने हेत उन्हीं की मान्यता से प्रमाण दी गई है कि देखो! पार्वती के गर्भ से पैदा हुए कोई खाश पुत्र न थे, तो क्या पार्वती की मान्यता पूज्यता नहीं है? वास्तव में मैल की मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा द्वारा तिसे सज़ीवित करना और हाथी का शिर लगा कर पुनः पूर्ववत् जीवित कर देना असंभव है, परन्तु प्रमाण लोक में प्रमाणित है उसी अनुसार बताया गया है।

अपने कर्म अच्छे हों या बुरे हों, तिसके अनुसार फल प्राप्त होने में कोई भी परिवारीजन अपनी तरफ से स्व किये कर्म के अलावा साधक बाधक नहीं हो सकते हैं। तब पुत्र के बिना पुण्यात्माओं को स्वर्ग रूप पारलौकिक सुख-सुबिधायें क्यों न प्राप्त होंगी? पूर्व प्रमाण अनुसार परलोक सुख सुकर्मों के द्वारा अवश्य प्राप्त होगा, वहाँ पुत्रादि कौटुम्बियों की कोई आवश्यकता नहीं। पुत्र की क्या कही जाय? पुण्य कर्म भोग प्रति एक महा पुरुष का प्रवचन है—

"कर्मों को अपने सुधारोगे भाई।
तुम पर जुरुम है न ईश्वर खुदाई ॥"(न्यायनामा)

भाव— यदि अपने पुण्य कर्म बलिष्ठ हैं तो मनुष्य क्या? जिसे जगत मालिक "ईश्वर-खुदा" कहते हैं वह माना हुआ ईश्वर-खुदा भी उस पुण्यात्मा को सुख प्राप्ति होने में नहीं रोक सकता है। याते अपने शुभ कर्मों का भोग सुख-स्वर्ग प्राप्त होना पुत्रादि के बिना अबाध्य है एवं अवश्य सुख स्वर्ग प्राप्त होगा। जब हमें अपने कर्मों से ही सुख मिलने वाला है तो निज कृत पुण्यकर्म जन्य सुख किसी न किसी प्रकार मिलेगा ही। क्या पुत्र द्वारा ही सुख मिलने का ठेका है? नहीं। अपने शुभ कर्म ही सुख-स्वर्ग देंगे।

बहेन जी! अपने शुभ कर्मों को ही अपना करके मानै। जब अपने में सद्गुण और सुबुद्धिता है तथा सुकर्त्तव्य बलिष्ठ है तब शुभकर्म भोगसमय अन्य पराये जन भी अपने हो जाते हैं। जो अपने लोक परलोक का आधारक रक्षक सुधर्म है वही अपना है, ऐसी समझ दृढ़ होना सुबुद्धिता है।

देखिये बहेन जी! पार्वती-अनुसूइया, सेवरी आदि ऐसी अनंत देवियों के पुत्र न होने पर भी तिन्हें सर्व सज्जन प्रातः दर्शन करना चाहते हैं और तिन के दर्शन से अपना उद्धार तथा अहो भाग्य समझते हैं। सुबुद्धिशाली सज्जनों की प्रमाण बुद्धिमानों को प्रमाणित करना अति आवश्यक है। मूर्ख नर-नारी प्राणियों की एवं भ्रमिकों की मान्यता के पीछे बुद्धिमान

कहाँ-कहाँ भटकेंगे ? सूकरी-कूकरी आदि चन्दन-अतरों की विशेषता क्या जाने ? भिल्लिन-जँगली जन तुच्छ व्यक्ति मोती हीरों की विशेषता क्या जाने ? तद्वत ।

अब अबुद्धता अंधकार से निकल कर सुबुद्धिमता प्रकश में प्रवेश होवें तथा एक लक्ष से अपना पारलौकिक वर्ताव कर्त्तव्य उज्ज्वल रखना ही परम पुरुषार्थ या सुकर्त्तव्य है, सोई बनाना चाहिए । बिना पुत्रों के ही पुण्य का फल सुख स्वर्ग मिलना अवश्य भावी है । वहुतों के पुत्र-पौत्रादि होते हुये भी यदि अपने पूर्व प्रारब्ध कर्म नहीं ठीक हैं तो वे पुत्रादि आज मारते गाली देते और भोजन-पानी तक नहीं देते, स्वर्ग दिलाना कौन कहे ? कितनों के तो तमाम पुत्र पैदा हो-हो के मर जाते, कोई विदेश चले जाते' बिना अपने शुभकर्म के कभी भी कहीं सुख नहीं मिलेगा । किसी को पुत्र द्वारा सुख मिलता भी है तो वह भी अपने पूर्व किये शुभकर्मों का ही प्रताप है, जो आज पुत्रों द्वारा प्राप्त हो रहा है । अब यह भी तो देखो ! पुत्रों के सम्बंध में कितने कष्ट हैं ? थाह नहीं, तिसमें के कुछ कष्ट अब कहती हूँ, सुनिये—

[पुत्र सम्बंधी एकादश दुख]

१—प्रथम तो पुत्र प्राप्ति की इच्छा- आशा अभिलाषा का दुख ।

२—जब से गर्भ रह गया, तब से न भोजन खाते ठीक से बने, न चलते फिरते उठते- बैठते बने, लादे- लादे रात दिन

बोझ रूप भारीपन का महान दुख, नाना बेचैनी, फिर पैदा होते समय महान दुर्दशा हो जाती, अंग भंग हो जाता, मरने की नौबत आ जाती, बहुत सी युवतियों के पेट का आपरेशन करवाना पड़ता है, कोई-कोई इसी व्यवस्था में पीड़ा विवश मर भी जाती हैं, अथाही कष्ट है।

३—गर्भ समय और पुत्र जने पश्चात् शरीर क्षीण होने पर टीबी ज्वर आदि नाना ब्याधियाँ ब्याप्त हो जाती हैं, तमाम दवा-पर्हेज़ औ वैद्य-डाक्टरों के पास दौड़ना, तिनका मुख ताकना, नाना परीश्रम, निरलज्जता तथा कमा-कमा के पैसा खर्चना पड़ता है।

४—पुत्र के देह रक्षार्थ नाना परीश्रम, फिक्र चिंता और खर्च का भार उठाना पड़ता, नाउतों मलेक्षों वैद्यों-डाक्टरों के पास ले लेकर दौड़ना पड़ता है।

५—बच्चे सम्बंधित नाक-थूक-पेशाब टट्टी आदि महा घृणित मलीनता सकेलते-सकेलते भंगिनि से भी गंदी भंगिनि बन जाना पड़ता है। घृणित कर्त्तब्य बर्ताव से अपना अचार-विचार शुद्धता मटियामेल हो जाता है।

६—पुत्र के लालन-पालन में ममता के हिलोरों से सुबुद्धि नष्ट हो जाती है, भ्रम-अज्ञान का आवरण आकर झूँठे अनुमान में दौड़ता है, ज्ञान-ध्यान-सुधर्म लोप हो जाता है, पुत्र के रोग-ब्याधि से शोक चिंता की प्रबलता महान कष्ट देती है। पुत्र की ब्याधि निवृतार्थ-नाउतों-ओझाओं के पास

हाथ जोड़ना, दुआ तावीज, फूँक-झार नौताय करवाने का कष्ट तथा वैद्यों डाक्टरों के आगे शिर झुकाना, तिन का मुख ताकता, तिन के मुख माँगे पैसा अर्पण करना एवं तिन के अर्पण रहना, ये अनंतों आपत्तियाँ सहनी पड़ती हैं। नाउतों-वैद्य-डाक्टरों के पास जाने में पैसा की कमी से या संतोष बुद्धि से न जाने का विचार हो तो भी अन्य लोगों के कहने के भयसे जाना ही पड़ता है।

७—अपने निर्वाह में सर्व तरफ से तंगी सहके कमा-कमा कर पैसा को पानी के समान बहा-बहा कर पुत्र को उत्तम-उत्तम वस्त्र भोजन औषधियाँ खिलाय-पहिनाय के पढ़ाये-लिखाये, जब पुत्र बड़ा हुआ तब शादी का भी भार सहे। अब जो उसके मन अनुकूल कहीं अपना कर्त्तब्य व्यौहार न हुआ एवं प्रतिकूलता पड़ गई या पुत्र-पतोह विषयी पामर निकले, तब तो वे माता-पिता को ठेल दिये, अलग हो गये, सोचो भला! माता पिता को कितना कष्ट होता है?

८—यदि पुत्र अनुकूल है तो उसकी ममता में गरगाफ हो गये। कहा है—"निशिदिन चिन्ता करत अपारा। सबन केर मोते प्रतिपारा॥" (पंचग्रंथी)। यदि पुत्र प्रतिकूल बर्तीय-कुकर्मी निकला तब तो नाना अपमान का दुख, तिसकी अवदशा देख-देख नाना कष्ट होते। पुत्र अनुकूल है तब तो तिस की ममता के हिलोरों का झटका हृदय में हर क्षण दुख देता है और अपना कल्याण योग्य मानव जीवन तथा अपना

शारीरिक योग्य जीवन निर्वाह स्वयं न लेकर पुत्र के लिये समर्पण हो गया। सब प्रकार संकट ही संकट सहतेहैं, ये असह्य दुख लदा रहता है।

९—यदि कई पुत्र हो गये, तब तो दुक्ख की क्या कही जाय? अपार आपत्त्य। हरक्षण दुसःदुक्ख ही दुक्ख की प्रबल धारा जीवन भर चलती रहती है। कोई मर गया, कोई रोगी है, कोई चोर डाकू हो जेल में पड़ा है, कोई लड़-झगड़ के अलग हो रहा है, कोई मूक है या पागल है इत्यादि सब के मन भूतों की द्वन्द से एक माता-पिता का शिर कूटा जा रहा है, कितना महान दुःख? हरक्षण झंझट-चिंता-शोक-मोह-संताप, कलह-कल्पना, राग-द्वेष का पहाड़ चूर किये रहता है।

१०—पुत्र और बधुवें अब सारे घर धन जमीन आदि के हिस्सेदार बन गये, सर्व प्रकार से दबाने चूसने धमकाने नचाने लगे। ऐसे भयंकर दुक्खों को दुख न समझना भी महान मूढ़ता है।

११—पुत्रों के पीछे अनंतों दुक्ख हैं, कहाँ तक कहा जा सकताहै? तिन की अनुकूलता-प्रतिकूलता के पीछे परमार्थ रूप मोक्ष लैन तो सर्बस्व मटियामेल ही समझो। अपना मोक्ष योग्य मनुष्य जीवन नरक का घर ही हो गया तथा मोक्ष सुख नहीं के समान हो जाता है। पुत्र की भावना-अपनपौ मानना सर्व प्रकार मोक्ष से गिराने में हेतु है। कहा है—

"मानि मानि बंधन में आवा। निज कर्त्तब्य में आप बँधावा।।"

(निर्णयसार)

सोरठा–पुत्र सदा दुख रूप, मिल अनमिल सब भाँति से।
बिना ज्ञान दुख कूप, मिल अनमिल के भाव तजि॥
नहिं कोइ अपन परार, आयों निज कृत भोग हित।
यहि तन कर्म सुधार, तभी अहै जीवन सफल॥
सोरठा–"गुरू संत आधार, और न रक्षक कोइ कितै।
बन्दीछोर उदार, नहिं भूलै तव यश मुझे॥"

पुत्र सबंधी एकादश दुःख समाप्तः (साखीसुधा)

बहेन जी! यदि पूर्व की कोई बलिष्ठ अपनी ही सौभाग्य है, तभी सुधर्मनिष्ठ पुण्यात्मा सुशीलपुत्र प्राप्त होकर सर्वाङ्ग सुख सुविधा पहुँचाता है, किन्तु सर्व प्रकार लोक-प्रलोक में सदा सहायक सुधारक बन्दी छोर संत गुरु ही हैं।

साखी– 'साँचाशब्द बताइया, साँचा दिया मुकाम।
ताते बन्दत हौं तव चरण, साँच गुरू सत नाम॥'

और भी— (पं० को०)

'गुरु हैं सब दुख मेटन हारे। करि पुरुषारथ जीव उबारे॥'

(गुरुमहिमा)

"गुरु बिन भवनिधि तरे न कोई। जो बिरंचि शंकर सम होई॥
गुरु के बचन प्रतीत न जेही। स्वप्ने हु सुगम न सुख सिधि तेही॥"

(रा०)

दोहा– "गुरु समान तिहुँ लोक में, और न दूसर देव।
ताते शौनक कीजिये, गुरु चरनन की सेव॥"

(विश्राम०)

बहेनजी देखो ! जक्त में परमज्ञानी सच्चे उद्धारक सद्गुरु देव ही होते हैं, सो तुम्हें आगे प्रत्यक्ष ही हो जायगा किंतु और तो देवी-देव, भूत-प्रेत, तीर्थ-मूर्ति जड़ रूप तथा भ्रम रूप मिथ्या कल्पित ही हैं। श्री कबीर साहेब कहे हैं—

"माटी के कर देवी देवा, काटि काटि जिव दइया जी।
जो तोहरा है साँचा देवा, खेत चरत क्यों न लेइया जी॥"
"ये भ्रम भूत सकल जग खाया जिन जिन पूजा ते ज़हँड़ाया॥
अण्ड न पिंड न प्राण न देही, कोटि कोटि जिव कौतुक देही॥
बकरी मुरगी कीन्हेउ छेवा, अगल जन्म उन्ह औसर लेवा॥
कहहिं कबीर सुनो नर लोई, भुतवा के पुज़ले भुतवा होई॥"
साखी—कबिरन भक्ति बिगारिया, कंकर पत्थर धोय।
अंतर में बिष राखि के, अमृत डारिनि खोय॥
तीरथ गये ते बहि मुये, जूड़े पानी नहाय।
कहहिं कबीर सुनो हो संतों, राक्षस होय पछिताय॥
तीरथ गये तीन जन, चित चंचल मन चोर।
एकौ पाप न काटिया, लादिन मन दस और॥
तीरथ भई बिष बेलरी, रही युगन युग छाय।
कबिरन मूल निकन्दिया, कौन हलाहल खाय॥"
"दशरथ सुत तिहुँ लोकहि जाना, राम नाम का मर्म है आना॥"
"हृदय बसे तेहि राम न ज़ाना॥"
"दिल में खोज दिलै में खोजो, यहै करीमा रामा॥" (बी०)
'धीरज दया तत्त्व संयुक्ता, राम भूमिका बासक युक्ता॥'(पं०शु०)

इन उपरोक्त प्रमाणों से सर्व कल्पना ज़ड़ भ्रम को छोड़ के सत्य का पक्ष हृदयांगम करें तभी अपना उद्धार होगा कहा है—

साखी– 'साँच बराबर तप नहीं, झूँठ बराबर पाप ।
जाके हृदया साँच है, ताके हृदय आप ।।" (बी०)

बहेन कमला देवी ! मैंने श्री सद्‌गुरुदेव बन्दीछोर से सुना समझा तो बहुत कुछ परन्त अब जो जो सद्‌गुरु बन्दीछोर के बचनामृत का भाव मेरे स्मर्ण में आया सो आप के सामने यथार्थ रूप से सूचित की, फिर कल तो सद्‌गुरु से भेंट होने पर एक से एक अनुभव ज्ञान सुनकर आप सर्व प्रकार से संतुष्ट हो जावेंगी, अब आप सर्वों से सादर-जयबार साहेब बन्दगी-नमस्कार ।

कमलादेवी हाथ जोर के— आप सर्व बोधेश बहिनें धन्य हैं । अब तो आप ही के प्रबचनों से मुझे बहुत कुछ समझने में आ गया । प्रिय बहेनजी ! आपने तो हृदयक असूझ आँखों से बहुत कुछ अज्ञान माड़ा निकाल दिया । वास्तव में पुत्र हेत कल्पना करना महा मूढ़ता ही है । मैं भ्रम बश दुख को ही सुख मान के पागल हो रही थी । बहेन जी ! अब तो हृदय बहुत शीतल हो गया । धन्य ! धन्य !!

[२–बृद्ध-भानुमती देवी द्वारा उर्मिला देवी को समझौता]

विद्यादेवी द्वारा कमला देवी प्रति एक डेढ़ घण्टा समझौता होने के पश्चात् अब सुशीला की माता-बृद्ध भानुमती देवी घर

के बच्चों को खिला-पिला-सुला के आकर बैठीं और कहने लगीं कि बेटी उर्मिला ! तुम्हें दुक्ख तो बहुत ही होगा सो मैं खुद जानती हूँ । देखो ! मैंने अपनी बेटी सुशीलाका ब्याह एक कुलीन घराने में धनाड्य तालुकेदार के सुपुत्र के साथ कर दिया था, विवाह में बहुत कुछ खर्च पानी किया था, मेरे दामाद जी भी बड़े सुशील थे, पढ़ने में तीव्र बुद्धि होने से वे हर कक्षा में प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होते गये, उन्हें पुरष्कार रूप वजीफा सरकार से मिलता रहा । ब्याह के चार वर्ष बाद तिन का देहान्त हो गया । तिस करके हमारी लड़की तथा हम सबों को बहुत ही कष्ट था, परन्तु इस घटना के एक साल अन्दर ही हमारे पुत्र ने सद्गुरु देव बन्दीछोर से भेंट करवा दी, उन प्रभु के सत्संग सेवा से हमें तथा बेटी सुशीला को भी बहुत कुछ ज्ञान अनुभव प्राप्त हो गया, अब न हमें शोक है, न हमारी बेटी को शोक है । हम सभी बोधक बन्दीछोर के पदार्पण हो तिन गुरु वचनामृत प्रमाण मानव जीवन सफल कर रही हैं । बेटी उर्मिला ! इस जगत सराय में कोई किसी का नहीं है । अपने-अपने कर्म संयोग से सब-सबसे मिलते और छूटते हैं । बेटी ! तुमने कभी कहीं 'राजा निर्मोही, की कथा सुनी है या नहीं ?

उर्मिला– माता जी ! एकबार अपने यहाँ एक कथा वाचक द्वारा राजा निर्मोही की कथा सुनी थी ।

भानुमती देवी–देखो ! उस राजकुमार की पत्नी का यह निम्न बचन याद होगा ?

दोहा— "तपिया पूरब जन्म की, क्या जानत हैं लोग।
मिले करम बश आय हम, अब तो हुआ बियोग ॥"

वास्तव में यह बात बहुत पक्की है कि अपने कर्मों का मिलान जिन-जिन के कर्मों से जितने दिन का होगा उतने दिन उन मिलानिक कर्मी-प्राणियों से सम्बंध होकर कर्म भोग भोगना होगा। जब उस के मिलानिक कर्म समाप्त हो जावेंगे बस उसी क्षण तुरन्त उस ब्यक्ति से वियोग हो जावेगा, चाहे शरीर रहे-रहे संयोग छूटे या शरीर त्याग होकर सम्बंध टूटे, कर्म समाप्त होने पर सम्बंध बने रहने का कोई उपाय नहीं। विचार करें! जीव सबके अलग-अलग हैं, कोई जीव किसी का नहीं, केवल कर्मानुसार सम्बंध पड़ने पर अपना-अपना रिस्ता जोड़ कर मोह ममता करते, सब एक दूसरे को अपना करके मानने लगते हैं, जैसे ट्रेन में मनुष्य अपने-अपने टिकट लिये न मालूम कहाँ-कहाँसे आ-आकर एक डब्बे में बैठे हैं, साथ पड़ने से वे सब आपस में मोह-ममता कर लिये, जब अपने टिकट की स्टेशन आयी तब वहीं उतर लिए। अब उतरने वाले से मोह ममता करो तो क्या हुआ? ब्यर्थ है। वह अपने टिकट समाप्ती पर उतरेगा अवश्य। इसी प्रकार प्रारब्ध कर्मरूप टिकट समाप्ति होने पर शरीररूप डब्बे को अवश्य त्याग करेगा। सम्बंध संयोग पड़ने पर अपनइत मान कर मोह-ममता करना भूल है।

जब तक जिसका साथ पड़े, कर्म संयोग रहे तब तक सबों से प्रेम पूर्वक बर्ताव करे, जब वह प्राणी अपने कर्म भोग समाप्त

करके जा रहा है, तो तुम अपने कर्म को याद करो, वह जाने वाला तुम्हारे कर्मभोग लेकर नहीं जायेगा, तुम अपने कर्मों का भरोसा पकड़ो। यदि अपने कर्म अच्छे हैं तो सदा अच्छा अर्थात् सुख ही रहेगा। यदि अपने कर्म बुरे हैं तो कोई भी अपने कर्म देकर तुम्हें सुख न दे सकेगा, क्यों कि पूर्व कर्म (प्रारब्ध) अदृश्य होते हैं 'मिट्टी में छिपे हुये बीजवत्,। बीज रूप कर्मों के सरूप की रचना वर्तमान में जैसी वृक्षाकार देह बन गई है, उसे कोई भी घटा-बढ़ा नहीं सकता। मनुष्य देह कर्म भूमिका होने से इस देह के दृश्य ब्यवहार-बर्ताव-क्रिया, सुसंग-कुसंग द्वारा भले घटा-बढ़ा ले, किन्तु जितने कर्मों से देह का रूप बन चुका है, जैसे नर या नारि, हिज़ड़ा (नपुंसक) या देह की उमर आदि, ऐसी इस देह की कई ब्यवस्थायें कभी और-तौर नहीं हो सकतीं हैं। कोई-कोई लोग देह की उमर का घटाना-बढ़ाना जो कहे हैं सो केवल भ्रममय रोचकता तथा भयानक मात्र कथन है, यथार्थ नहीं। उमर का घटना बढ़ना राई-रत्ती, पाव सैकण्ड मात्र नहीं हो सकता, देह समाप्तिरूप कर्म अदृश्य है, अदृश्य भोग में पुरुषार्थ नहीं लगता। प्रत्यक्ष देखो! तमाम ज्ञानी-अज्ञानी बड़े से बड़े अनुभवी शोधक सिविलसार्जन-डाक्टर-राजवैद्य व अनंतों योगी- यतियों की देहैं बनी और समाप्त हो गईं, आज उनकी देहों का नामोनिशान तक नहीं है। कहा भी है—

"जैसी कर्म भावती होई। तैसी मृत्यु पाव सब कोई॥"

ऐसे यथार्थ बोधेश ज्ञानी जन उमर के घटाने-बढ़ाने की कभी भी पुरुषार्थ भूलकर भी नहीं करते, ज्ञानीजन सदा वर्तमान के मनोमय सः कर्त्तब्य साधन सुधार पर कटिबद्ध रहते हैं। जो तुमने 'राजा निर्मोही, की कथा सुन रक्खी है वह बिल्कुल ठीक मानने तथा हृदयांगम करने योग्य है, उसे अनुकरण कर अपनी प्रारब्ध जीवनयात्रा चलाते हुए स्वबोध विचार में स्थिर रहें।

बेटी! अब तो यह समझ सामने रखना हर क्षण अति आवश्यक है कि अपना भविष्य शेष जीवन उत्तम मानव तन के जितने यथार्थ कार्य- कर्त्तब्य हैं उन्हें सद्गुरु संतों व सज्जनों द्वारा समझें और तिसी अनुसार धारणा बनाकर निःसंशय सुकर्त्तब्य पोषी बनें, उत्तम सुयोग्य मानवतन पाकर अब पशुवत् बुद्धि, भोग कर्त्तब्य त्याग कर सदा ब्रह्मचर्य जीवन पालन करना सर्वोत्तम कर्त्तब्य-पुरुषार्थ है। ऐसी परमार्थ मय सुयोग्यता प्राप्त होना कोई पूर्व जन्म की संचित सौभाग्यता ही है।

यदि पति- पत्नी दोनों साथ ही रहते हुये ब्रह्मचर्य व्रत पालन करें, तब तो वे मानों ऋषि- मुनि ही हैं। यदि पति-पत्नी दोनों में किसी एक की वियोग होने की योग्यता पड़ गई तब तो ब्रह्मचर्य व्रत पालने में सरलता ही समझो। सविधि ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना मनुष्य तन में परम मान्यवर तपस्या है।

[विधवा मुमुक्षाहेत— एकादश सुधार अंग]

१— मुमुक्षा देवियाँ ब्रह्मचर्यदशा पालनार्थ कुसंगसे अत्यन्त ही पर्हेज़ करें, सुयोग्य शुद्धजन सम्बंध से देह निर्वाह लेवें। निर्वाह में शुद्धता सादगी सातसपन का लक्ष रक्खें।

२— राजसी विषयी मनुष्य- नर नारियों को मानव पद से भ्रष्ट समझें, विषयी स्त्री पुरुषों का संसर्ग काम कला ही सर्व बंधनों का कारण तथा त्रयताप में जलाने का बड़वानल है, इस काम कलामय अष्ट मैथुनों को सदा निर्मूल रखना- परम हितकारी है, विषयी नर-नारियों को घृणा दृष्टि से देखें। खान- पान वस्त्राभूषण और भी सारी व्यवस्थायें राजसपन से रहित रक्खें।

३— तामसपन तो सदा घोर अंधकारमय समझें। मार- गाली झगड़ा, क्रोध- ईर्षा (डाह) हिंसा, गंदगी, मलेक्षपन, मांस- मद्य नशा, जूठा, सड़ा, गंदा भोजन खान- पान वस्त्र देह क्रियाओं में गंदगी- अशौच पन. असभ्य क्रूर भाव युक्त भद्दे गंदे बोल चाल आदि सभी तामसी व्यवस्थाओं- व्यवहारों से अत्यन्त घृणा माने और तिन से पर्हेज करें।

४— सातसी कर्त्तव्य— बोल- चाल, रहन- सहन, खान- पान, वस्त्र और भी सर्व बर्ताव- सादा, सरल, कोमल, विमल यथाशक्ति स्व- पर हितैषी रखना ही स्वपद रक्षक समझें और धारण करें।

५— विवेकी वैरात्यवान स्वबोधक सद्गुरू संतों में

कल्याण दृष्टि से प्रेम पूर्वक सत्संग श्रवण- मनन करें और स्वपद बोधक सद्ग्रंथों का सदा अध्ययन करते रहें।

६— जिनके द्वारा भ्रमनाशक सत्योपदेश- अहिंसा, ब्रह्मचर्य, मोक्ष उत्साह, जगत उपरामता, मनोसुधार, शुभ-गुण— दया क्षमा सत्य शील संतोष विचार विवेक आदि सद्रहस्यों का विकाश होवे, ऐसे पूज्यवर शिरोमणि चैतन्य इष्ट सद्गुरु- संतों की मर्य्यादा पूज्यता रखते हुए विधिवत् तिनकी सर्वाङ्ग भक्ति- सेवा- उपासना में सदा अर्पण रहें।

७— नियमतः तिन इष्ट के बचनामृत समूह सद्ग्रंथों का नित्य पाठ-पठन, कथा-कीर्तन, भजन-ध्यान गान करते रहना ही अपना परम कर्त्तव्य समझ के धारण करें।

८— सदा कल्याण कृत पुरुषार्थ हेत अर्पण रहना। किसी प्रकार से अमीरी आलस अभिमान आदि दुर्गुणों का अंकुर हृदय में न आने देना, ढिठाई अमर्यादापन कभी भी न जाने पावे। सदा इष्ट की योग्य कानून-इशारा देखकर बर्ताव करें, सदा नम्र सुशीलपन ही में प्रसन्न रहें।

९— राज-काज मायिक पदार्थं तथा भोगों की इच्छा आसक्ति ही जगत बंधन त्रयतापों का कारण समझना, मायिक ऐश्वर्य ही जगत जाल में फँसाने का लासा है।

१०— बोधक इष्टके प्रेम प्रवाह में सराबोर रहते हुए जगत के मायिक भोग ऐश्वर्य से सदा अभाव रखना ही स्व शांति तथा मोक्ष ठहराव की नींव है, तिसे मज़बूत रखना।

११-- अपने आप स्वरूप चैतन्य को देह से सदा भिन्न समझ कर स्त्रियत्व स्वभाव को बदल के चैतनत्त्व भाव रखना चाहिये। कहा है--

"हंस न नारी पुरुष है, ये सब काल को फन्द।
गाँस फाँस सब मेटि के, साहेब शरणानन्द ॥"(पं०टकसार)

ये एकादश सुधार के अंगों को दृढ़ रखते हुए सदा स्वात्म बोधभाव में स्थिर रहना सर्वोपर कर्त्तव्य है, सोई बनाना चाहिए। बेटी उर्मिला! तुम्हारे हित जो कुछ मेरी बुद्धि में जचा, याद आया सो सप्रेम कह सुनाई। अब कल सवेरे सब के साथ जाकर सद्गुरू से सादर भेंट करना और कुछ दिन यहाँ ठहर कर सद्गुरु सत्संग सेवा दर्शन से सर्वाङ्ग निःसंशय स्वबोध प्राप्त करना। अधिकतर सद्गुरु की दया ही सब कुछ है।

उर्मिलादेवी– माता जी! आपने मेरे लिये बहुत दया की। आपके तथा सर्व बहिनों के चरणों में मेरा कोटि सः नमस्कार है। हमें आप माताजी के ज्ञानांजन से नेत्र खुल गये, अब ठीक-ठीक सूझ पड़ रहा है कि दुनियाँ का खेल बिल्कुल झूँठा तथा बंधन रूप ही है।

बहेन विद्यादेवी के प्रबचन भी मेरे हृदय पर काफी असर किये। आप सबों का सहारा लेकर सद्गुरु के पद कमलों में अब मैं अवश्य सर्बस्व भेंट कर ब्रह्मचर्यव्रत के यथार्थ नियमों सहित अपना जीवन सफल करूँगी।

भानुमतीदेवी कहती हैं— बेटी कौशलादेवी! हमें कहते-

बोलते करीब एक डेढ़ घण्टा हो गया होगा, अब मैं थक भी गई हूँ। देखो! इन धर्मेशा बेटी को तुम अपनी बुद्धि अनुसार जहाँ तक बन सके गुरुआदेश सुना समझा दो, क्योंकि जो तुम्हारे पर बीती है लगभग वही इन धर्मेशा बेटी पर बीती है। अपनी वर्तमान की हुई औषध यथाशक्ति इन्हें अवश्य पिला दो।

धर्मेशादेवी— बहेन जी! आप अपना बचनामृत मुझे अवश्य प्रदान करें, अभी तक जो कुछ मैं सुनी उससे मेरे हृदय में बहुत कुछ सूझ आ गई। कितनी अन्य बीमारियाँ चली गईं किन्तु मेरी हड्डी के घुसे ज्वर मिटाने हेत आप अवश्य अमरबूटी पिलाने की कृपा करें, मैं सादर आप सबों के चरणों में करजोर बन्दगी प्रणाम कर रही हूँ।

[३—कौशलादेवी द्वारा धर्मेशादेवी को समझौता]

कौशलादेवी— बहेन धर्मेशादेवी! आप के और हमारे पूर्व के कैसी मिलानिक कर्मों की योग्यता बनी थी, लगभग एक तुलना हो गई।

१—बहेन जी! आप पढ़ी लिखी तो हम से ज्यादे ही हैं फिर विद्वानों के घर की लड़की सभ्य हैं, वाराणसी आदि धर्म क्षेत्रों में भी रही हैं, कुछ धर्मकथा पहिले से ही सुनी समझी हैं तभी तो स्वधर्म रक्षार्थ पति अंधविश्वासी न बनीं। लोगों ने स्त्रियों को अर्धाङ्गनी कहा है, सो सर्व साधारण जन इसका भाव नहीं समझते।

सुनो— जैसे दो मित्र एक रोज़गार करने को चले, उस

रोज़गार में दोनों योग्य सलाह दें, तिसी यथार्थ नियमानुसार दोनों जन गृही कर्त्तव्यमय रोजगार की पूर्ति करते रहें, तहाँ हानि-लाभ के अर्ध-अर्ध भागी होंगे। उन दोनों में जो कोई छली-कपटी अन्यायी तथा अयोग्य वर्ती होगा तो यथार्थ गृही कर्त्तव्यमय रोजगार में उसकी सलाह (सम्मति) कैसे माननी चाहिये ? साथ की मित्रता कैसे निपटेगी ? रोज़गार के अर्ध-अर्ध भागी कैसे होंगे ?

इस प्रकार सर्व जीव अलग-अलग के हैं, पूर्व के कोई कर्म वासना का मिलान होने से दोनों की एकता हुई, गृहीधर्म कार्य रोज़गार हेत कर्म मिलानी जीव मित्र-मित्र साथी हुये, तिसमें एक के गृही रोज़गार के अयोग्य कर्त्तव्य वर्ताव से उनका रोजगारिक साथ छूट गया, वे एक दूसरे के प्रतिकूल वर्ती हो गये, तो अब रोज़गार में तहाँ कोई किसी का साझी नहीं रहा। अपनी-अपनी योग्य अयोग्य आमदनीमय कर्म के अपने-अपने भागी होंगे, तैसे ही स्त्री-पुरुष के गृह वर्तावमय रोज़गार में समझें।

यदि हठ करके युवती को देह भाव में अर्धांगिनी ही माने तो अब यदि पुरुष बीमार हो गया या कुष्टी हो गया, तो स्त्री के आधे अंग में बीमारी तथा कुष्ट हो जाना चाहिये। यदि स्त्री अंधी है तो पुरुष की भी एक आँख खतम हो जाना चाहिये। यदि पुरुष मरता है तो स्त्री का एक अंग मरना चाहिये। यदि पुरुष की देह मोटी या दुबली है

तो स्त्री की भी उसी अनुसार अर्ध देह दुबली तथा मोटी होना चाहिये। यदि स्त्री काली है तो पुरुष का एक अंग काला होना चाहिये। सो ऐसा सर्वत्र अर्धाङ्ग क्यों नहीं है? याते अर्धाङ्गनी कहना केवल व्यवहार चलाने हेत मैत्रित्त्व भाव पुष्ट किया गया है, कुछ कर्म सुधार में पुरुष के गिरते देख, तिस के पीछे स्त्री को गिरना नहीं चाहिये, केवल वाणी रोचकता की आँधी में उड़ना महा भूल है, बल्कि कथन के आखिरी यथार्थ भाव को समझना चाहिये।

स्वार्थ व्यवहार दृष्टि से कामासक्ति विकार को शांति होने तथा रोकने के लिये एक मेंड़ बना दी गई है। अगर पुरुष कहीं कामासक्ति आदि नाना दुर्व्यसनों में गिर कर डूब रहा है, किसी प्रकार नहीं रुकता है, समझाने से भी नहीं मानता है, तो उस कुकर्मी पागल अंधे पुरुष के पीछे स्त्री मत आँख फोड़े, खंदक में न गिरे, कुकर्मी मत बने, जब पति नेक सलाह नहीं मानता है तो वह पुरुष मनुष्य नहीं बल्कि कूकर-शूकर पशु से अधम पशु है, तब मनुष्य और पशु का कौन साथ? कौन अर्धाङ्गनी? कौन मित्रता? व्यर्थ कल्पना का बोझा मत ढोवे, उस कुयोगी के पीछे अपना पशू क्यों बने? मानवपन न खोवे। उत्तम मनुष्य तन जीव को प्राप्त होने पर जितना ही कामासक्ति, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, छल-कपट आदि नाना व्यसन-दुर्गुणमय पापों को त्याग कर सुकर्मी-सुधर्मी, मोक्ष कर्त्तावी बनकर जितना आगे बढ़ सके

अवश्य बढ़े तभी मनुष्यपन है, सुकर्त्तव्यधारी का साथ ही असली साथ है, वही मित्र है, बाकी महा नीचपन कूकर-सूकर से भी तुच्छ घृणित त्यागने योग्य है। कहा भी है—
"कामी क्रोधी लोभी मोही। दुष्ट जीव जग जानहु सो ही।।"
(पंच०मा०) "ऊँट बैल का जोत कैसे निबहेगा ? हंस और कौव्वे की मित्रता कैसे बनेगी ?" जब सभी जीवों का खाश सरूप एक समान चैतन्य पारख रूप है, जीवों के खाश स्वरूप में कोई घट-बढ़ नहीं, न किसी जीव से किसी जीव की उत्पत्ति ही हुई है, तब कर्म पुरुषार्थ की एकता बिना कौन किसका है ? अर्थात् कर्मों की एकता मिलान बिना कोई किसी का खाश साथी नहीं है।

२—बहेन जी ! अब मैं धर्मक्षेत्र के सम्बंध में कह रही हूँ, जगत में चारों तरफ नेत्र खोल के देखो ! भेष में भी बहुत प्रकार के संत- भक्त दृश्य हो रहे हैं। कहा भी है—

"साधु भेष धारे बहुत, अमित काज के हेत ।।" (पंच०)
कीमती असली चीज़ थोड़ी ही होती है, काँच तो बहुत मिलेगा किंतु हीरा तो कहीं बिरले के ही पास होगा। कहा है—

श्लोक—"शैले शैले न माणिक्यं, मुक्तकं न गजे गजे।
साधुओ न सर्वत्र, चन्दनं न बने बने ।।"

साखी— "हीरों की ओबरी नहीं, मलयागिरि नहिं पाँति।
सिंघों के लेंहड़ा नहीं, साधु न चलें ज़माति ।। (बी०)

राजस तामस नशा ढोंग दम्भ छल कपट कामादि रहित

शुद्ध सातसी दशा युक्त सदा सत्य साधन सद्‌गुण सम्पन्न पारख बोध प्रकाशक विवेक वैराग्य परायण स्वबोध दशा में जो सदा शांत रहते हैं वही असली संत हैं। जो कहा जाय कि बृहद विराट में कोई कहीं संत साधु हैं ही नहीं सो बात नहीं, किन्तु असल में जिसे संत-साधु कहते हैं वे कम संख्या में हैं।

जिन भेष धारी साधु संत कहलाने वालों के साथ जगत आडम्बर- मायिक व्यवहार है, एवं नाना भाँति के राज ठाठ, मान महंती, ऐश्वर्य दिखावा, रोचकता, भयानकता, हज़ारा-लक्कखाहा जमात, नाना साज, महल- सिंहासन, हाथी- घोड़े, कार-मोटरें, ट्रकें, सेना- हुकूमत व मायामय साज भोग रहे हैं तथा नाना भेष की तड़क- भड़क, कोई तो देखाऊ भयंकर बड़े-बड़े जटाधारी नखाधारी-नग्नधारी, कर्धनाधारी, अग्निधारी, जलधारी. दूधाहारी व फलाहारी, श्राप-बरदान देन वाले इत्यादि ऐसे भ्रममाया में स्वयं फँसे तथा अन्य को फँसाने वाले माया पंथी बाचाल नकली गुरुवा (बंचक) हैं, उन से सावधान एवं दूर रहने में ही सज्जनों का कुशल-कल्याण है।

जगत माया भार आडम्बर रहित पारख बोध परायण स्व-पर के सच्चे- उद्धारक यथार्थ वैराग्यवान विवेकी संतों में ही श्रद्धा निष्ठा रखना बहुत जरूरी है, वही उद्धारक जगत दुख समुद्र के सच्चे नाविक हैं' उन के ही चरणों में सर्वस्व भेंट सहित अर्पण होने से कल्याण है "जीवन के कल्याण हित,

सच्चे सद्गुरु पेख" जैसे नाव में अपने सर्व अंगों सहित बैठ जाया जाता है, तैसे सच्चे सद्गुरु नाविक के पद पोत में सर्वाङ्ग बैठ जाने से सरलता पूर्वक वे दुख सागरसे पार कर देवेंगे। कहा है—

"जग समुद्र मधि को आधारा। गुरु कृपालु पद पोत निहारा॥
(राम लषण सम्वाद पंचवटी)

श्लोक-अपार संसार समुद्र मध्य, निमज्जतोमें शरणं किमस्ती।
गुरू कृपालो कृपया वदेतद्, विश्वेश पादाम्बुज़दीर्घ नौका॥
(प्रश्नोत्तरी)

३— बहन जी! अपना शुद्ध वर्तमान तो ऐसा ही होना चाहिए कि अब अहिंसा धर्म पालन करते हुए योग्य सातसी-अन्न जल वस्त्र रहन-सहन-बोल-चाल बर्ताव सहित गुरुज्ञान सत्संग भक्तिभाव परायणतः स्त्रित्त्व पुरुषत्त्व भाव मिथ्या समझ कर आत्म भाव तथा सब में आत्मदृष्टि रख कर पुरुषासक्ति, स्पर्शासक्ति रहित अर्थात् ब्रह्मचर्य व्रत धारणा में सदा एकरस तत्पर रहे, ब्रह्मचर्यव्रत ही स्व उद्धार की असली नींव है।

४— किसी भी मायिक भोगों तथा भ्रमिक विषयी राजसी नर-नारियों के ममता-मोहासक्ति में न फँस कर केवल प्रेमभाव रखते हुए प्रारब्धमय शरीर यात्रा चलावें। कुल्टा-करकसाओं से अत्यन्त दूर रहें।

५— जगत में मायिक ग्राम देश समाज तथा राजकीय देश-विदेशों, सभा-सुसाइटियों के हलचलों देखावटी चमत्कारों, भोग विषयक ऐश्वर्यों में न बहें, न दौड़ें, सदा

जीव उद्धारक परमार्थ दशा में धीर-गम्भीर रहते हुये माया जाल से मन मार कर पवित्र शुद्ध दशा से बर्तें, अपनी एकरस मनोवृत्ति शांति-स्थिर रक्खें।

६—अखण्ड भक्तिभावी 'सेवरी' की कथा तो सुनी ही है। देखो! वह पूर्व जन्म में राजपुत्री होते हुए सर्व राजभोगों से सदा उपराम रहती थी। वह राजपुत्री भक्तिभाव एवं वासना रूप कर्म संस्कार से दूसरे जन्म में शीघ्र भक्ति लक्षण लेकर पैदा हुई, जो कि शादी में हिंसा और नाना बंधन स्वयं देख समझ के ब्याह-(लग्न) त्याग कर आरण्य में भागते-भागते संतों से मिली, तिनके सत्संग सेवा दर्शन करते हुये जाके गुरु-मातंग ऋषि की शिष्य हो गई। कुछ काल तहाँ पंपासर के आश्रम में रहकर गुरु तथा संतों की सेवा-सत्संग भजन करती रही, तहाँ ही राम-लक्ष्मण के भी दर्शन पा गई, तिनकी भी सेवा उपासना करके अपना जीवन सफल करली। ऐसे ही हम-आप सर्व महिलायें कामासक्ति आदि नाना दुर्गुणों को त्याग के भक्तिभाव में परायण हो अपना उद्धार करें, सद्गुरु की भक्ति-सत्संग ज्ञान धारणा में ही यथार्थतः उद्धार है।

७—हम सब मोक्ष इक्षुक निर्बल घटधारी हैं याते पुरुष घट धारियोंवत् आश्रम को त्यागकर यत्र-तत्र देश-विदेशों में भ्रमण करना हम निर्बलों को बाधक है, इसलिये योग्य स्वआश्रम में ठीहावत् निवास कर भोगासक्ति रहित स्व सज्जन सम्बंधियों में सयुक्ति प्रेम भाव बर्ताव करें, तहाँ ही

सद्गुरु संतों के दर्शन-सत्संग, पाठ-पठन, पूजा-आरती सविधान करते रहें। गुरु सत्संग, सज्जन समाज यही 'तीर्थराज, है, सो तीर्थ प्रमाण पूर्व में 'सुशीला बहेनजी बतला ही चुकी हैं। मन इन्द्रियों को दुर्गुणजन्य कार्य संकल्पों से परहेज रखना 'व्रत, है। कहा है—"व्रत वही जो बुरे कर्म त्यागहु, और जो व्रत सो झूँठ पसारा"। मनोवेग को रोक कर सद्गुरु बोधकदेव के सद्रहस्य सः मूर्ति का ध्यान ठहराव तथा वृत्ति निरोध करना 'योग' है। शीत-उष्ण, भूख-प्यास, व्यर्थ का मान-अभिमान, आलस-प्रमाद के झकोरों में न डिगना, सहन करते हुए स्वपद में एक सम स्थिर रहना ही 'तपस्या, है।

८—चलते-फिरते, बैठते-उठते, सोते-जागते हर क्षण गुरु आदेश अनुसार देह मन इन्द्रियों तथा सर्व जड़त्व भाव से पृथक द्रष्टा परीक्षक अपने आप स्वरूप को सत्य अखण्ड नित्य-वस निराधार अविनाशी समझना असली ध्यान धारणा तथा आत्म चिंतन है, सोई बनाना चाहिए।

९—बहेन जी ! जो कुछ सद्गुरु संतों के सत्संग द्वारा श्रवण-मनन, साधन पुरुषार्थ कर शुभ गुण ज्ञान ध्यानादि अलौकिक धन इकठा किया जावे उस महान अमूल्य धन को बाहर-भीतर के लुटेरों से रक्षार्थ जीवनपर्यंत सावधान रहना चाहिये, वे लूटने हेत अनंत युक्तियाँ करते रहते हैं। इसी भाव पर मेरे हृदय में ठगों-लुटेरों की चालबाज़ी का एक चरित्र

स्मरण हो आया, आगे सावधानता हेत उसे भी आपके सामने सूचित कर रही हूँ। सुनिये—

बाहर के बिषयी पुरुष- धन-ऐश्वर्य, भीतरी- काम - क्रोध-
लोभ ये तीनों भाँति के ठग रूप में- 'गनेशी दादा, छेदी-
दादा और मुसई भइया की ठगौरी का चरित्र।

उदाहरण— जहानपुर नगरी में १ गनेशीदादा, २ छेदी-दादा, ३ मुसई भइया ये तीन ठग रहते थे, ये तीनों धनियों को लूटने में बड़े निपुण थे। तीनों में निपुण गनेशी दादा आपस में सलाह किये कि पंचाङ्गनगर के राजा साहेब के यहाँ चोरी अवश्य करना चाहिये। अब वे तीनों ठग बहुत दिनों से चोरी करने का दाँव सोच रहें थे। कुछ दिन बाद राजा साहेब के एकलौते पुत्र की शादी दूर देश की राजकन्या से तय हुई। नियत तिथि अनुसार बड़े सज-धज के धूमधाम सहित दूसरे दूर देश की राजधानी को बारात गई, राजा-साहेब के एकही राजकुमार था इसलिये सभी फौजी हाकिम सिपाही गुमस्ते छोटे-बड़े नौकर-चाकर सहुल्लास बारात में साथही चले गये, यत्र-तत्र कहीं एकाध टूटे फूटे बूढ़- बाढ़ मनुष्य रह गये थे। अब उन तीनों ठगों में अगुवा- 'गनेशी दादा' ने अपने दोनों साथियों से कहा कि अब तो संभव है कि चोरी का दाँव लग जायगा।

ज़िस दिन बारात चलीगई उसी दिन उजेरी चौथ थी, अब यहाँ राज़महल में महारानी सहित सब औरतों ने दादरि का

प्रबंध किया, दादरि फाटक पर रक्खी गई। गनेशी दादा तो दाँव लगाये ही थे, अब तीनों ठग इकठे हो गये। गनेशी दादा ने साथियों से कहा—देखो! हम किसी युक्ति से दादरि के पास जायँ गे तुम सब महल के पीछे औजार सहित बैठो, वहाँ से हम जैसा इशारा देंगे, वैसा ही करना, जहाँ से काफी धन मिले वहीं बैठना। सब बात तय हो गई। अब गनेशी दादा एक जनानी पुरानी धोती पहन करके राजमहल फाटक के सामने कुछ दूरी पर बैठकर औरतों के समान सः विलाप रोने लगे। इधर राजमहल फाटकपर दादरि रची है, इसे रोते हुये सुनकर महारानी ने दासी से कहा कि देख तो! बाहर रोती कौन है? दासी वहाँ पहुँची और रोने वाली से पूछती है कि तू यहाँ कौन आकर रो रही है? मंगल में अमंगल कर रही है। तब गनेशी-दादा बनी स्त्री कहती है कि बिटिया! मैं आउँ रानी साहेब के गाँव की तिवारिनि। बिटिया! मैं नाचै-गावै का अच्छा जानति रहिउँ, इस लिये मैं का गावै हेत एक जने बोलाय ले गये रहैं वहाँ मैं का देर लागि गै, जब लौटि के घर का आयों तो तेवारी नाराज ह्वै कै केवाड़ै नाई खोलिन, खेद दिहिन। तब मैं सोचिउँ, अब राति का कहाँ जाउँ? तब मैं फिर सोचेउँ, कि रानी साहेब मोरेन गाँव-नगर की बिटिया आयँ, हुवैं जाउँ, आजु उनके बेटवा का बियावहु है। हियाँ अवतै मोरे रोवाई छूटि कि तेवारी मैं का खेदि दिहिन।

दासी तुरंत रानी के पास जाकर सब हाल कही और यह

कही कि रानीसाहेब ! वे आप के नइहर की तेवारिन हैं। रानी अपने नइहर की तेवारिन जान कर बड़ी खुशी से कहती हैं कि ज़ा उसे तुरन्त यहाँ बुला ला। वह दासी उसे बुला लाई, बड़े स्वागत् से रानी ने उसे बिठाया। तब वह बनी तेवारिन कहने लगी कि बिटिया ! मैं गाना-नाचना अच्छा जानति हौं, मैं का तेवरी अजु नाराज ह्वै कै खेदि दिहिन, तब मैं बिटिया के मड़यम आय गइउँ। रानी ने कहा—अच्छा हुआ, देखो ! यहाँ दादरि भी रक्खी गई है, अब तुम तेवारिनि गावो। अब तेवरिन रानी से पूछती हैं कि बिटिया ! ई सब सामने ज़ो वैठी हैं सो को हैं ? रानी ने बताया कि ई तौ बेटवा की मौसी हैं, ई चाची हैं, ई दादी हैं, ई फूफू हैं, ई माई है, ई बहिनी हैं, ई भावज हैं यही सब नात-गोत हैं। तब तेवारिन कहती हैं कि बिटिया ! मैं तौ एक मोटि मैलि धोती मात्र पहिरे हौं, ई बड़ी-बड़ी बिटियन के सामने ऐसै गइहौं नचिहौं तौ इन सबका का नीक लागी ? कुछ सजि धजि कै नचतिउँ-गइतिउँ तब इन सब का कुछ नीकौ लागति। यह सुनतै सब जनी बड़ी खुशी हर्ष से अपन-अपन सोने का सुन्दर गहना उतार-उतार के तेवारिन के शिर से पाँव तक पहनने को देदीं और रानी ने दो हज़ार वाली साड़ी और दो हजार वाली चमकदार सुन्दर सुवरण से मढ़ी बेल-बूटों से कढ़ी बहु मूल्य अँगिया पहिना दी, अब सह सिंगार खूब सुशोभित हो तेवारिन खड़ी हुई और बड़ी खुशी-प्रशन्न चित्त से कह रही हैं कि बिटिया मैं गावइ जाति हौं,

अब तौ कोई बिटिया-बहुरिया कहूँ सोवती तो नहीं हैं ? कोई कहूँ अन्ते न रहै, सब कोइ आय के मोर नाचब गाउब खुब देखि सुनि लेवैं । अब सब जाग के आय गइं, कोई भी महल के अन्दर नहीं रहीं । गनेशी दादा रूप तेवारिन कहती हैं कि सबै बिटिया-नतिनिउ खुब सुनौ-द्याखौ !!

[भजन]

देखो ! जागो सुनो बेटी !! बनि गइ बरात ॥ टेक ॥
बैठी उजेरिया ए आवै न फिरि से ।
मोर गीत सुनो बेटी ! बनि गइ बरात ॥ १ ॥
बहुतै दिनन से सोच्यों विचार्यों ।
आजु खूब औसर ये बनि गइ बरात ॥ २ ॥
मड़वा के पाहुन लाभ कहँ पायउँ ।
मन के दिलाशा से बनि गइ बरात ॥ ३ ॥
मौसी औ माईं बेटवा की फूफू ।
सब ही उदार सोन दै गइ बरात ॥ ४ ॥
रानी औ बिटिया नतिनी बहुरिया ।
बाणी की मस्ती से बनि गइ बरात ॥ ५ ॥
ऐसै जगत भोग गाफिल जो होई ।
काहू कि हानि काहू बनि गइ बरात ॥ ६ ॥

इस गीत को महल के पीछे बैठे दोनों ठग समझ रहे थे कि दाँव लग गया, वे दोनों औजार लिए तय्यार बैठे हैं । रानी तेवारिन ये गाना करीब एक घंटा तक नाचीं-गाईं,

तत्पश्चात् बनी तेवारिन ने कहा—बिटिया ! अब कोई घर के अन्दर सोवति तौ नाई हैं ? मालूम हुआ कि अन्दर अब तौ कोई भी नहीं है, सब इसी नाच गाने की मस्ती में गरगाफ हैं। तेवारिन कहती हैं कि बिटिया ! अब इब द्वासर भजन औरौ बहुत बढ़िया है, मैं वहै गावइ जाति हौं, सुनौ !

[भजन]

भल ! जागृत कै राति, जोंधइया उइ कै, अथइ गई ।।टेक।।
छेदी दादा छेद कइ डारौ, मुसई जाव समाय । जोंधइया उ०
हियाँ गनेशी दादा दादरि रचे हैं, तुम मूसौ मन लाय । जोंघइया०
आरा में ढूँढ़ौ पेटारा में ढूँढ़ौ, ढूँढ़ौ तिजोरी मन लाय । जोंधइया उ०
कोठा में ढूँढ़ौ बरोठा में ढूँढ़ौ, ढूँढ़ौ अटारी मन लाय । जोंधइया उ०
तीनिउ चोरवै बटिया पारिन, रहि गईं सबै मुख बाय । जोंधइया उ०

इस भजन का इशारा पाते ही महल के पीछे बैठे ठग-चोर छेदीदादा ने तुरन्त सेंध फोड़ दिया और मुसईभइया सेंध में घुसे, दोनों मिलकर शीघ्र सारे घर भर की स्त्रियों के जो कुछ रखे रखाये सोने चाँदी के जेवर तथा और भी तिजोरियों को तोड़ के जो भी धन माल पाये वह सब केवल भजन गाते समय तक ही में सेंध द्वारा निकाल लेकर चले गये ।

इधर भजन गाय नाच के समाप्त कर गनेशीदादा रूप तेवारिन कहती हैं कि बिटिया अब द्याखौ ! मोरे मुहिं पर पसीना की बूँद । अब तौ बिटिया ! पसीना से साड़िउ भीजी जाति है, थोड़ा बाहर जाय कै उजेरे से तनिक अलग जुड़ाय

तौ आऔं। सबों ने कहा—हाँ! हाँ!! 'तेवारिन खुब गायो-नाच्यो, वाह! जाव-जाव तेवारिन जुड़ाय आऔ।

ऐसा कहि सुनि के दूर जाकर अँधेरे-अँधेरे चुपके से गनेशी-दादा गहने से लदे चले गये और अपने दोनों साथियों से मिल के निकल गये। इधर देर होने पर रानी ने दासी से कहा कि देखो! जाके तेवारिन को अब बुला लाओ। दासी जाकर उसे ढूँढ़ी, वह अब तेवारिन कहाँ हैं जो मिलैं। दासी आकर रानी से कही कि हुजूर! वह तौ कहीं हैं ही नहीं। तब सभी घबराईं और अन्दर जाकर देखीं तो सब का सामान गायब और तिजोरी अलमारी आदि टूटी खुली पड़ी हैं, सभी पछताते हाथ मलते रह गईं, अब क्या हो?

बहेन धर्मेशा देवी! इसका सिद्धान्त सुनो—बड़ा चालाक 'गनेशी- काम है' छेदी-क्रोध है, जो सब को छेदते रहता है और मुसईलोभ है जोकि शुभगुण रूप धन लूट के दरोदर दीन भिक्षुक-इक्षुक तृष्णालु बना के रुलाता है। उजेरियारूप साचेत-सज्ञान मानव जीवन मिला था तहाँ माया भोग मस्तीमें अज्ञान अँधेरिया छा गई, तिसी में काम-क्रोध-लोभ ये तीनों ठग अपना नाना विषयक जाल रूप राग-रंग फैलाय तिसी में मोहित करके उत्तम मनुष्यत्व गुण धर्म विवेक विचार आदि भूषण नाना साधन तपस्या रूप अमूल्य जीवनधन हरण कर निर्धनी कर दिये। अब सब प्रकार से असूझ अंध परमार्थधनहीन विषयी भोगी प्राणी चार खानि चौरासी के मध्य नाना संकट में पड़े

दर दर भटकते हाय-हाय कर रहे हैं, तहाँ ही प्रत्यक्ष मुख फैलाय-फैलाय सियार श्वानवत् रो रहे हैं।

इधर भेष मध्य धर्म क्षेत्र में भ्रमिक गुरुवा ठग-अद्वैतवादी, २-ईश्वरवादी, दैव भूत प्रेतवादी और नाउत ओझा, ३-जड़वादी नास्तिक भोगी विषयी ये तीनों सब मनुष्य प्राणियों का न्याय दया-सुधर्म-सत्य-ज्ञान-यथार्थ-भक्ति-वैराग्य-सद्बोध रहस्य-रूप धन हरणकर चौरासी का कीड़ा बना देते हैं।

हे बहेन! उपरोक्त प्रमाण इस जगत में धोखेबाज वंचक बहुत हैं वे सब रोचक-भयानक फन्दों से फसाने वाले हैं। गुरू का दिया धन-सद्गुण विचार बोधादि मोक्ष साज बहुत सावधानी पूर्वक साचेत रहने से बचता है। भीतर मन रूप ठग सबों का अग्रसर है, सब ठगों को लाकर जीव के पारलौकिक गुरुपद रूप मोक्ष सामग्री सुधर्म धन को लुटवा कर सुधर्म शुन्य कंगाल बना कर भटकाता रहता है, फिर वह व्यक्ति न इधर का रहा न उधर का, लोक परलोक-दोनों दीन से नष्ट हो जाता है, इस ठग नगरी में बहुत बच के रहना होगा। बहेनजी! अब मैं अपनी समझ अनुसार कह चुकी, पुरुषों की आसक्ती से तथा भोग इच्छा चाहना से रहित ब्रह्मचर्य व्रत ही मानवता तथा सुधर्म है। जैसी मेरी स्थूल बुद्धि है वैसी सद्गुरु की दी हुई शिक्षा जो कुछ स्मर्ण में आई सो कही हूँ, मेरे कहने में जो कुछ न बना हो सो मेरी प्रिय बहिने समयानुसार सूचना देकर मुझे सज्ञात कर देंगी, यही प्रिय बहिनों से नम्र निवेदन है। अब

आप सबों से कर जोर त्रयबार साहेब बन्दगी ।

धर्मेशा देवी– आप सबों के चरणों में कोटि सः प्रणाम है। धन्य भाग्य ! आप सबों के वचनामृत हमारे लिये रामबाण हो गये, अब हम अवश्य सर्वस्व निछावर होकर सद्गुरु देव की भक्ति करेंगी । हमारे भाई भी सूचना दिये थे कि अपना सुधर्म मर्यादा बलिष्ठ करो । "जस रोगिया औषध चहै तैसै प्रभू मिलाय ॥" आप सब हमारे शिरमुकुट धन्य हैं ।

भानुमती देवी– देखो बेटियो ! अब रात का समय अधिक हो गया है, सद्गुरु देव के आश्रम पर जाने वाले सत्संगी जन भी आने वाले ही हैं । सुशीला बेटी ! इन तीनों बेटियों को जहाँ तुम्हारा आसन बिछौना है वहीं सप्रेम विधिवत् बिछौना बिछा कर सैन कराओ, जो-जो कुछ इन को ज़रूरत समझना वह सादर लाकर सेवा में भेंट करना, सर्वाङ्ग सेवा की फिक्र रखना । आप तीनों बेटियाँ भी कोई संकोच मत करैंगी, यहाँ तो गुरुदेव का धर्म क्षेत्र है, हम सब तो सद्गुरुदेव के और तिन के प्रेमियों की सेविका हैं, ये सब छोटे बड़े बच्चे उन्हीं के दास हैं । "हम सब का यहाँ कछू नहीं है, जो कुछ है गुरु केरा है ।"

सुशीला आदि सब सत्संगिनि बहिनैं आपस में सप्रेम एक स्वर से नम्र हो शिर झुकाकर त्रयबार साहेब बन्दगी करके सत्संग पश्चात् कीर्तन कहने लगी ।

[कीर्तन]

हरे गुरु देवा हरे प्रभु देवा ।
काशी में आये उद्धारक गुरू देवा,
जीवन उद्धार कियो आय प्रभु देवा ।
गाते चलो मन ! हरे गुरु देवा, हरे प्रभु देवा ॥टेक॥
पारख से शोध करि जालन को तोड़ि दियो,
गुरुवन के फन्द सेनी जीवन को मुक्त कियो ।
ताते भयो नाम वन्दीछोर गुरु देवा । गाते चलो मन !...॥१॥
शोधि शोधि कागों कि रहनी मिटायो,
हंसों कि रहनी में जीवन बितायो ।
घूमि घूमि जीवन के ताप हर्यो देवा । गाते चलो मन!...॥२॥
जीवन के बोध हेत बीजक सु कोष दियो,
सोई अधार आज जीव सब थीर भयो ।
आप के प्रकाश माहिं संत गुरू देवा, गाते चलो मन !...॥३॥
काया में वीर धीर साहेब 'कबीर श्री'
'पूरण' व 'काशी' 'लाल' बीजक के भेवा ।
बीजक क भेद पाये 'शरण' हरे देवा, गाते चलो मन!...॥४॥

[त्रय देवियों की कथा का भाव प्रकाश]

सर्व सज्जन-मुमुक्षा देवियाँ इस कथा सत्संग से यह शिक्षा हृदयांगम करें--

१- देखो! ज्योतिषी पंडित विद्याधर के पुत्र सिविल्सार्जन थे, तिन की पत्नी-'कमलादेवी' ने एक पुत्र की प्राप्ति हेत

क्या-क्या उपाय कराया सो वह सब पूर्व में स्वयं 'कमलादेवी, सुशीलादेवी से कह चुकी हैं। देखो ! समझो !! पुत्र प्राप्ति हेत अपने पति-सिविलसार्जन द्वारा एक से एक उत्तमोत्तम औषधियाँ खाँईं, नाना उपाय कीं और अपने ज्योतिषी ससुर की ज्योतिष विद्या द्वारा भी अनंतों उपाय की तो भी संतान की प्राप्ति न हुई। बिना अपने प्रारब्ध- कर्म के सब उपाय-पुरापार्थ निष्फल ही रहे। अब विद्वानोंके नाना आदेश सुन-सुनकर तीर्थ—रामेश्वर-बद्रीनाथ आदि सब मान्यवर तीर्थों में जा जाकर औदार्यता सहित श्रद्धा पूर्वक बहुत द्रव्य खच करके मान-मनौती किये। बाहरमहिनों के एकादशी व्रत और अमावस-पूर्णमासी-चौथ-प्रदोष-परेवा-अष्टमी आदि जितने भी देवियों के व्रत माने गये, सभी व्रत विधिवत किये, कोई भी व्रत न छोड़े तथा सब देव-देवियों की भाँति-भाँति मान मानौती-पूजनादि किये। नाउतों द्वारा मंत्र जंत्र दुआ-ताबीज करवाये, भूत-प्रेत टटका-टोमर ऐसी नाना भाँति की मान मनौती किये। गीता- रामायण का अखण्ड पाठ किये- करवाये' पुत्रेष्ठ यज्ञ भी किये। इस प्रकार पुत्र हेत पचास- पछपन वर्ष की अवस्था तक सब कुछ उपाय किये- कराये परन्तु पुत्र की प्राप्ति न भई। इस कमलादेवी के चरित्र से अब सर्व समझदारों को कुछ आँखें खोल के देखना समझना चाहिये कि यदि तीर्थों के देव-ईश्वर तथा नाना व्रत देवी-देवताओं, मंत्र जंत्रों-यज्ञादिकों में कोई शक्ति-महानता होती तो वे पुत्र क्यों न देते। वास्तव में ये उपरोक्त

उपाय सर्व अनुमान- कल्पना- भ्रमगढ़ मात्र हैं। कंकर- पत्थर- पीतल आदि अष्टधातु व काष्ट जड़ मूर्तियों में कुछ दैवी- शक्ति नहीं, सर्व कल्पित मिथ्या हैं, तिसके पीछे मनोआशा पूर्ति हेत मत दौड़ें। अपना कल्याण योग्य मानवजीवन झूटे जालों में न बरबाद करें। स्वार्थ के मायिक देह भोगों की हानि- लाभ अपने पूर्व कर्मानुसार ही होगी, अज्ञानी भोले भोंदुओं के देखी- देखा भेंड़ीवत् भ्रम गड्ढे में न गिरना चाहिए। यदि उपरोक्त सूचित तीर्थ- ईश्वर- देवी-देवादि मंत्र- जंत्र तथा नाउतों में कुछ शक्ति होती तो पण्डे पुजारी नाउतों को जगत की कोई भी पद-पदार्थ तथा बल प्राक्रमों की कमी न रहती, जो चाहते सो कर-करवा लेते, उन्हें तीनों तापों की पीड़ा भी न सहना पड़ता किंतु ऐसा कहाँ प्रत्यक्ष है ?

२— ये दूसरी उर्मिलादेवी ने अपने बीमार पति के निरोग्य तथा जीवित रहने के हेत बहुत ही निष्ठा पूर्वक सर्वस्व अर्पण कर श्रद्धा सहित ईश्वर आराधन, तीर्थों के देव-शंकर- भगवान, हनुमान व नाना देवियों की पूजा-पाठ, मान-मनौती, नाना व्रत, कई हज़ार मंत्रों का जाप, मृत्युञ्जय पाठ, यज्ञ-तुलादान और भी नाना कर्मकाण्ड किया कराया परन्तु कुछ भी सफलता न हुई आखिर में उर्मिलादेवी का प्रिय पति मर ही गया। भ्रम-अनुमानजन्य नाना कर्मकाण्ड का परीश्रम सर्व व्यर्थ हुआ। यदि पूर्व सूचित ईश्वरदेवी देवों में कुछ शक्तिमानी होती तो ये पूजक उर्मिलादेवी के प्रिय पतिको मृत्यु से क्यों न बचा लेते ?

देखो। कमला देवी एक पुत्र प्राप्ति हेत और उर्मिला देवी अपने प्रिय पति के जीवित रहने हेत क्या-क्या उपाय किये परन्तु भ्रमजन्य एक भी उपाय तथा पुरुषार्थ की सफलता न हुई? याते मायिक पद पदार्थों तथा पुत्र- पौत्रों एवं परिवार प्राप्ति व स्थायित्त्व रहने के हेत नाना भ्रम अनुमान पूजन में न दौड़ें। यदि अपने पूर्व रचित शुभकर्म मय प्रारब्ध इस मानव तन में जुड़े हैं तो स्वार्थ के मायिक पद पदार्थों व प्राणियों की प्राप्ति तथा नाना सुख सुविधाएँ अवश्य प्राप्त होते रहेंगी। यदि पूर्व की कर्म कमाई इस मानव जीवन में नहीं जुड़ी है तो भ्रम अनुमान जन्य कल्पित ईश्वर, देव- देवी, तीर्थ- व्रत, जंत्र- मंत्र नौताय से कुछ सफलता न होगी, ये सब कल्पना मात्र झूँठ बाल खेल मात्र है। कहा है—

"झूठा कबहुँ न करिहै काज, हौं बजौं तोहिं सुनु निलाज" (बी०)

३— धर्मेशा देवी का पति शिवउपासक नशेबाज़- साधुओं के कुसंग से कितना दुराचारी, स्व-पर का धर्म नाशक हो गया, तिसके सम्बंध से 'धर्मेशा देवी' को कितना भयंकर धर्मनाशक कष्ट का सामना आया।

ऐ मुमुक्षा देवियो! जिस प्रकार बन सके कुकर्मी जनों से धर्मेशा देवी समान अपने सुधर्म की रक्षा करना अति आवश्यक है, अपना सुधर्म ही अपने लिए सदा हितकारी है, सुधर्म के अलावा जगत् में कोई किसी का नहीं है। दुनियाँ में जिसे जितनी सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं सब पूर्व सुधर्म का ही प्रताप है,

सुधर्म ही सब कुछ है। झूँठे जगत मायिक भ्रम मेंड़-मर्यादा की जंजीर में ही न जकड़े रहना चाहिए किन्तु दुक्ख रहित जीवनोद्धार के हेत सत्य-सुधर्म सत्संग नौका में सर्वाङ्ग प्रवेश होकर अचल रहना चाहिए।

जिस प्रकार 'भानुमती देवी तथा तिनकी सुपुत्री सुशीला देवी, विद्या देवी, कौशला-देवी आदि बहुतेक सत्संगी सुबुद्धि-शाली देवियों ने सच्चे वैराग्यवान स्वरूपज्ञानदाता सद्‌गुरु-'बोधक देव' के शरण में अर्पण होकर अपना उद्धार किया और तिनके साथ बहुतों का उद्धार हुआ। तिन्हीं के समान अमूल्य मानव तन पाकर सर्व मानवी देवियाँ साहसी बनकर जीवन पर्यंत सच्चे सुधर्म परायण हो जावें, यही मानव ज़ीवन का सार्थक करना है।

आगे तीनों देवियाँ ज़िस प्रकार सद्‌गुरु शरणमें प्रवेश होकर अपना सत्य स्वरूपबोध प्राप्तकर मोक्षपद परायण हो सदा के लिए स्थिर हो गईं सो अब और सुनो—

सुशीला—अब आप सब बहिनों से कहना है कि कल करीब आठ बजे सबेरे स्नान करके गुरुदरबार (आश्रम) को गुरुदेव पूजन-बंदन सत्संग हेत इन त्रय देवियों को साथ लेकर चलैंगी, आप भी सब बहिनें चलैंगी न?

अन्य कौशलादि देवियाँ—हाँ-हाँ। हम सब पौने आठ बजे ही आपके पास हाज़िर होंगी। सुनिये एक बात! कल के पूजन हेत बहेन जी कृपया थोड़े पुष्प हमारे लिए भी अपनी

फुलवारी से मंगा लेंगी। सुशीला– बहुत अच्छा! मँगा लेंगी।

सर्व देवियाँ आपस में बन्दगी करके चलीं गईं, अब अपने- अपने हृदय में गुरुध्यान - स्मरण करते हुये स्व-स्व शैनालय में जाकर सो गईं। वे नवीन त्रय देवियाँ करीब तीन बजे रात में जागकर सुने हुए सत्संग के प्रसंगों को बैठ के शांति चित से स्मरण कर रही हैं। सवेरा होते ही कुछ अंधेरे में ही सुशीला के साथ स्व- स्व पात्र में जल लेकर शौच चली गईं। शौच क्रिया पश्चात् एवं दातून स्नान से निवृत हो गईं। अब सब आये हुये पुष्पहार गुथने में निमग्न हैं।

परसाद फल मेवा, मिष्ठान्न जो सब जन मँगाई थीं सो भी आ गया, इतने में ग्राम से कौशलादि देवियाँ भी आ गईं, बन्दगी भाव पश्चात् वे भी पुष्पहार एक से एक सुन्दर तैयार कर लीं, अब आठ बजे सभी देवियाँ आपस में बन्दगी भाव करके सहुल्लास चल पड़ीं।

उधर गुरु आश्रम पर सद्गुरुदेव के परम शिष्य– गुरुबोध दास स्वयं सबेरे ही स्नान करके सद्गुरुदेव को स्नान करवाय और आरती पूजन के पश्चात् अलग बैठे गुरु बचनामृत स्मरण कर रहे थे और सद्गुरुदेव स्वस्थिति में सम थे। कुछ देर के पश्चात् अन्य जिज्ञासु और ये सब देवियाँ जा पहुँचीं, गुरुवर को समाधिस्थ देख दूर ही से बन्दगी कर अलग चुप शांति बैठ गईं। कुछ समय बाद गुरुदेव समाधि से जब आँखें खोले तब योग्य समय सब संत-भक्त

तथा देवियाँ अपने-अपने यथायोग्य मर्यादा से बैठकर सब जन साथ ही एक स्वर से त्रयबार विधिवत् बन्दगी किये, तत्पश्चात् वे देवियाँ अपना-अपना प्रसाद पूजा भेंट पुष्पहार पहिनाय तथा तिलक चढ़ा करके सर्व एक साथ सनम्र त्रयबार कर जोर साहेब बन्दगी उच्चारण करती भई, अब आरती करती और गाती हैं, सभी ब्यक्ति आरती करके बन्दगी किये और शांति से बैठ सब श्रोता गण गुरुध्यान में स्थिर हैं। इसी समय त्रय देवियाँ यह मनन कर रही थीं कि जो सभी प्रिय बहिनों ने सुझाया सो सर्व प्रत्यक्ष ही है और ऋषि मुनियों के प्रमाणित भी है। बर्तमान में ए सभी बहिनें तथा जिज्ञासु कितने संतुष्ट स्थिर हैं, अब इन्हीं बहिनोंवत् प्रत्यक्ष सद्गुरुदेव के चरणों में हम भी सदा के लिये अर्पण हो जावें।

कुछ देर बाद सुशीला सभी देवियाँ प्रार्थना करने लगीं—

[गुरु पद महत्त्व-भजन]

गुरू तेरो अच्छा बना सत महला ॥ टेक ॥

तेरो सतमहला में कोइ कोइ जावै, जो जावै सो आवै नहिं चहला ॥१
उइ सतमहला में चारि दुवरवा, धीर विचार दया अरु सहला ॥२
गुरु सतमहला क नाम प्रकाशौं, जीवनमुक्त कहत दुख दहला ॥३
भक्ति विरति से ज्ञान ध्यान चढ़ि, सीढ़ी सबै पार कोइ रहला ॥४
गुरु कबीर सतमहल शिरोमणि, सब तजि 'शरण' चढ़ौगुरु महला ॥५

सुशीलादि के भजन गायन पश्चात् वे त्रय देवियाँ बड़े उत्साह से पूछती हैं कि बहेन जी ! हम भी अपने भाव-प्रेम का भजन गा सकती हैं ?

सुशीला- हाँ ! बहेन जी अवश्य गा सकती हैं, कोई संकोच नहीं, अवश्य गाइये।

त्रय देवियाँ कर जोर सनम्र हृदयक भाव भजन कहती हैं-

[भक्ति भाव-भजन]

गुरू तेरे चरणों क सेवन करिबै ॥ टेक ॥

गुरु सेवन से सब दुख भागैं। तन मन साधि परख पद लहिबै ॥१
सत्य गुरू पद ऋषि मुनि ध्यावैं। हमहूँ सेय परम पद पइबै ॥२
मन की कुचाली लाज शरम तजि। गुरु पद बन्दन सत्संग सुनिबै ॥३
भूत भवानी भरम छोड़ि कै। नियम धरम सब गुरु मुख रखिबै ॥४
जस गुरु सद पद धोख न कोई। तैसै 'शरण' अटल मग गहिबै ॥५

भजन गाने के पश्चात् वे नमन कर चन्द्र चकोर वत् शांत गुरुध्यान में थीर हैं—

कुछदेर बाद सद्‌गुरुदेव भानुमती देवी से बोले— कि ये त्रय देवियों का आना कहाँ से और कब हुआ ? कैसे हुआ ?

भानुमती देवी कर जोर बोली— हुजूर ! ये सब हमारे नात गोत्र की हैं। बर्तमान समय परदेश निवासनी हैं. घर तो यहीं कुछ दूर देहात में है तहाँ से ही आई हैं। इन्हें परमार्थ प्रिय है इस लिये यहाँ आप का सुयश सुन, तीर्थराज में प्रवेश हुई हैं, इन्हें आप के सत्संग की अधिकाधिक रुचि है। कल शाम को आई थीं, अबेर के कारण इन्हें आज यहाँ ला सकी हूँ। रात में करीब तीन चार घण्टा आपकी सेविकाओं द्वारा सत्संग-कहन-सुनन इन सबों के भावानुसार हुआ था, ये सब

आप के प्रवचनों की बड़ी इक्षुक हैं।

भगवन ! ये तीनों पढ़ी तो बहुत हैं, पर आप की भक्ती ज्ञान की पिपासु भी अधिक हैं। ये बड़ी-'कमलादेवी' पुत्र हीन हैं, ये दूसरी 'उर्मिलादेवी' पतिहीन हैं, ये तीसरी 'धर्मेशादेवी' दुराचारी कुपति त्यागी ब्रह्मचर्य पोषी हैं। इन सबों के कौटुम्बी सब प्रकार अनुकूल हैं, धर्म साधक हैं।

सद्गुरु देव– तुम तीनों देवियाँ शाम के सत्संग से क्या प्राप्त कीं?

त्रय देवियाँ– हाथ जोड़ के नमन कर बोलीं– भगवन ! इस जीवन भर में हमारा सौभाग्य तो कल ही आया। हम तीनों शोक सिंधु में डूबी हुई बेहोश थीं, इन माता-बहिनों के दर्शन पाने से हृदय की जलन जाती रही। मेरी प्रियवर ! ये सभी सत्संग नौका में बैठाय शोकसिंधु से किनारे करदीं, हम दोनों पर बड़ी दया हुई।

कृपा सिंधु ! अब हम लोगों को जिस प्रकार आप के दिव्य प्रकाश का अनुभव होकर तिस में सदा निवास रहे, वही प्रकाश और निवास स्थान तथा करत्तब्य जानने-समझने की उत्कंठा प्राप्त हुई है।

सद्गुरु देव– हमारे यहाँ का दिव्य पारख प्रकाश और तिसमें स्थिति हेत कर्त्तब्य की उत्कंठा तथा ठहराव का लक्ष सत्संग न मिलने से बदल जायगा या नहीं तथा इसे कैसे रख सकोगी ?

त्रय देवियों का भाव और निवेदन– दयानिधान ! अब

हम बहुत कुछ गृहस्थी ब्यवहार से छुट्टी पा गई हैं। घर में आधारक कौटुम्बी सब अनुकूल हैं, जैसी आप की आज्ञा होगी उसी तद्वत हम सब करेंगी, अपनी मनमानी तो आप के दर्शन पाते ही निकल गई। दयालो! हम दुनियाँ का राग सब कुछ कर थकीं हमारा सब अमूल्य समय तो ब्यर्थ में गया। अब हमें अपना उद्धार करना ही एक कर्तब्य बाकी है, सो तिसी हेत हम तीनों आप के चरणों में समर्पित हैं, जिस प्रकार हम तीनों का उद्धार होवे वही कर्तब्य-ज्ञान ध्यान साधन हेत दया दान हो? सर्व अंगो से आप हमारे हृदय में बिराजें, यही इन दीन दासियों का निवेदन है? प्राण रहे तक हम सब आप के सुसंग केन्द्र से बाहर होने की नहीं। "सकल करम करि थक्यों गोसाई। सुखी न भयों अबहिं की नाई॥" (रा०)

[सद्गुरुदेव का प्रवचन- नौ अङ्गों से समझौता]

सद्गुरु प्रवचन त्रय देवियों से- तुम तीनों देवियों की सर्व ब्यवस्था हम भानु मतीदेवी के द्वारा समझ चुके हैं। देखो! जो स्त्रियाँ मोक्ष इंच्छुक-सुधर्म निष्ट पति दम्पत्ति ब्यवहार में रहती हैं वे मोक्ष लैंन के कनिष्ट वर्ग की अधिकारिणी हो सकती हैं वे अहिंसा धर्म पतिब्रत धर्म सन्त सेवा-उपासना, सत्संग पवित्राचार आदि भक्ति धर्म लैन आचरण कर सकती हैं वे प्रथम - द्वितीय सीढ़ी का अधिकार ले सकेंगी। आखिरी मोक्ष सीढ़ी तिन के लिए अभी दूर है, वे इस उच्च पद की प्रेमिनी कही जा सकती हैं। क्योंकि वे नाना प्रकार के गृह

कुटुम्ब भार से चूर हो रही हैं, सभी बंधनों को पकड़े हैं। परन्तु तिन मोक्ष पथ प्रेमी देवियों को भी मोक्ष के सर्व अंगों का सत्संग सुनना समझना पाठ-पठन करना अतिआवश्यक है, यही देवियाँ आगे मोक्ष की परम अधिकारिणी भी हो जावेगी।

जो महिलायें पुत्र-पौत्रादि कुटुम्ब गृह भार से रहित हैं और वेअपना जीवन उद्धार चाहती हैं तो उन्हें प्रथम शास्त्र नीति से वारह (१२) वर्ष तक पति दम्पत्ति ब्यवहार करने के पश्चात् या ज़ब से ही स्व मन मनासकें -निर्विषय रहसकें तभी से पुरुषासक्ति ब्यवहार त्याग कर ब्रह्मचर्य ब्रत से रहते हुये निज पति की सप्रेम काम विषय रहित योग्य सेवा करती रहें। जो युवतियाँ पति रहित हो गई हों और वे मोक्ष चाहती हों तथा जो महिलाएँ अपना मोक्षपथ में जीवन उद्धार करना चाहती हों तिन सबों के हेत आगे जितने रहस्य बताये जावेंगे वे सभी योग्य रहस्य कर्त्तब्य धारणकर मोक्ष मार्ग में ही अपना जीवन सफल करें।

[अङ्ग-१]

हम प्रथम त्रिगुण का लक्षण (सरूप) संक्षिप्त मेंकहेंगे सो सुन समझ कर सर्व मुमुक्षा देवियाँ 'राजस गुण-लक्षण' तामस गुण-लक्षण, त्याग कर 'सातस गुण लक्षण धारणा से मोक्ष भूमिका के निकट पहुँच सकेंगी, सो सप्रेम श्रवण करें।

[नारियों के त्रिगुणों में प्रथम राजस गुण का संक्षिप्त दृश्य]

राजसी वस्त्रों का दृश्य ये है—चमकीले, बहुत बारीक, तन कसे, अंग दिखाऊ (पेट पीठ अंग खुले रहना) बहुत

चमकदार रंग विरंगे बेल बूटे कढ़े छपे और भी अति मुलायम कपड़ों को पहनने में आनंद मानना तथा पहन के ठाठ जमाना, ऐसे नाना प्रकार के वस्त्रों का मोहक दिखावा राजस पन है। हाथ, पाँव, होंठ, नाखून, आँख, चेहरा आदि अंगों को सुन्दरता मय देखावा हेत लाली-कज्जल-पाउडरादि चमकीले रंगों से रंगना। अत्यन्त चमकदार चूड़ी, छल्ला, मुँदरी, घड़ी, फीता सजाना और भी देह अंगों में चमकदार-झन्कारमय गहने हाथ पाँव नाक कान गले मस्तक के देखाऊ आकर्षक नगीन गहने तथा अन्य अंगों को नाना आभूषणों से सजाना, केशों को चमकीले दिखाने हेत उपाय करके सजाना, भाँति-भाँति की औरेबी माँगें काढ़ना, रंग विरंगे फूल फीता काँटे सजाना, अपनी सुन्दरता देखाने हेत आकर्षक तेल फुलेल अतर लगाना, पेट पीठ शिर खुले रखना। सुन्दरता बढ़ाने हेत सुरमा कज्जल, मिस्सी, चमकीले चश्मे लगाना, दाँतों को सोने चाँदी से मढ़वाना, कीलें जड़ाना, पान खा के आयना में देख-देख निमग्न होना, चमकीले मोजे ऊँची एड़ी के जूते पहिनना सब राजस पन है।

बीड़ी सिगरेट पीना, हंसी ठोली अश्लील गाने गाना-सुनना, रेडियो तबला सितार ढोलक हारमूनियक आदि नाना बाजाओं की तान लगाना, नाचना हाथ तथा अगों को चमकाना, आकर्षण हेत हंसना मुस्की छाँटना, आँखें पलकें चमकाना, मेला नाच सनीमा देखना, सजे-धजे रंगीले ठाठी बालक-युवा

पुरुषों की सुन्दरता को निहारना, तिन में निमग्न होना, उन से लोलुप भाव युत मिलने-बोलने की इच्छा करना तथा मिलना-बोलना तिन से स्पर्श करना इत्यादि। ऐसे अनंतों भाँति के चमकीले आकर्षक साज, तिन में सुख मानना, खान-पान में भी बहुत खट्टा मीठा चर्करा आदि नाना षड्रसों की चटोरी-पन रख के जिह्वा लम्पटी रखना आदि-आदि सब राजस पन है।

जो बातें ऊपर स्त्रियों के प्रति राजसपन की बताई गई हैं, लगभग वही बातें पुरुषों में भी राजस पन की लागू हैं किन्तु घट भेद से कोई-कोई फैसनों में भेद है। जैसे कपड़ों के विषय रागी साज पतलून बूसर्ट टाई कालर आदि बहुतेक राजसी साज हैं। शरीर के यथार्थ रक्षक सादगी पन के अतिरिक्त चमक-दमक पन, मोहक उन्मादक साज सामग्री खान-पान तथा बर्ताव-सम्बन्ध सब राजसपन का सरूप है।

देव स्थान में जाकर माने हुए जड़ देवताओं से व महात्माओं से पुत्र हेत या धन-मान या अन्य स्वार्थ हेत जूता मोजा या सवारी पर बैठे-बैठे दण्ड-प्रणाम या धन प्रसाद चढ़ाये या चढ़वाये या पूजन किये करवाये सो सब राजस पन है।

[द्वितीय तामस गुण का संक्षिप्त दृश्य]

मलिन-गंदे अशुद्ध हिंसकी बर्ताव दृश्य— बिना ठीक से नहाये धोये गंदी देह, बिना दातून मंजन के गंदा मुँह, कपड़े गंदे, गहने गंदे, घर गंदा, बिछौना ओढ़ना गंदा पलंग दीवार फर्स सर्वगंदे, नाक थूक जाला, कालोंछ दुर्गंध मय ऐसी गंदगी

घर में पड़े रखना, चूल्हा चौका मलीन, अशुद्ध जूठे मलीन बेढ़ंगे बर्तन, फर्स दीवार कपड़ों में नाक-थूक लेसते रहना, झाड़ू बुहारू, लीप-पोत कर मकान साफ न रखना, यत्र तत्र कूड़ा पड़े रखना, टट्टी जाते समय जल साथ में न ले जाना हाथ शुद्ध मिट्टी से न मटियाना, हाथ पैर न धोना, पेशाब के छीटों से कपड़े-पैर भिगो लेना, रजोधर्म में सफाई न रखना, तथा रजोधर्म समय छुवा छूत का पर्हेज न रखना, लड़कों बच्चों के मल मूत्र से कपड़े देह तथा खाट बिछौना गंदे रखना, सफाई न करना, उनकी नाक थूक जूठन से लड़कों को गंदे रखना, उनका जूठा गंदा खाद्य खा-पी लेना और भोजनादि बनाने-खाने में छुवा-छूत जूठ अनूठ का, सनातनिक नियम से शुद्धाशुद्ध का विचार न रखना, दातून- स्नान कर भोजन बनाने खाने का नियम न रखना, धोने योग्य पदार्थों न धोना, अन्न साक फल फूल बिना असनिया तथा बिना धोये खा लेना, मांस-अण्डा मदिरा, दारू- ताड़ी, तम्बाकू, खइनी-पीनी, बीड़ी-सिग्रेड, भाँग, अफीम, मदक दोहरा राख- मिट्टी- खब्टा आदि नाना कुखाद्य खाना-पीना सब तामसी पन है। गंदे स्त्री- पुरुष बच्चे तथा गंदे प्राणी- पदार्थों से पर्हेज न करना, गंदी जगहों में लेट- बैठ जाना-रह लेना, घृणा न मानना, गाली देना, मार काट करना, लड़ना-झगड़ना हिंसा करना हिंसकी जगह रहना, जुवाँ लीख खटमल गंदगी द्वारा पैदा करके तिन्हें मारना- मीसना-कुचलना जलाना, कीड़ों सहित जल फल फूल, सिरका ऐसी

नाना पदार्थं खा- पी लेना और दूसरों को जान बूझ के खिला-पिला देना ये सब तामस पन है। चोरी करना- करवा देना, डाका डालना- डलवा देना, शिकार करना करवा देना ईर्षा-कपट-छल करना, किसी को मारना- मरवा देना, अग्नि लगाना- लगवा देना, बिष खिला देना- खिलवा देना, ठगना- ठगवा देना, झूँठा बोल बर्ताव करना, ब्यभिचार करना- करवा देना, कुल्टा कुटनी कुलक्षणी स्वयं बनना, अन्य को बना देना' स्व-पर घरों में फोड़- तोड़ करना-करवा देना, आपास्वार्थी बनना-बना देना। अनुमान में— देवी भवानी कबर माटी पाथर-शिवलिंग नट नारसिंह मंत्र- जंत्र- दुआ- तावीज. नाउत ओझा मलेक्ष हिंसकी जोशी पंडों धुर्तों आदि ठगुओं में अपना लगना-पूजना, अन्य को भी फँसा देना इत्यादि। ये सब तामस पन राक्षसी वृत्ति सर्व प्रकार घातक है, यह सब तामसी अंधकार-मय दुर्गुण सभी स्त्री तथा पुरुषों को त्याग करना चाहिये।

[तृतीय सातस गुण का संक्षिप्त दृश्य]

सातस पन में दो विभाग हैं—एक गृह आश्रमियों के योग्य। दूसरा ब्रह्मचर्य ब्रतधारी पारखी साधु भाविकों के योग्य, जिसे उत्तम शुद्ध सात्विकता कहते हैं।

गृह वर्तीय सातस वर्णन– तन मन धन वचन द्वारा जीवों को घात करने का भाव हृदय में न होना, यथासक्ति घात न करना-न करवाना, ऐसे अहिंसा धर्म पालना, स्त्री-पुरुष सम्बंधी दम्पत्य-ब्यवहार शास्त्र बिधान अनुसार होवे' कुदृष्टि ब्यभिचार तो

किंचित मात्र भी न हो, पर में पिता पुत्र भ्रात भाव सदा रहे। वचन बोलने में प्रेम नम्रता, सत्यता, मधुरता सहित स्व-पर का सुधारक रक्षक वाक्य हो। आँख-कान, हाथ-पाँव, अंग नम्र शांति स्थिर रखकर गम्भीरता से क्रिया तथा कार्य व्यवहार करें, उलझन चचलता रहित रहें। देह वस्त्र घर बर्तन अन्न आदि सब साफ रक्खें, शुद्धता- पवित्रता का सदा लक्ष रक्खें, मासिक धर्म समय छुवा- छूत तथा दम्पत्य व्यवहार का पहेंज रहे। भोजन बनाने खाने में दातून-स्नान युक्त पवित्र शुद्ध कपड़े पहनकर बनावे-खावे-खिलावे। जल छानने हेत जलछक्का नये कपड़े का बनावे, पहिने हुए पुराने-अशुद्ध कपड़ों का नहीं। जल छानकर अन्न-साक और भी जो धोने योग्य पदार्थ हों वे सभी छने जल से धोवें। रसोई के कार्य व्यवस्थाओं में जूठ अनूठ - सफाई शुद्धता, छुवा-छूत का विचार रक्खें। चौका चूल्हा पोतने हेत नवीन शुद्ध मिट्टी जल से काम लें, जूठा कपड़ा धो डालें, बर्तन निदान साफ हों, लकड़ी-ईंधन के कीड़े झाड़ कर काम लें, खाद्य पदार्थ हिंसा मादक अशुचि रहित शुद्ध अहिंसक पवित्र हों, अधिक तीखे चटपटे उष्ण तथा बासी सड़े पदार्थ न हों, मध्य वर्तीय भोजन हो। भोजन खाते बनाते समय जूता मोजा चप्पल मलीन अपवित्र गंदे कपड़े तथा चमड़ा हड्डी-सुत्ती अशुद्धता रहित व्यवस्था रक्खें।
"यथा शक्ति जन चूके नाहीं। होय अशक्य दोष नहिं ताही।"
(पं०) बीमारी दशा या बृद्धावस्था में जैसी शक्ति हो वैसा

करें। गृहस्थी मर्यादा अनुसार आभूषण शुद्ध योग्य रक्खें, कपड़े शुद्ध सातसी मोटे-गृह मर्य्यादा तथा देह अंग रक्षक हों एवं घर की सारी व्यवस्थायें पवित्र तथा स्वार्थ परमार्थ की योग्य मर्यादा युक्त होवें।

घर के व्यक्तियों तथा आने जाने वाले सभी अतिथों प्रति जो जिस योग्य हो उसी धर्म मर्यादा से बैठक उठक, खान-पान, बोल-बर्ताव अदब कायदा मर्यादा बन्दगी प्रणाम सेवा-सत्कार युक्त पेश आवे। सबों से नम्र शील समता-क्षमा आदि सज्जनता से व्यौहार रखें, ऐसी ही शिक्षा स्व आश्रयीजनों को भी देवें-बर्तावें, ये उपरोक्त देह सम्बंधी संक्षिप्त सातसपन आश्रमी-जनों के हेतु कहा गया। अब ब्रह्मचारी साधु दशा में सातसी बर्ताव सद्ग्रंथ—"कबीर मानव प्रकाश व जीवन सुधा" के मध्य उतरार्ध में सविस्तार वर्णन है, यहाँ संक्षेप मात्र है।

जीवन उद्धार हेत भक्ति सत्संग के जितने नियम हैं, उन्हें स्वयं पालन करें, गुरु मनसा-बोध विचार में अपने तथा स्वआश्रयीजनों को लगावे। गुरु पद विरुद्ध— अनुमान भ्रम जन्य-देवी देव भूत-प्रेत नट नरसिंह, कब्र मूर्ति जंत्र-मंत्र दुआ ताबीज, ऋद्धि-सिद्धि इत्यादि के भ्रम चक्र में भूल कर भी न फँसे। नाउत ओझा जोशी बनावटी ठगुआ साधु, भ्रमिक गुरुआ जनों के चक्कर में न जावे। कुसंग रहित सदा सच्चे-सद्गुरु की निरालस उपासना सहित पारख बोध में निमग्न रहे, यही सातसपन असली योग्य मानव पन का यथार्थ

कर्त्तव्य है, तिसे सर्वांग युवति घटधारी देवियाँ तथा सज्जन पुरुष शुद्ध सातसी रहस्य-धारणा बनाकर मोक्षपथ में आकर मानव जीवन सफल करें ।

[अङ्ग-२]

पारख बोध सम्पन्न ज्ञानी वैराग्यवान सच्चे संतों की मन वच कर्म से सर्वाङ्ग निष्काम भक्ति उपासना में परायण होवे और तिनके द्वारा निष्पक्षता से सत्संग सुन समझ के स्वात्म अनुभव एवं सर्वाङ्ग पारख बोध प्राप्त करने हित परम पुरुषार्थी बने, कभी भी आलस ढ़िठाई उन्मादता बाचाली प्रपंचासक्ति स्त्रियत्व स्वभाव ओछापन चंचलतापन स्वमन वर्ती दम्भ क्रूरता इन्द्रिय लोलुप्ता आरामीपन मान भोग इक्षुक न होवे ।

[अङ्ग-३]

अखण्ड मोक्ष सुख इक्षुक पति-पत्नी दोनों व्यक्ति तथा पति रहित मुमुक्षा देवियाँ, बिबेकी वैराग्यवान मोक्ष पथप्रदर्शक संतों में सत्य निष्ठा सहित त्रय भाँति अर्पण होकर सविधान मंत्रोक्त भक्त होजाना चाहिए क्यों कि कहा है– निषाद बचन, "साधु समाज न जे कर लेखा । राम भक्ति महँ जासु न रेखा ।। जाय जियत जग सो महि भारू । जननी योवन विटप कुठारू ।।

भक्ति अंकित होकर नियमतः गुरु मंत्र, गुरु ध्यान, गुरु पूजन, गुरु सत्संग-निर्णय, गुरु ग्रंथ पठन पाठन रूप भजन भाव नित्य करता रहे । नम्रता उदारता पवित्रता सुबुद्धिता

सत्यता दयालुता आदि सद्‌गुणों का भाउक तथा पोषक बन कर दुर्गुणों को गुरु निर्णय सयुक्ति से ठेलते रहना चाहिये।

[अङ्ग-४]

इस मानव जीवन को कीमती समझ कर क्षणिक जीवन में ही मोक्ष कार्य सिद्धि करना जरूरी है, इसलिये अति कोशिश कर लग्न सहित जड़-चेतन का सविधि निर्णय ज्ञान प्राप्त कर लेवे। यथार्थतः जड़ को जड़, चैतन्य को चैतन्य, इस अपरोक्ष अनुभव ज्ञान के पश्चात् जड़ उपासना–भ्रम जन्य शुन्यमय-अद्वैत ब्रह्मवाद, ईश्वर-माया द्वैत वाद, ईश्वर-जीव-प्रकृति त्रैत-वाद तथा जड़त्ववाद-नास्तिक लैन आदि भ्रम सिद्धान्तों के अनंत लैन हैं, वे सभी निज स्वरूप चैतन्य को भूल भ्रम जन्य नाना भ्रम अनुमान में झुलाने भ्रमाने वाले हैं, तिन्हों को भलीभाँति सत्संग द्वारा निष्पक्षता से निर्णय करके सारे भ्रम अनुमास को त्याग कर यथार्थ पारखपद दृढ़ करना चाहिये। इसका विस्तरित निर्णय–"कबीर मानव प्रकाश व जीवन सुधा" नामक सद्‌ग्रंथ के उत्तरार्ध अष्टादश उत्तर से समझें।

[अङ्ग–५]

चैतन्य जीवों की भ्रम कल्पना रूप ब्रह्म ईश्वर खुदा अल्ला ईसामसीह सत्पुरुष निरंजन व पीर पैगम्बर, दश व चौबीस ईश्वरीय औतार, भगवान की मान्यता, देव देवी, भूत प्रेत, गण गंधर्व, नट नरसिंह, जंत्र मंत्र, दुआ-ताबीज जड़ तीर्थ-मूर्ति आदि ऐसे अनंतों झूठे भ्रम-पाखण्डों का जगत में पसारा है

सो गुरु सत्संग से परखकर फेंक दें। यथार्थ हीत रूप पारख बोध-सत्यपद प्राप्त होने पर व्यर्थ धोखे में दौड़ने से कोई लाभ नहीं, स्थिरता नहीं। शून्य में दौड़ने वाले को क्या फल प्राप्त होगा ? उसका सारा परिश्रम व्यर्थ है, सो तुम सभी कुछ न कुछ कर-करा के देख ही चुकी हो, झूँठे लैन में परीश्रम बहुत है और हाथ क्या आवेगा ? शून्य।

[अङ्ग-६]

जड़- चैतन्य के यथार्थ ज्ञान तथा साधन अभ्यास के विना सर्वाङ्ग भ्रम का निवारण नहीं होता, इसलिये इस पारख सिद्धान्त रहस्य के समझने परिपुष्ट करने में कुछ समय लगेगा ही, क्योंकि बहुत काल की भ्रम भास है, कभी ऊब डूब न लावे, धैर्यता से पारख पद पुष्ट करे। जब तक प्रारब्धमयी देह इन्द्रियाँ मन शुत्र का निवास तथा आगमन रहेगा तबतक पारख बोध सद्रहस्य शस्त्र सहित सावधानता की आवश्यकता है। ये सब बातें संक्षेप में बता दी गई हैं। इसे आगे शनैः शनैः समझाया जावेगा।

तुच्छ मिथ्या माया भ्रम भोगों के लिये अनादि से सब कुछ सहे तो भी उसी में जुटे पड़े रहे, आज तक जगत भोग माया से न तृप्ति हुई, न कुछ प्राप्ति ही हुई। जैसे कहा है— "रात भर पिसान पीसा, चलनी में उठा कर देखा तो कुछ नहीं।" सारा परिश्रम व्यर्थ हुआ, तद्वत उपरोक्त माया हेत परीश्रम सर्व व्यर्थ है। अब इस पारख सिद्धान्त में परम लाभ

प्रत्यक्ष है—कि जितने भ्रम दुर्गुणों का त्याग होते जावेगा, उतनी ही हृदय में स्थिरता होती जावेगी, इसे पारख सिद्धान्त कहते हैं। यहाँ सब परख- परख के माना- मनाया जाता है, केवल अंध विश्वास से नाचना- नचाना नहीं। कहा है—

"पारख के सिद्धान्त में, परख परख सब काम।"

[अङ्क–७]

तुम सब देवियाँ अपने को इस पंच भौतिक जड़ देह से भिन्न जनइया, देह यंत्र का संचालक, देह तथा मन का द्रष्टा- परीक्षक पारख स्वरूप (ज्ञान स्वरूप) नित्य तृप्त अखण्ड, कारण-कार्य आधार- आधेय रहित निराधार अबिनाशी चैतन्य स्वरूप समझो। अब और भी अधिक ध्यान देकर समझो! जैसे पदार्थों को देखने वाली नेत्र पुतली पदार्थ नहीं होती, स्वाद लेने वाली जिह्वा स्वाद नहीं होती, इसी प्रकार देह इन्द्रिय मन जड़ तत्त्व, जड़ बिषय इत्यादि सब दृश्य जड़ का परीक्षक- द्रष्टा जनैया जड़ दृश्य से भिन्न है। तुम स्त्री पुरुष- नपुंसक ये दृश्य त्रय देहों के सरूप नहीं हो' ये तीनों प्रकार की देहैं जीव के कर्म संस्कारों से बनी जड़ हैं।

प्रत्यक्ष देखो! १— मनुष्य खानि कर्म भूमिका है। २ पिण्डज— पशु आदि पेट से बच्चा बनकर पैदा होने वाले जानवर। ३ अण्डज— अण्डा से पैदा होने वाली देहैं ये त्रय खानियों में नारि-पुरुष मयी देहैं हैं। और उष्मज खानि बिना माता- पिता सम्बंध के पैदा होने वाले कीड़ों में नारि तथा

पुरुष पन नहीं है, यदि जीव नारि-पुरुष सरूप होते तो उष्मज खानि में ये जीव कैसे जाते ? फिर उस खानि में जीव कहाँ से आता ? कर्म तो उष्मज़ खानि में बनते नहीं, कर्म करने बनने की भूमिका केवल मनुष्य ही देह है, इसी देह से शुभाशुभ कर्म बना कर चारों खानि में जीव जाता-भोगता है।

कहा भी है—"साधन धाम मोक्ष कर द्वारा।" (रा०)

"आकर चारि लाख चौरासी। योनिन भ्रमत जीव अविनाशी ॥"

इन प्रमाणों से जीव त्रय लिंग रहित सर्व देहों व पदार्थों का द्रष्टा परीक्षक शुद्ध चैतन्य सब एक समान पारख स्वरूप ही हैं, केवल स्व-स्व कर्मों अनुसार देहें तथा देहों के भोग भिन्न-भिन्न भोगते हैं। अब हम तुम सब कर्म क्षेत्र मानव देह में आकर मोक्ष कर्त्तव्य सरलता से कर सकते हैं। केवल समझ साहस दृढ़ता सत्संग परायणता की आवश्यकता है।

[अङ्ग-८]

अब सभी जन स्थिर हो गम्भीरता से समझो-परखो ! तुम जनैया परीक्षक चैतन्य ज्ञान स्वरूप हो, बाहर लक्ष दो ! तुम बाह्य जड़—माटी पानी आगि वायू शून्य आकाश को जानने वाले हो, तब तुम चैतन्य जनैया उन तत्त्वों से भिन्न हो। इन तत्त्वों के गुण—शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गंध। तिन तत्त्वों के धर्म—शुन्य-कोमल-उष्ण-शीत कठोर तिन के भी परीक्षक जनैया तुम उनसे भिन्न हो अर्थात् शब्दादि तथा शीतादि तुम्हारा स्वरूप

नहीं, सबों के ज्ञाता तुम सबों से निराला शुद्ध चैतन्य परीक्षक ही हो।

जब तुम जड़ तत्त्वों के गुण-धर्म नहीं हो, तब जितने भी जड़ तत्त्वों के कार्य पदार्थ बनेंगे या बने हैं उन सबों के भी तुम परीक्षक-जानक-मानक हो, तो फिर तुम जड़ कार्य पदार्थ कैसे हो सकते हो? किन्तु तिनके ज्ञाता ज्ञान स्वरूप भिन्न हो। इस प्रकार सारे जड़ कार्य भू मण्डल के परीक्षक ज्ञाता सर्व जड़ पंच विषय रूप भूमण्डल को त्याग कर अपनी हैता-चैतन्यता में मुड़ के आओ। अब अपने नज़दीक—देह-इन्द्रियाँ और १ हाड़, २ चाम, ३ रोम, ४ मांस, ५ मज्जा। १ लार, २ मूत्र, ३ पसीना, ४ रक्त, ५ बिन्दु। १ भूँख, २ प्यास, ३ आलस, ४ निद्रा, ५ जमुहाई, ६ जठराग्नि, ७ पित्त। १ चलन, २ बलन, ३ धावन, ४ पसारन, ५ संकोचन। १ प्राण, २ अपान, ३ समान, ४ उदान, ५ ब्यान। १ कूर्म, २ किंकिरा, ३ धनंजय, ४ देवदत्त, ५ नाग। १ काम, २ क्रोध, ३ लोभ, मोह, ५ भय आदि और हाथ-पाँव-मुख-शिश्न-गुदा, त्वचा-नेत्र-नासिका-कर्ण-जिह्वा। जाग्रत-स्वप्न-सुषोप्ति। राजस-तामस-सातस इत्यादि इन सबों के जनैया तुम पारख स्वरूप ज्ञाता हो। इन सबों से भी अलग हट के अब अपने चैतनत्व भाव में आओ और ठहरो। जड़ कार्य देह इन्द्रियों से निकल आये, अब और आगे परीक्षा करो कि— जो अंतःकरण में नाना वासनाओं का समूह (ढेर) है वही मन का सरूप है, तहाँ

से स्मरण-भावनायें जोरों से हृदय में उठती हैं, उनके भी तुम इस प्रकार ज्ञाता हो कि—ये भावनायें हमारे सामने आईं, ये भावनायें अच्छी हैं या बुरी हैं, आज ये मन हो रहा है, हमारा ये मन है तो सही परन्तु ऐसा मानना योग्य नहीं, याते उस मानव को हटा दिये, ये स्मरण समूह मन की लहरी रूप संकल्प विकल्प हैं। अब ये चिंतन हो रहा है सो ठीक है या नहीं ठीक है। ये निश्चय योग्य है और ये निश्चय हमें झंझट में डालेगा। ये कार्य अवश्य करूँगा, ये कार्य नहीं कर सकता, अरे! ये कार्य कैसे करने लगा? अब तुरंत रोक दिया। उपरोक्त कथन प्रमाण समझें कि हम चैतन्य इस मनके मानने न मानने वाले परीक्ष ज्ञाता। चित्त के चिंतन को घटाने-बढ़ाने, मिटाने वाले परीक्षक ज्ञाता। बुद्धि से निश्चय को सम-विषम करने वाले परीक्षक ज्ञाता। अहं करतूत को बदलने न बदलने वाले परीक्षक ज्ञाता हम इन सबों से भिन्न हुए। इस उपरोक्त सर्व निर्णय से तो दृश्य चतुष्टय जड़ के ज्ञाता सबों से भिन्न हम चैतन्य सिद्ध हैं, याते सर्व मनोमय वासनाओं से चैतन्य भिन्न ही ज्ञान स्वरूप है।

अब स्वस्थिर होकर परीक्षा करो कि तुम्हारे में स्मर्ण रूप वासनायें भी नहीं, तब तुम निर्वासनिक अपने आप स्मर्ण से रहित ठहरे। जब तुम्हारे पास बाहर का जड़ कार्य कुछ नहीं, देह-इन्द्रियाँ-मन-स्मरण आदि कुछ नहीं, तब तुम सर्व सम्बंध लगाव रहित अपने आप स्वयं निराधार ठहरे। बस! अब

तुम चैतन्य सर्व परे स्वयं अपने स्थिर हो, शांत हो, स्वयं निर्विकल्प ज्ञानमात्र स्व स्थिर निराधार हो। शांत ! शांत !! शांत !!! सर्व जड़त्व भाव स्मर्ण रहित स्वस्थिर शांत ! शांत ! शांत !!! यही सर्व यथार्थ पारख बोध तथा अंतिम ठहराव है।

[अङ्ग–९]

अब तुम मुमुक्षा बुद्धिमती देवियों को अपरोक्ष अपने आप स्वरूप का अनुभव हुआ होगा ? इस पारख बोध के सनमुख जड़ दुनियाँ ही जीवों को बंधन-भ्रम जाल है, सबों में सुख मानना महा भ्रम है। यह दृश्य जगत खानि-बानि भ्रम जाल अपने स्व स्वरूप का यथार्थ अनुभव ज्ञान न होने रूप भूलसे ही खड़ा है। इसी पर श्री सद्गुरु कबीर साहेब कहे हैं—शब्द-

आपन पौ आपुहि बिसऱ्यो।
जैसे श्वान काँच मन्दिर में, भरमित भूसि मऱ्यो ॥
ज्यों केहरि बपु निरखि कूप जल, प्रतिमा देखि पऱ्यो ॥
वैसे ही गज फटिक शिला में, दशनन आनि अऱ्यो ॥
मर्कट मूठि स्वाद नहिं बिहुरे, घर घर रटत फिऱ्यो ॥
कहहिं कबीर ललनी के सुवना, तोहि कौने पकऱ्यो ॥

और भी– "मानि मानि बंधन में आवा।
निज कर्त्तव्य में आप बँधावा ॥
माने ते बंधन सब होई।
बिन माने सब जात विगोई ॥" (नि०)

ये नव अङ्गो से यथार्थतः संक्षिप्त स्वस्वरूप पारख ज्ञान

समझाया गया, अब इसे जाकर सर्व मुमुक्षु श्रोताओ खूब भली भाँति मनन करो। ये स्व पारख बोध का आद्योपांत समझौता ठीक से प्रतिक्षण साक्षात्कार रखना बहुत जरूरी है, यही मोक्ष ठहराव की असली भूमिका है। यही श्री सद्गुरु कबीर साहेब का भी असली यथार्थ देन है। यह दिव्य पारखबोध श्री कबीर साहेब के अलावा कोई भी तिन से पूर्व यथार्थ न शोध सका, इसलिये सर्व परे आप का ही देन है। कहा है—

साखी– जग परताप कबीर का, जो पारख सिद्धान्त।
 निराधार पद प्राप्त कर, जहाँ न ससृत भ्रान्त॥

नौ अङ्गों से समझौता समाप्तः (मुक्तिद्वार)

इस पारख बोध वर्षा को प्राप्त कर सर्व सज्जन संत भक्त तथा प्राचीन सत्संगी देवियाँ और नवीन त्रय देवियाँ ऐसे प्रसन्न हुईं—"सूखत धान परा जिमि पानी।" सर्व संशय-कल्पना-भूल-भ्रम जन्य त्रयताप मयी अनादि खानि बानि की जलन आज गुरुबचनामृत से निवृत हो गई। अपने पद से मरे हुये को अमृत वर्षा प्राप्त हुई। अब अधिकाधिक परमानंद दशा में निमग्न हो सभी जन एक स्वर से सनिष्ठ कर जोर त्रय वार बन्दगी करते भये। पुनः सनम्र हृदय से गुरु उपकार स्मृत कर गाने लगे।

[भजन–कहरा]

विष भरि की गागरिया मोरी, डार्यो गुरुवर फोरि हो॥टेक॥

यह संसार महा दुख सागर, जेहि का ओर न छोर हो।
दुक्खै दुक्ख भरा तहँ पानी, देखि डरै जिय मोर हो ॥
दुख सागर उबारन गुरुवर, आलस डार्यो तोरि हो ॥ १ ॥
बड़े बड़े विकराल ज़ानवर, कामादिक भ्रम भूल हो।
रहत विषैले और जीव बहु, राग द्वेष छल क्षोभ हो ॥
अमित काल के कटहे जन्तू, मार्यो गुरुवर मोरि हो ॥ २ ॥
पंच विषय ये सर्प विषैले, काटिन इन्द्रिन मोर हो।
जहेर बेधि गा इन्द्रिन द्वारे, कुण्ड हृदय विष जोर हो ॥
ज्ञान भक्ति वैराग्य से नाश्यो, विष आसक्ती खोरि हो ॥ ३ ॥
मनोभाव औ भरम महा गढ़, चूर किये गुरुदेव हो।
पारख बोध रहनि प्रभु दीन्ह्यो, अमरपुरी सुख सेव हो ॥
यहि विधि 'शरण' अमरपुर पायों, बन्दौं तन मन घोरि हो ॥ ४ ॥

उपकार स्मृति भजन के पश्चात त्रय देवियाँ स्वबोध से अति सराबोर प्रसन्न चित्त से सः उत्साह उदारता पूर्वक पूजा भेंट करके कह रही हैं कि—

"अमित काल में कीन्ह मँजूरी। आजु दीन्ह विधि सब भरि पूरी।" रा०

सर्व प्रकार संतुष्ट हो सभी भक्त गुरुदेव के द्वारा फल-मेवा- मिष्ठान प्रसाद पाकर हाथ जोड़ त्रयवार शीश भेंट बंदगी करके चल दिये। श्रवण किये हुए बचनामृत को मनन करते हुए स्वबोध में संतुष्ट अपने- अपने आश्रम में पहुँची। देवियाँ घर आके दोपहर में कौटुम्बियों के एकत्रित होने पर गुरु का महाप्रसाद सबों को दीं, पुनः श्रवण किया हुआ पारख बोध

अपने कौटुम्बियों को सुना रही हैं, सो सुन-सुनके कौटुम्बीजन अति प्रसन्न हुए और गुरु आदेशानुसार धारणा में चलने लगे।

शाम को सभी सत्संगी देवियाँ इकट्ठा हुईं और बन्दगी-भाव पश्चात् 'भानुमती देवी बोलीं—गुरुदेव द्वारा जो-जो वचनामृत श्रवण किया गया सो पारी-पारी अब सभी जन कहो, प्रथम सुशीला कहें।

विधि पूर्वक सुशीला नवो अङ्गों को बड़ी सावधानी से सुनाई और कहती हैं कि हम जो कुछ प्रसंग में भूल गई हों सो कृपया अपने-अपने कथन में सूचित कर देवेंगी, ज्यादा साहेब बन्दगी।

अन्य देवियाँ भी बारी-बारी कह चुकीं तब वे नवीन त्रय देवियाँ सःमोद बोलीं—अरे! हमारा बहुत समय धोखे में गया। माता—भानुमती जी से नातेदारी का असली फल तो हम तीनों को अब आज सार्थक हुआ' नाता हो तो ऐसा हो' मित्र हो तो ऐसा हो। धन्य है इस महा तीर्थराज को! धन्य है इस मानसरोवर को!! ऐसे महान शिरोमणि तीर्थराज में हम सब यथार्थतः तृप्त हो गईं। अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष आदि अविनाशी पद प्राप्त हुआ। माताजी तथा बहेन-सुशीला जी! हम सबों के लिये कल सवेरे-फल-प्रसाद-पुष्प-अगरबत्ती-कपूर-नवीन वस्त्र ये सब सामग्री मँगवा दीजिये, चंदन तो घर में ही है और भोजन प्रसाद तो कल हमारी तरफ से गुरु आश्रम पर बनेगा, तहाँ सभी प्रेमी भक्त सत्संगी

छोटे बड़े सब वहीं जीमैंगे, यह हमारी काञ्छा पूर्ण करा दीजिये ।

भानुमती देवी—प्रबंध तो सब हो जायगा परन्तु यहाँ तो सब कुछ साज सामग्री गुरुवर की ही है ।

त्रय देवियाँ—अब हम भी तो सद्गुरुदेव की ही हो गइं, हमारे में हम् पना कहाँ रहा ? अब तो गुरुपद के अलावा सब ही भ्रम निश्चय हो गया । माता जी ! अब हमें कल गुरु-मंत्रोक्त हीरा सविधान—अवश्य दिला दें । मोक्ष कार्य कर्त्तव्य हेत गुरुवर का बचन भी है—

"दोहा-काल करन ते आज कर, आज करन ते अब ।
पल में प्रलय होत है, बहुरि करोगे कब ॥"

भानुमती देवी— तुम सब की इच्छा है तो हम प्रातः ही गुरु समीप जाकर तुम्हारी तरफ से निवेदन करेंगी, जैसा बन्दीछोर का भाव होगा वैसा किया जावेगा ।

बूढ़ी भानुमती देवी सवेरे ही गुरुवर के पास पहुँची, वे स्नानादि क्रिया पश्चात् स्व आसन आसीन थे, सनम्र बन्दगी-भाव पश्चात् समय योग्य त्रय देवियों का निवेदन बन्दीछोर से सुनाइं, सो समाचार सुनकर त्रयदेवियों को गुरुवर कुछ दिन अभी मंत्र देना नहीं चाहते थे, परन्तु भानुमती देवी ने कहा-भगवन् ! ये तीनों हमारी ही बेटी समझिये, ऐसे बहुत विनय-निवेदन कर सब मंजूर कराके शीघ्र लौट पड़ी, वहाँ त्रय देवियों की ओर से भोजन प्रसाद का प्रबंध हुआ और करीब

आठ बजे सब भोजन-सामग्री लेकर गुरु आश्रम पर पहुँच गईं, आज सत्संग का टाइम आठ बजे के बजाय चार बजे रख दिये। प्रसाद तैय्यार हुआ, अब सब संत-भक्त स्नान करके आ गये।

साधु—गुरुबोध दास जी भक्ति भेष का विधान सर्व तैयार कर रक्खे थे, अब विधिवत् गुरुवर कृपा करके तीनों देवियों को भक्त बना दिये। त्रय देवियों को बड़ी प्रसन्नता हुई, अब पूजा-आरती हो के परसाद बाँटा गया, तत्पश्चात् सर्व सन्त भक्तों का भोजन प्रसाद हुआ और सर्व जन बन्दगी भाव करके चले गये, अब शाम को चार बजे सर्व सत्संगी देवियाँ तथा भक्त गण सत्संग हेत सद्गुरु ढिग आश्रम पर आगये, भक्त गण तथा सर्व देवियाँ बन्दगी भाव करके शांत-चित्त से गुरु ध्यान में निमग्न हैं। कुछ देर बाद त्रय देवियाँ सःमोद भजन कहने लगीं—

[भजन]

साहेब हमरी बहियाँ जनि छाँड्यो पकरिकै ॥ टेक ॥

दया किह्यो गुरु दरश दियो है, लोभ मोह ममता मद हरि कै ॥
बहियाँ पकरि गुरु रहियाँ बतायो, दुखसे छुड़ाय गुरू सुखिया करिकै ॥
साखी शब्दकी रीति बतायो गुरु, कसरि बिकार दिखायो सब कहिकै ॥
साहेब विशाल गुरुदया है आपकै, शब्द कह्यों मैं सुरति सँभारिकै ॥

भजन भाव कहकर सब मुमुक्षा देवियाँ सप्रेम त्रय बार

कर जोर साहेब बन्दगी करके शांत चित से पुनः गुरू के ध्यान में स्थिर हो गईं।

कुछ देर बाद बन्दीछोर स्वस्थिति से अब सबों की ओर दया दृष्टि कर बोले—

सद्गुरु देव प्रवचन—हमारे वाक्यों पर ध्यान दो और कहो कि कल जो हमने स्व स्वरूप बोध का निर्णय सुनाया था सो क्या-क्या समझ में आया ?

भानुमतीदेवी— भगवन् ! ये सब जब से आप का वचनामृत सुनकर गई हैं तब से पारी-पारी पुन-पुनः मनन-निदिध्यासन तो खूब कीन्हीं हैं, हम इन सबों का कहना सुन रही थीं।

अच्छा ! तुम तीनों बेटियाँ कहो ! क्या-क्या समझीं ? बन्दीछोर से सब सुचित करो।

त्रय देवियाँ— नमन कर कहती हैं कि श्री प्रभुदेव की महान्य कृपा का प्रकाश हमारे हृदय में हो गया। अब हमें गुरुवर की दया से यही निश्चय हुआ कि हम चैतन्य ज्ञान स्वरूप हैं, नित्य तृप्त अविनाशी अखण्ड शुद्ध पारख स्वरूप सर्व जड़ परे निराधार एकरस चैतन्य हैं। न हम स्त्री, न पुरुष, न देह स्थूल, न चारि खानि, न हम कौटुम्ब, न मन, न चित्त, बुद्धि, न अहं, न त्रिगुण, न चार तत्त्व, न शुन्य आकाश, न पिण्ड, न ब्रह्माण्ड, न ईश्वर, न खुदा, न ब्रह्म न ईसामसी, न देव, न भूत-प्रेत, न जिन्द, न स्वर्ग, न नर्क, न लोक लोकान्तर, न गण-गंधर्व, न अष्ट सिद्धि-नव निद्धि, न हिन्दू, न मुसल्मान,

न ईसाई, न ब्राह्मण-क्षत्रिय, न वैश्य-शूद्र, न दस अवतार, न त्रि-देवा, न जड़तीर्थ-मूर्ति-व्रत, न कर्मोपासना-योग, न यंत्र-मंत्रादि उपरोक्त ये सब के कल्पना करने वाले परीक्षक हम चैतन्य पारख स्वरूप सत्य हैं। दृश्य चार जड़ तत्त्व तथा तिनके स्वभाविक जड़ कार्यों के अलावा सर्व हमारी कल्पना भ्रम मात्र-बिल्कुल असत्य है।

अब हम शुद्ध पारख दशा में एक रस ठहरने हेत जब तक प्रारब्ध देह सम्बन्ध है तब तक शुद्ध पवित्रता पूर्वक रज-तम रहित शुद्ध सातस भाव युत सद्गुण धारी बनें, उदारता पूर्वक गुरु सेवा पूजा उपासना सत्संग इन्द्रिय-मनो निग्रह साधन तथा कुसंग से पर्हेज़ रक्खें और संत गुरु व सज्जन भक्तों और स्व प्रारब्धमय देह रक्षकों का योग्य सम्बंध व्यवहार बर्ताव करते हुए नित्य गुरुध्यान, सद्ग्रंथ मनन, गुरु भजन सहित स्वबोध में हमें सदा निमग्न रहना चाहिए। आप गुरुवर की कृपा से यही दृढ़ निश्चय हो गया। अब जैसा हो कृपया और भी गुरुदेव का दया दान इन दासियों को मिल जावे तथा परिपुष्ट हो जावे।

सद्गुरु वाक्य— इस बूढ़ी भानुमती देवी व सुशीलादि सभी देवियों को हम बहुत दिनों से सत्संग सुनाते आये, तिन में ये निम्न प्रसंग अब घर जाकर सत्संग बैठक में एक-एक करके सुन समझ लेना, वे प्रसंग ये हैं—अनुसुइया के कहे पतिव्रत नेम, नित्य कर्तब्य, नारियों के द्वादश आदेश, नारियों के अष्ट अवगुण सुधार उत्तम भक्ति विधान, ऐसे खाश-खाश कई

प्रसंगों में सर्व सुधारके यथार्थ बर्तावों का विधान आ जावेगा।

[मनो निवृति के कुछ साधन]

सद्गुरु प्रवचन— पूर्व के बतलाये हुये सर्व साधन विचार तथा स्वरूप बोध अपरोक्ष हो जाने पश्चात् मनोनिवृत का साधन बनाना अति आवश्यक है।

[सद्ग्रंथ भाव में लक्ष की स्थिरता]

१— देह सम्बंधी सर्व भार ब्यवहार तथा जन सम्बंध से बिल्कुल छुट्टी लेकर एकान्त में 'स्वबोधक' इष्ट का ध्यान तथा बोध ठहराव के सद्ग्रंथ व कंठाग्र किये हुए पारख ज्ञानमयी प्रवचनों को अर्थ-भाव समझते हुए मनन युक्त पढ़ना, पाठ करना, उसी भावार्थ में लक्ष स्थिर कर देना ये साधन की तो हरहमेश आवश्यकता है।

[बोधकदेव के ध्यान में स्थिरता]

२— शारीरिक सर्व कार्य भारों से बिल्कुल निवृत हो दो-तीन घंटा टाइम लेकर रात या दिन में या किसी भी योग्य समय हल्ला दङ्गा रहित एकांत शांत स्थल में पद्मासन से बैठ जावे। प्रथम अपने बोध लक्ष में प्रवेश होवे। फिर जड़ ब्रह्माण्ड से लक्ष खींचो, पुनः देह और हृदय के स्मरणों से लक्ष समेटो, अब स्व बोधक इष्ट के बोध रहस्य युक्त तिन के शांति स्वस्थिर मूर्ति के स्वरूपाकार वृत्ति में स्थिर होओ. इस स्थिरता के अलावा कोई भी शुभाशुभ स्मरणों को न आने दो तथा तिन्हें फेंकते रहो, तिनको बल न दो, ऊबो-डूबो नहीं, यही

एक अपना असली काम समझो, ऐसा समझ के दृढ़ रहो। प्रथमारम्भ अभ्यास में वासनाओं की उलझन से कठिनता मालूम पड़ेगी, कुछ काल लगातार अभ्यास से यह साधन अभ्यास सरल हो जावेगा और जगत विषय रहित गुरु ध्यान की शांत स्थिरता का सुख प्राप्त हो जावेगा। यह विधि पूर्वक अभ्यास हो जाने से आगे का साधन तथा स्वरूप स्थिति अभ्यास सरलता से सिद्ध हो जावेगा।

[मनो निग्रह-पारख स्थिति अभ्यास]

३— जैसे गुरु ध्यान के अभ्यास में जो एकान्तता तथा बैठक का विधान बतलाया गया, वही विधान यहाँ भी रखना होगा। गुरु ध्यान तो आधारित साधन है, यह 'पारख स्थिति, निराधार साधन है। प्रथम तो पद्म आसन या जिस योग्य आसन से देर तक बैठ सके, स्थिर हो सके उस साधन सः योग्य आसन से बैठ ज़ावे पुनः गम्भीरता से शांत हो सर्व तरफ से अपने आप में सिमिट के लक्ष दृढ़ करे। स्व स्थिरता के सन्मुख जो भी स्मरण आवें उन्हें अपने से भिन्न करके देखते रहे, उस में अपनी ओर से बल न दें, उनमें मिले नहीं। स्थिति दशा के विघ्नक—निद्रा व अनुकूल-प्रतिकूल स्मरण या ऊब डूब आदि जो कुछ भी सामने आवे सबसे अभाव ही रहे, उसके विवश न होवे, तिन में मिले नहीं, अपना बल उधर न जाने पावे, ऐसे मनोसंग्राम में पिछड़े नहीं, कुछ समय साधन में दृढ़ रहते-रहते प्रारब्धिक-पुरुषार्थिक स्मरण अपना चैतनत्व बल न पाने से वे

मनोदृश्य शक्तिहीन है स्वयं रुक जावेंगे। बस मनोयम से विजय प्राप्त होकर अपने आप ही शुद्ध पारख स्वरूप स्थिर है। ऐसी अभ्यास बहुत काल करते-करते स्थिति का साधन परिपुष्ठ हो जाने से स्थिरता की एक बलिष्ठ शक्ति बन जावेगी, जिसके द्वारा हरक्षण-हरहमेश स्वस्थिति समाधि एवं पारख समाधि की साम्राज्य हो जायगी, इसे सर्व परे जीवनमुक्ति दशा भी कहते हैं। यह तीसरा आखरी साधन है, सो तुम सभी जिज्ञासुओं को बतलाया गया है।

इसी साधन ठहराव हेत पूर्व-पूर्व स्थूल साधन ज्ञान धारणयें बतलायी गई हैं और आगे भविष्य में नाना ज्ञान-ध्यान, शंका समाधान होते ही रहेंगे।

अब हमारा समझौता और टाइम समाप्त है। शाम हो रही है, तुम सब भी स्व-स्व आश्रम को जाओ।

श्री सद्गुरुदेव का लक्ष देख समझ के शीघ्र सर्व श्रोता बड़े अह्लाद से जय-जयकार मनाते हुए सद्गुरु देव के सनमुख सनम्र कर जोर त्रयबार साहेब बन्दगी करके गुरुमूर्ति तथा उनका आदेश हृदय में बसाकर चल दिये।

प्राचीन तथा नवीन त्रय देवियाँ ये सब गुरु आदेश मनन करते हुए अब मनोनिग्रह में अधिक बल देकर जुट पड़ीं। सभी देवियाँ नित्य अधिकाधिक मोक्ष श्रद्धालु हो के सनियम गुरुवर-इष्टदेव का नित्य दर्शन, पूजन, बन्दन, भजन, सत्संग श्रवण करतीं और मनोनिग्रह के तीनों साधनों में प्रथम साधन से

आरम्भ करते-करते दूसरे साधन (गुरुध्यान) में सभी देवियाँ आ गईं । अब खानि-वानि के मनोजाल से बहुत कुछ छुट्टी पा गईं । एक दिन सभी सत्संगिनी देवियाँ एकात्रित बैठी सलाह कर रही हैं कि बहिन सुशीला जी ! कृपया आप पुनः पारख बोध तथा स्व ठहराव की पुष्टी हेत समयानुसार श्री सद्गुरु-देव से सविधि प्रश्न करें और उसका सविस्तार उत्तरामृत पान किया जावै । इस सम्मत सलाह पश्चात् सभी देवियों के सहित सुशीला एक पद्य (भजन) गायन करने को प्रारम्भ करदीं—

[भजन-भक्ति उत्कण्ठा]

गुरुवर कृपा से अब तो, निज मोक्ष पद गहैंगी ।
मन की कुचाल को अब, जड़मूल से दहैंगी ॥ टेक ॥

संकट सहे सदा से, कोई न दुख उबार्यो ।
सब भाँति गुरु उबार्यो, अर्पण तिन्हीं रहैंगी ॥ १ ॥

माया के बश में भूली, देहीं के भाव शूली ।
सो भूल देह भ्रम तजि, निज हंस पद लहैंगी ॥ २ ॥

भ्रम चक्र जग नचायो, दुर्गति सभी करायो ।
गुरु परख ज्ञान पायों, मन बस न अब बहैंगी ॥ ३ ॥

गुरु सम न और कोई, देख्यों मैं जग बिलोई ।
तन मन व धन निछावर, उपकार गुरु कहैंगी ॥ ४ ॥

बन्दौं व ध्याओं गुरुको, चाहूँ 'शरण' न जग को ।
'शीला' तो एक बोधक, नहिं और कुछ चहैंगी ॥ ५ ॥

[भजन-भक्ति भाव]

मिले गुरुदेव बताये मोहिं रहियाँ ॥ टेक ॥
खानि बानि के मारग बहुतै। गुरु पारख से दीखै सब खहियाँ ॥
मन की ठगेहियाँ से बहु दुख पायों। ठग से बचाय पकरि मोरी बहियाँ॥
नेम धरम रखि तन धन अर्पौं। चरण पखारि पूजों गुरु कहियाँ ॥
ज्ञान अटरिया बिठाये गुरु साहेब। तिन केरी भक्ति से सब सुख लहियाँ॥
दासिन के सब बंधन छूटे। गुरु उपकार न भूलौं अब कहियाँ ॥

॥ त्रय देवियों को हित आदेश, तीसरा सम्वाद समाप्तः ॥

चौथा सम्बाद-सिद्धान्त

पारख बोध

[सर्ब सत्संगी देवियों प्रति गुरु आदेश]

दोहा- अन्य दिवस सब देवियाँ, शीला के गृह आय ।
बहु हुलास उर प्रेम भरि, गुरू दरश हित धाय ॥
त्रय देवी सब संगिनी, गुरु गुण गावत जायँ ।
जिमि दरिद्र धर्मेश गृह, धन मिलने हित धायँ ॥

छन्द- भानुमती शीला त्रयदेवी औरौ ज्ञान कि प्यासी जो ।
सभी आय अह्लाद से गुरु पद शीश भेंट त्रय नमती सो ॥
फूल माल पहिनाय गुरू गल भेंट प्रसादै आरति वो ।
नमन भाव करि भजननिवेदन गावत ध्यानसे मोदित सो ॥

[भजन निवेदन]

दीजै गुरु ज्ञान मैं पइयाँ परूँ।
दिलसे अँधेर मिटै पइयाँ परूँ ॥ टेक ॥
गुरुवा जगत जीव माया में बाँधैं।
बंधन छुड़ाओ गुरू पइयाँ परूँ ॥ १ ॥
तन मन व धन गुरू अर्पण कराओ।
माया से पार करौ पइयाँ परूँ ॥ २ ॥
इन्द्री व मनुवाँ भोगन नचावैं।
सब से निरस करौ पइयाँ परूँ ॥ ३ ॥
भक्ती विराग गुरू पारख डटाओ।
देव यही भीख गुरू पइयाँ परूँ ॥ ४ ॥
दुर्गुण मिटाय गुरू शुभ गुण बसाओ।
अर्ज़ी सुनौ मोरी पइयाँ परूँ ॥ ५ ॥
जैसा हुँ यकरस शुद्धै रहाऊँ।
पारख प्रकाश 'शरण' पइयाँ परूँ ॥ ६ ॥

प्रश्न—

सोरठा— मम उर धरौ दयाल, 'पारख बोध' विधान प्रभु।
तम हरि करौ बहाल, सदा कृतज्ञ मैं दीन अति ॥
दोहा— करी प्रश्न भरि प्रेम उर, चुप बैठी शिर नाय।
बच्छ उमंग लखि गौ द्रवित, क्षीर बोध बहि आय ॥
गंग जमुन वत् क्षीर चलि, हुलसि सुजन पियें धार।
वही कथा यह श्रवण करि, 'शरण' तृप्त भव पार ॥

उत्तर— सद्गुरुदेव प्रवचन— पारखबोध निर्णय

दोहा—सभी मुमुक्षा देवियो, सुनो ध्यान उर धीर।
रहनि रु पारख कह्यों सब, पर अब इकठै क्षीर॥
"जड़ चेतन दुइ वस्तु हैं, अति प्रसिद्ध जग माहिं।
इनकी पारख प्राप्ति बिन, बंधन छूटत नाहिं॥"

क्षिति जल पावक और समीरा। चार तत्व जड़ सदा रहीरा॥
तिनकी उत्पति नाश न कबहीं। षड❀भेदन से पूरण सबहीं॥
अणु परमाणु से ठोस सकारा। निराकार कोइ वस्तु न सारा॥
षड् भेदन से तत्त्वन कारज। बनि बिगड़त तेहि कारण धारज॥
कारण चारि तत्त्व के ढेरा। समिरि सूर्य निधि भू है टेरा॥
इनहिं से कारज बनते नितही। कारज बिनशि के कारण तितही॥
क्रियाशील नित तत्त्व रहाई। यकरस रहत न तत्त्व सदाई॥
इमि कारण औ कार्य अनादी। जड़ सृष्टी ए तत्त्व चलादी॥

❀ टिप्पणी— षड् भेद कोष्टक—

	१ आकार	२ गुण	३ धर्म	४ क्रिया	५ शक्ती	६ सम्बंध
पृथ्वी—	१ स्थूल	गंध	कठोर	चक्राकार	धारणा	अन्य तीनों तत्त्वों से संबंध
जल—	स्थूल	रस	शीतल	अर्ध	रसायना	,, ,, ,,
अग्नि—	सूक्ष्म	रूप	प्रकाश	उर्ध	दाहक	,, ,, ,,
वायू—	सूक्ष्म	स्पर्श-शब्द	कोमल	तिर्छी	स्नेहा	,, ,, ,,

आकाश निराकार शुन्य—चार तत्वों के परमाणुओं के बीच शुन्य जगह का नाम आकाश है, यह कुछ पदार्थ नहीं है। इसमें गुण धर्म शक्ति कुछ नहीं। ये षड् भेद हैं और पृथ्वी जल अगिन में क्रमसः पीला, सफेद, लाल रंग है और वायु रंग रहित अदृश्य है।

जड़ सृष्टी का अन्य न कर्त्ता । मानत भूल विवश कोइ भर्त्ता ॥
अहिनिशि षड् ऋतु तत्त्वन मानो । शक्ति महा पर जड़ ही जानो ॥
दोहा– कारण का कारण नहीं, जड़ अनादि प्रवाह ।
तातें कर्त्ता भ्रम कहव, औरौ सुनि भ्रम दाह ॥
ज्ञान ज़ान जहँ किंचित नाहीं । चेतनपन कदि ह्वै न सकाहीं ॥
याते चारौ जड़ै कहावैं । अपने परै न ज्ञान तहावैं ॥
हूँ मैं ना हूँ कबहुँ न भानै । जड़ में चेतन पन नहिं आनै ॥
जड़ को चेतन जाननहारा । ज्ञान स्वरूप वो जड़ से पारा ॥
तत्त्वन जानत तत्त्व न होई । जानन वाला न्यारा सोई ॥
याते अहै स्वतंत्र जनइया । नहिं उत्पति वह सदा रहइया ॥
शून्य से कोई वस्तु न होवै । चव साकार में जीव न जोवै ॥
अंशी अंशै रहित सदाई । चेतन गुण से पूर्ण रहाई ॥
चेतन जीव ज्ञान सब एका । निज निज रूप से सदा अनेका ॥
व्यापक व्याप्य परे अविनाशी । भूल भरम वश भ्रमत सदाशी ॥
दोहा– चारों जड़ तत्त्वन परे, पँचवा चेतन जान ।
नित्य अखण्ड यकरस सदा, कर्म विवश चव खान ॥
जड़ चेतन इमि पक्ष दो, सदा स्वतंत्र रहायँ ।
बने न कबहूँ नाशि नहिं, याते अबन कहायँ ॥
साखी– "निराधार कारण रहै, कारज ताहि अधार ।
कारण कारज पार जो, सो न देय केहु भार ॥" (अपनाबोध)
दोहा– जड़ देही से भिन्न चिद, पारख जीव सज्ञान ।
ज्ञानै ज्ञान स्वरूप है. अजर अमर मित जान ॥

द्रष्टा दृश्य न आवई, जड़ का परखनहार।
सदा अखण्ड वो तृप्त है, निराधार शुचि सार ॥
जड़ से परे न जड़ कोई, जिव से परे न जीव।
दोनों स्वयं स्वतंत्र हैं, भ्रम से मानत पीव ॥

जिव से जड़ै न जड़ से जिव है। दोनों रहत स्वतंत्र सदिव है।
द्रष्टा कभी दृश्य नहिं होई। दृश्य कभी द्रष्टा नहिं सोई।
जीव परीक्षक जड़ शक्ती का। ताते बहु कारज रचि जड़का।
पंच विषय जड़ गुण को जानै। भूल से सब जिव सुख तहँ मानै।
भ्रम सुख से जिव जड़गुण अरुझैं। बिन ठहरे सद्ज्ञान न सरुझैं।
सुखासक्ति ज़ड़ के बहु भोगी। नाना करम बनाय के शोगी।
करम विवश चव खानी सदाई। शक्ति करम से भ्रमत रहाई ॥
सो प्रमाण मानस रामायण। निज कर्मन चव खानि भ्रमायण ॥
"आकर चारि लाख चौरासी। योनिन भ्रमत जीव अविनाशी ॥
काहु न कोउ दुख सुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सब भ्राता॥
करै जो कर्म पाव फल सोई। निगम नीति अस कह सब कोई ॥
कर्म प्रधान बिश्व रचि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा ॥
काल कर्म बश होइ गोसाईं। बरबश राति दिवस की नाईं ॥
कौशल्या कह दोष न काहू। कर्म बिबश दुख सुख क्षति लाहू ॥"

(रामायण)

प्रमाण— [शब्द]

आपन कर्म न मेटो जाई।
कर्म का लिखा मिटै धौं कैसे, जो युग कोटि सिराई ॥

गुरु बशिष्ठ मिलि लगन शोधायो, सूर्य मंत्र यक दीन्हा ॥
जो सीता रघुनाथ बिबाही, पल यक संच न कीन्हा ॥
तीन लोक के कर्त्ता कहिये, बालि बध्यो बरियाई ॥
एक समय ऐसी बनि आई, उनहूँ औसर पाई ॥
नारद मुनि को बदन छिपायो, कीन्हों कपि को सरूपा ॥
शिशुपाल की भुजा उपारी, आप भये हरि ठूँठा ॥
पार्वती को बाँझ न कहिये, ईश्वर न कहिये भिखारी ॥
कहहिं कबीर कर्त्ता की बातैं, करम की बात निनारी ॥, (बी०)

दो०—इस प्रमाण से जीव सब, करम भोग निज भोग ।
तातें तजि अनुमान भ्रम, कर्म सुधारै योग ॥

श्लोक—स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फलमश्नुते ।
स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते ॥ (गी०)

दो०—जीव कर्म आपै करै, फलहूँ भोगत आप ।
आप भ्रमत संसार में, मुक्ति लहत है आप ॥

[छंद शैर]

नहिं उत्पति जड़ तत्त्व सृष्टि जब, चेतन भी अविनाशी है ।
सो भी अपने कर्म शक्ति से, भोगैं सब चौरासी है ॥
दोनों सृष्टि अनादि स्वयं चलि कर्त्ता कहब खलासी है ।
औरौ निर्णय मान्य जगत जस सोई समझ सुपासी है ॥
यदि जग का कोइ कर्त्ता होता । तब क्यों जिव सब दुखमें रोता ॥
पूर्व जगत जब ईश बनाया । क्यों रचि त्रय दुख जीव सनाया ॥
प्रेरक सब का ईश्वर मानो । तब वह ही युग कर्म करानो ॥

जो कर्मचारिन कार्य करावै । हानि लाभ वह मालिक पावै ॥
प्रेरक ईश्वर कर्म कराता । फिर जिव क्यों फल कर्मन पाता ॥
जब ईश्वर के रूप न रेखा । बंध्यासुत कहि जग रचि पेखा ॥
निराकार शून्य जग रचिया । बंध्या सुत नव जग रचिपचिया ॥
माटी चाक कुम्हार न दर्शै । बर्तन चिज्जड़ किमि बनि पर्शै ॥
निराकार का नहिं अवतारा । ये सब वाणी भरम पसारा ॥
सागर क्षीर❀ विष्णु क गाथा । गुरुवा ज़ीवन भरम में नाथ ॥
नहिं कहुँ ब्रह्मा विष्णु न शैना । कल्पित भ्रम गुरुवन के बैना ॥
बंध्या सुत किमि देहै धरिया । शुन्य न जग उपकारै करिया ॥
दोहा—सर्ब शक्ति ब्यापक खुदा, त्रिकाल दर्शि सब ठान ।
द्वन्द बिरोध अन्याय क्यों, बहुमत किमि अघ काम ॥

❀ टि०—] भजन]

जगत की लीला अपरम्पार ॥ टेक ॥
छीर क सागर कहाँ भरा है, वेद न पायो पार ।
गुरू हमारे भेद बतायो, देखो आँख उघार ॥ १ ॥
नारी घट सामुद्र भरा है, दूध की बहती धार ।
बालापन में सबै पियत है, राक्षस औ करतार ॥ २ ॥
नाभी से यक कमल लग्यो है, श्रवै खून की धार ।
बालक तेहि नाभी पर बैठो, तीन गुणन विस्तार ॥ ३ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश कहत हैं, केहि विधि पावैं पार ।
जीव रमा तेहि राम कहत हैं, वोही सिर्जनहार ॥ ४ ॥
भोग विषय सामुद्र मथन है, चौदह रतन सँवार ।
दश इन्द्री औ चित्त चतुष्टय, बालक हुआ तयार ॥ ५ ॥
तृण के ओट पहाड़ छिपा है, परम्परा से धार ।
बिना गुरू कोइ पार न पायो, 'रामनाथ' कस पार ॥ ६ ॥

यक देशी नृप मनुष्य की, अडरै खाश जो मान्य ।
उस नृप मानुष सामने, कोई विरुद्ध नहिं ठान्य ॥
शक्तिमान प्रेरक भरो, दया न्याई वह ईश ।
वेद कुरानी अडर तेहि, त्यागि चलैं जिव दीश ॥
जब जिव बन गौ वत मन बतैं । तब ईश्वर की मिथ्या शर्तैं ॥
लखि उपरोक्त ईश भ्रम त्यागो । बाणी मद तजि सत्य में जागो ॥
प्रेरक सर्व शक्ति युत ब्यापक । न्यायी दयावान जग थापक ॥
ये लक्षण वत मालिक होता । कभी भि जिव नहिं दुख में रोता ॥
होतै सब को सुविधा भारी । निःसंशय जिव जय जय कारी ॥
सो न देखि जिव मन गति स्वामी । दृश्य जगत आनादि रहामी ॥
जेहि विधि जिव जग बंध बनावैं । सो अब भेद को तुम्हैं सुनावैं ॥
इन्द्रिन मन के जोश में जीवा । क्रिया करत भ्रम विष सुख पीवा ॥
सोइ कर्मन में सदा घिरायो । नाचत खानिन नाहिं थिरायो ॥
दोहा– यहि विधि जीव अनादि से, झूला बेग के न्याय ।
करै कर्म पुनि देह लहि, भूल भरम दुख पाय ॥
अण्डज पिण्डज उष्मज मानव । इन चव खानि में कर्म भोगानव ॥
भूल भरम बश जब तक जीवा । चव खानिन में भ्रमत सदीवा ॥
सूरज चाँद नक्षत्रै तारा । पत्थर धातू अब्धि बयारा ॥
बृक्ष बेलि अंकूरज सब हीं । जड़ सरूप जहँ जीव न कबहीं ॥
ज्ञान मान नहिं इन्द्री तिन में । इच्छा क्रिया न अवस्था इन में ॥
अपने पर का ज्ञान न तहवाँ । मलौ मूत्र का चिन्ह न जहवाँ ॥
तत्त्वन के सब कारज जानौ । जीव जनइया तहाँ न मानौ ॥

केवल ये जड़ तत्त्व के रूपा। शक्ति अमित तहँ जड़ै सरूपा ॥
यहि विधि जड़ औ जीव रहावैं। भिन्न-भिन्न गुण शक्ति दिखावैं ॥
दोनों में है शक्ति अपारा। विन पारख जिव भ्रमत सदारा ॥
दोहा- वृक्ष बेलि पौधे सभी, हरे भरे वे बाढ़ि।
सो वायू जल अग्नि से, दीप ज्योति वत ठाढ़ि ॥
दोहा- "जब लौं जड़ चैतन्य की होत न दृढ़ पहिचान।
निर्भय पद पावत नहीं, होय न संशय हान" ॥
(सतोपदेश)
"जड़ चेतन ग्रन्थी परि गई। यद्यपि मृषा छूटत कठिनई ॥"(रा०)
पूर्व न्याय लखि चिज्जड़ जानै। धर्माधर्म भले पहिचानै ॥
करतब्य और अकर्तव्य पेखै। सत्य असत्य को विधि वत् लेखै ॥
इन्द्रिन सुखासक्ति भ्रम जानै। देह स्वभाव को गुरु मत लानै ॥
गुरू न्याय से कुसंग तजावै। पारख निर्णय सुसंग हितावै ॥
मन स्वभाव की परख करीजै। जहँ तक राग बंध तजि दीजै ॥
हंस देह के साज में राजै। धारि सजगता सद्गुण साजै ॥
माया मन की चाल से न्यारा। वपु मन गत स्व स्थीर अभारा ॥
इमि जड़ परे शांति नित साधै। गुरु पारख लहि तजै उपाधै ॥
मंत्र जाप गुरु ध्यान-में थीरा। परख समाधि मनोगत भीरा ॥
गुरुपद घेर में चित मन राखै। नित्य उदास रहै जग नाखै ॥
ऐसे पारख बोध सदीवा। समझ रहनि अभ्यास हृदीवा ॥
दोहा - हर क्षण पनिहारिन सरिस, ध्यान लक्ष निजरूप।
त्रय सम्वाद की रहनि गहि, वर्ति देह गत भूप ॥

साखी– "स्वरूप इष्ट सेये बिना, दुख तृष्णा नहिं छूट ।
पंच विषय को इष्ट करि, थाह न इष्टन जूट ॥"
(गुरुनिर्णय)

दोहा–पारख दशा में थीर ह्वै, निरस विरति वपु भोग ।
गत प्रारब्धी अटल स्व, त्रय दुख गत ह्वै योग ॥
सदा एक रस आप रहि, वही मुक्त पद जान ।
जीवनमुक्ती देह तक, बाद विदेहैं भान ॥
जो जिव यहि विधि थीर ह्वै, निःसंदेह हो मुक्त ।
वही सदा शिरमौर है, कटिबद्ध होउ सद् युक्त ॥
"पारख बोध" क भाव जो, कह्यों खाश उर शोध ।
बैठि बैठि नित सुसंग में, सुन्यो विस्तरित बोध ॥
मम उपदेश की ग्रंथ बड़, 'कबीर मानव प्रकाश' ।
आद्योपांत तेहि पढ़ि गुनौ, बहु प्रश्नोत्तर खाश ॥
निर्णय पारख बोध को, धरौ मुमुक्षा ध्यान ।
गूढ़ भाव सत्संग से, अर्थ गुनौ सद ज्ञान ॥
जस पूछ्यो तुम देवियो, उत्तर कह्यों विधान ।
अब चौथो सम्बाद इति, गहि थिर ज्ञान निधान ॥

[छन्द शैर]

ब्रह्मचारी गुरु बोध दास की, बहिन सुशीला गुण पूरी ।
करी प्रश्न गुरु सनमुख नमि जो, पपिहा बनकर मन जूरी ॥
उत्तर भो गुरु मेघ स्वाति वत लहे सभी जन सुख भूरी ।
सुनि लहि देवी सबै मगन ह्वै, नमि-नमि गावत दुख दूरी ॥

[श्रोता देविन-कीर्तन]

हम थीर हुई गुरु थीर हुई, प्रभु पीर हरी प्रभु पीर हरी ।।टेक।।
जग दुख भारी सह्यों अनारी, हर्यो हर्यो दुख हरी हरी । पीर०।।
नहिं आपबिना आधारमिली, बिललायफिरी बिललाय फिरी। पीर०।।
फिरौं न जग मग रहौं गुरू मग, ज्ञान भरी गुरु ध्यान करी। पीर०।।
श्री बोधक गुरुदेव गुरुवर, अबलन बल दै 'शरण' तरी । पीर०।।

[भजन-भक्ति भाव]

बिगड़ी हुई को बनायो मेरे प्रभो !
डूबी ए नौका तिरायो मेरे प्रभो ! ।। टेक ।।
माया के भोगन में जीवन बितायों ।
आदति औ तृष्णा की अग्नी बढ़ायों ।।
बोध अमी वर्षा से शीतल कियो प्रभो! बिगड़ी··· ।। १ ।।
मृगा समान भूलि बन बन में घूम्यों ।
दौड़ि दौड़ि पानी औ पाथर को सूँघ्यों ।।
ठौरै सुगंधी स्वरूपै दियो प्रभो ! बिगड़ी··· ।। २ ।।
आज तक कोई अधारक न पायों ।
बहते मिले जो तिन्हीं में बहायों ।।
आपी अधारक सुधारक भयो प्रभो ! बिगड़ी··· ।। ३ ।।
'शरणै' अशीश चहै गुरुपद निबाहौं ।
आपी क ज्ञान ध्यान और नहीं चाहौं ।।
हाथ जोरि 'शीला' मैं बिनती करौं प्रभो ! बिगड़ी··· ।। ४ ।।

दोहा– स्तुति वन्दन करि सबै, गुरू ज्ञान में लीन।
सह समाज सब नारि नर, त्रिविधि वन्दगी कीन॥

[त्रिभंगी छन्द]

स्तुति वादै, सब अह्लादै, हुलसि उठे कीर्तन हितै।
निज निज ठावैं, शिर नमि गावैं, कर जोरे गुरु ओर चितै॥
देह भुलाये, स्वरै मिलाये, मानो पपिहा ध्वनी थितै।
हम दीन दुखाये, गुरु सुखदाये, करूँ कीर्तन नितै नितै॥

[कीर्तन]

जय देव हरे प्रभु देव हरे।
गुरुदेव दया के सरूप हरे, गुरु पारख रूप अनूप हरे॥ टेक॥
सद ज्ञान प्रकाश प्रकाश रहे, तम घोर अविद्या विनाश रहे।
निज रूप में शांति प्रदान रहे। जय देव हरे प्र०··· ॥१॥
काम व क्रोध कराल बड़े, सब दुर्गुण फाँस में जीव पड़े।
गुरुदेव क्षमा सद सैन्य दिये। जय देव हरे प्र०··· ॥२॥
देश समाज हिलोर बहे, मत पंथ झमेल नचाय रहे।
निज पारख ज्ञान अडिग्ग किये। जय देव हरे प्र०··· ॥३॥
द्वै चिज्जड़ वस्तु बताय दिये, सब मानस रोग नशाय दिये।
इमि बोध महान सु संत खरे। जय देव हरे प्र०··· ॥४॥
शिरमौर कबीर सु दानि गुरो, जग संकट नाशक आपि प्रभो।
'शरणाय' परे जन मुक्त करे। जय देव हरे प्र०··· ॥५॥

इष्ट भाव- भजन

साहेब ! तुम्हारी बन्दगी मैं भूलता नहीं ॥ टेक ॥

देव तो यक चैतन्य देव, देव ऐसही ।
और देव आन देव मानता नहीं ॥ १ ॥

गुरू तो यक पारख गुरू, गुरू ऐस ही ।
और गुरू आन गुरू मानता नहीं ॥ २ ॥

धरम तो यक दया धरम, धरम ऐस ही ।
और धरम आन धरम मानना नहीं ॥ ३ ॥

धरमदास बिनवै, करजोरि तो सही ।
शरण आये की लाज गुरू राखिये सही ॥ ४ ॥

दो०—भजन कीर्तन करि भले, ध्यान मग्न गृह जायँ ।
चर्चत चर्चा जो सुने, और न कुछ बतलायँ ॥
धर्म भक्ति सद्ज्ञान को, पालैं यथा सुशक्ति ।
उत्तम मध्यम जो जसै, दुर्गुण तजैं असक्ति ॥
नियम गुरू पद धारते, संत सेव में लीन ।
नित सुसंग सद्ग्रंथ पढ़ि, ज्ञान करैं नित पीन ॥
हृदय उदार सुशील सब, त्रिबिधि पूज्य गुरु संत ।
गुरु पारख परकाश नित, अज्ञ भरम तम अंत ॥

[छन्द]

गुरु बोधदास के सर्व कुटुम्बी, औरहु बहु अधिकारी भे ।
गुरु पारख औ सत्य भक्ति से, जिव उर सद्गुणधारी भे ॥

सुखी हुआ स्वराज्य ये मण्डल, छली दलाल दुखारी भे।
पारख सिक्का गुरुकबीर का, तिन प्रताप जिव ज्ञानी भें ॥१॥
श्री कबीर गुरु के पश्चातै, औरौ जे गुरु स्वामी भे।
बन्दत पूजत 'शरणै' तिनहीं, जे मन तजि शुचि धामी भे ॥
यही भाव नित हृदय बसत शुचि, रागी दृश्य हरामी भे।
सर्वोपरि गुरु पारख जे गहि, वही मोक्ष पद गामी भे ॥२॥
दोहा- बोधक गुरू कबीर के, दिब्यदान से भान।
निज मन तम को नाश कर, ग्रंथ समाप्त भो जान ॥

सर्ब सत्संगी देवियों प्रति 'पारख बोध' गुरु आदेश
चौथा सम्बाद समाप्तः

दोहा- श्री कबीर औ संत गुरु, बुद्धि दिये जस आप।
वही भाव औ लक्ष लहि, लिख्यों ग्रंथ उर थाप ॥१॥
महिलन के उद्धार हित, नामकरण यह लेख।
किन्तु अमी बच जो गहै, अमर होय सोइ पेख ॥२॥
दृष्टि दोष से त्रुटि कोइ, रहि गइ हो यहि ग्रंथ।
सो सुधारि के सुजन जन, पढ़ि सप्रेम गहि पंथ ॥३॥
संत गुरू की दया से, औ प्रताप तिन आज।
चव सम्बाद में ग्रंथ अब, पूरण भयो सुकाज ॥४॥
नमों कोटि सः तिन चरण, नित उपकार मनाय।
उऋण न कबहूँ 'शरण' तिन, बोध सफल ठहराय ॥५॥

श्री सद्गुरु साहेब की दया से सद्ग्रंथ 'कबीर महिला उद्धार'
चार सम्बाद युक्त सम्पूर्णम्।

[आरती]

आरति हो गुरु आरति हो।
आरति गरीब निवाज साहेब आरति हो।
आरति दीन दयाल साहेब आरति हो ।।टेक।।
ज्ञान अधार विवेक की बाती, सुरति ज्योति जहँ जाग। साहेब ।।१
आरति करूँ सतगुरु साहेब की, जहँ सब संत समाज। साहेब ।।२
दरश परश गुरु चरण शरण भयों, टूटि गये यम जाल। साहेब ।।३
साहेब कबीर संतन की कृपा से, भयो परख परकाश। साहेब ।।४
दोहा- बन्दौं सनमुख पारखी, शीश भेंट धरि हाथ।
वचन उचारौं बन्दगी, सत्य प्रेम के साथ ।।

श्री विश्वेश्वर प्रेस, वाराणसी में मुद्रित।
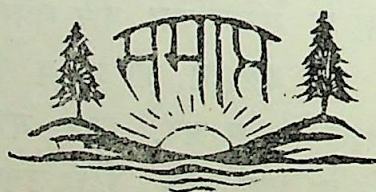
कबीरपंथी प्रसिद्ध विद्वानों द्वारा प्रमाणित और प्रशंसित

महात्मा कबीर साहेब के ग्रन्थ

बीजक मूल टीका सहित (राघव साहेब कृत)	—
बीजक मूल गुटका साइज ,, ,, ,,	—
बीजक सटीक (हरी साहेब कृत) हिन्दी टीका	१२·००

साखी ग्रन्थ टीका सहित	१०·००
कबीर वचनामृत	—
कबीर भजन रत्नावली	१·००
कबीर साहेब जी के शब्द	·५०
गुरुमहात्म्य ज्ञान ५२ जंजीरा	·८७
वैराग्य अमृत जीवन	७·००
कबीर पारख बूटी, गुरु चेला-संवाद की चटनी, मुक्तावलीगारी, बोधबयालिस-१ जिल्द में	८·००
व्याख्या सत्यासत्य निर्णय	७·२०
गुरु चेला सम्बाद	६·७०
निर्पक्ष रत्नाकर सजिल्द	५·००
भवयान सटीक	२४·००
भवयान मूल	४·००
मुक्तिद्वार सटीक	१६·००
मुक्तिद्वार मूल	४·००
सत्यनिष्ठा सटीक	६·००
सत्यनिष्ठा मूल	१·४०
मुमुक्षुस्थिति शिक्षाप्रवाह	१०·००
विशालवचनामृत गुटका	४·००
सत्यबोधामृत	५·००
विशालविभूति	१२·००
अपनी जागृति सजिल्द	६·७०
अपनी जागृति अजिल्द	५·४०
विश्व बोध	२·४०

सृष्टि पर दृष्टि	२·४०
शब्दशिरोमणि	१·००
बाल सुधार शिक्षा	·२७
भजन नौरत्न	·२०
निर्पक्ष रत्नाकर अजिल्द	३·६०
कबीर पारख बूटी	२·४०
गुरुचेला सम्बादकी चटनी	१·४०
मुक्तावली गारी	१·४०
बोध बयालिस	१·४०
सत्य ज्ञान प्रकाश व ज्ञान मार्तण्ड	५·००
श्री विशाल सरोज-भजन माला	३·००
गुरुपद विनोद	३·००
शिक्षावली	३·००
आदर्श निर्णय	२·००
नव नियम	१·४०
प्रकाश भजनावली	१·००
अपना बोध	·५४
गुरु महिमा रहस्य	·४०
सद्गुण शतक	·४०
पारख भजनमाला और बाल युवक मानवता प्रकाश व सीख बतीसी सजिल्द	४·४०
कबीर महिला उद्धार	५·००